विज्ञान भैरव तंत्र

स्वामी शैलेंद्र सरस्वती

श्री रजनीश ध्यान मंदिर

कुमाशपुर–दीपालपुर रोड

जिलाः सोनीपत, हरियाणा 131021

contact@oshofragrance.org

www.oshofragrance.org

  rajneeshfragrance

+91 7988229565
+91 7988969660
+91 7015800931

विज्ञान भैरव तंत्र

एक परिचय

दुनिया में सहस्त्रों धर्मग्रंथ हैं, लेकिन 'विज्ञान भैरव तंत्र' अद्वितीय है क्योंकि इसमें गुरु अपनी शिष्या से बात कर रहे हैं। विज्ञान भैरव तंत्र एकमात्र ऐसा शास्त्र है जिसमें सवाल पूछा है शिष्या ने, ना केवल शिष्या ने, बल्कि प्रेमिका ने। देवी पार्वती शिव की प्रेयसी हैं। एक प्रेयसी को दिया गया उत्तर है यह 'विज्ञान भैरव तंत्र'। क्योंकि कोई अन्य शास्त्र स्त्रियों के लिए नहीं हैं, विज्ञान भैरव तंत्र एक स्त्री के लिए दिया गया उपदेश है और स्त्रियां जीती हैं हृदय के तल पर, भाव के तल पर, प्रेम के तल पर। पार्वती ने कोई दार्शनिक सवाल नहीं पूछा है। बड़ा व्यक्तिगत सवाल पूछा है कि हे प्रभु! आप कौन हैं, आपका सत्य क्या है, यह रहस्य मुझे बताने की कृपा करें।

ओशो कहते हैं– अगर दुनिया के सारे शास्त्र नष्ट हो जाएं और केवल 'विज्ञान भैरव तंत्र' बच जाए तो भी धर्म का पूरा सारसूत्र बच जाएगा। इन चार–पांच पृष्ठों में वह सब समाया हुआ है, जो आज तक मनुष्य जाति ने भीतर के रहस्यों में डूबने के लिए खोजा है। अंतस के रहस्यों को जानने की विधियां इस शास्त्र में छिपी हैं। शिव की ये विधियां केवल उनके लिए हैं जो कुछ करने को तैयार हैं।

यह लघु–पुस्तिका बड़ी अद्भुत है। यह शुरू होती है देवी पार्वती के प्रश्नों से; जो बड़े प्रेमभाव से, आश्चर्य भाव से पूछे गए हैं। जैसे छोटा बच्चा पूछता है, प्रश्न पर प्रश्न पूछता ही चला जाता, ठीक ऐसे ही देवी पार्वती भगवान शिव की गोद में लेटी हुई हैं और उनसे पूछती हैं– 'हे प्रभु! आपका सत्य क्या है? आप कौन हैं? यह विस्मय भरा विश्व क्या है? इसका बीज क्या है? विश्वचक्र की धुरी क्या है? रूपों पर छाए किंतु रूपों के परे यह जीवन क्या है? परिवर्तनशील जगत की अचल कील क्या है? देश, काल, नाम व प्रत्यय के परे जाकर हम कैसे इसमें पूर्णतः प्रवेश करें? मेरे संशय निर्मूल करें।'

बड़े महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं। व्यक्तिगत सवाल से समष्टिगत प्रश्न में छलांग है। जो भी महत्वपूर्ण बात पूछी जा सकती है, पार्वती ने पूछ ली। बड़े अचरज से शुरुआत होती है, 'आप कौन हैं? आपका सत्य क्या है?' यह कोई गंभीर दार्शनिक सिद्धांतों की चर्चा नहीं है। एक व्यक्तिगत सवाल से बात आरंभ होती है और अंत में सारे ब्रह्माण्ड के बारे में, पूरे जीवन के रहस्य के बारे में फैल जाती है। व्यक्ति से शुरुआत है, समष्टि पर समापन है। अर्थात् जितने

भी प्रश्न संभव हो सकते हैं, मनुष्य के मन में उठ सकते हैं, वे सब देवी के प्रश्नों में समाहित हैं।

और बड़ी अनूठी बात... भगवान शिव जो उत्तर देते हैं, उन्हें सुनकर ऐसा लगेगा कि इन प्रश्नों से उन्हें कुछ लेना-देना ही नहीं। शिव सीधी विधि की बात शुरू कर देते हैं, वही तंत्र का अर्थ है। इसलिए इस किताब का नाम 'विज्ञान भैरव तंत्र' है। तंत्र यानी विधि, मेथड, टेक्नीक। वे सीधा विधि की चर्चा करते हैं कि यह विधि करो, यह विधि करो; 112 विधियों की चर्चा करते हैं। ओशो कहते हैं कि ध्यान में जितनी विधियां संभव हो सकती हैं वे सारी की सारी इन 112 विधियों में आ गईं। यह ग्रंथ अपने आप में संपूर्ण है। इसके बाहर कोई अन्य विधि बचती ही नहीं। शेष जितनी भी विधियाँ बाद में खोजी गईं, वे सब इन्हीं विधियों के अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स, संयोग हैं। इसलिए न केवल हिन्दुओं के धर्मग्रंथों में, बल्कि सारी दुनिया के सारे ग्रंथों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है- 'विज्ञान भैरव तंत्र'। इसमें अध्यात्म की सारी मेथडोलॉजी और टेक्नोलॉजी समा गई है, जिससे अंतर्मन के रहस्य, आत्मा के राज खुल जाते हैं। इसीलिए परमगुरु ओशो ने अंग्रेजी में 80 व्याख्यानों की जो प्रवचनमाला दी उसका शीर्षक रखा- 'दि बुक ऑफ दि सीक्रेट्स'।

ओशो फ्रैगरैंस एक आध्यात्मिक प्रयोगशाला है जिसके समाधि कार्यक्रमों में 'विज्ञान भैरव तंत्र' की इन सारी विधियों का प्रयोग किया जाता है और सैकड़ों साधक लाभान्वित हो रहे हैं तथा आत्मरूपांतरण घटित हो रहा है। हिन्दी भाषियों के लिए, ओशो शैलेन्द्र जी ने आस्था टी.वी. चैनल पर 115 एपिसोड में इस गूढ़ ग्रंथ पर प्रकाश डालकर, बोधगम्य व सुगम बनाया। इस संकलन को तीन खंडों में प्रकाशित किया जा रहा है। आपके हाथों में प्रथम खंड है, जिसे पढ़कर अगर थोड़ी सी प्यास जगे तो इन विधियों के प्रयोग हेतु आपको निमंत्रण है!

-मा ओशो प्रांजलि

अनुक्रमांक

विज्ञान भैरव तंत्र की 112 विधियां

भाग – 1

में प्रथम 38 विधियां

ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय;
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय।
बोले शंकर– सुनो भवानी, तंत्रयोग विज्ञान;
राम नाम का भेद, समाधि, सहजयोग का ज्ञान।।
कलियुग में ओशो फिर से इन सूत्रों को समझाएंगे।
ओशोधारा में फिर प्यासे इस अमृत को पाएंगे।।
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय;
ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय।

नोट– विधि 48–49–50 की जगह प्रश्नोत्तर हैं।

दो श्वासों के बीच में –1

शिव कहते हैं, हे देवी! यह अनुभव दो श्वासों के बीच घटित हो सकता है। श्वास के भीतर आने के पश्चात् और बाहर लौटने के ठीक पूर्व–श्रेयस है, कल्याण है।

ओम् नमः शिवाय। ओशो शरणम् गच्छामि।

प्यारे मित्रों! आज से हम एक अद्भुत सफर की शुरुआत कर रहे हैं। समझो, कैलाश की तीर्थयात्रा पर जा रहे हैं। हिन्दुओं के पास बहुत से धर्मग्रंथ हैं– महाभारत, रामायण, भागवतगीता, पुराण, चार वेद, बहुत सारे उपनिषद् लेकिन अगर आप मुझसे पूछें कि इन सब में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ कौन सा है, मैं कहूँगा इन सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है 'विज्ञान भैरव तंत्र'। संभवतः अधिकांश हिन्दुओं ने इस ग्रंथ का नाम भी न सुना होगा। बहुत छोटी सी पुस्तिका है, चार–पांच पेज में सारे सूत्र आ जाते हैं। भगवान शिव और देवी पार्वती के बीच घटित अनूठा संवाद है यह। ओशो कहते हैं– अगर दुनिया के सारे शास्त्र नष्ट हो जाएं और केवल 'विज्ञान भैरव तंत्र' बच जाए तो भी धर्म का पूरा सारसूत्र बच

जाएगा। इन चार–पांच पृष्ठों में वह सब समाया हुआ है, जो आज तक मनुष्य जाति ने भीतर के रहस्यों में डूबने के लिए खोजा है। अंतस के रहस्यों को जानने की विधियां इस शास्त्र में छिपी हैं।

सबसे पहले 'विज्ञान भैरव तंत्र' का शाब्दिक अर्थ समझ लें। विज्ञान का सामान्यतः हम अर्थ करते हैं साइंस की भांति लेकिन संस्कृत में इसका अर्थ साइंस नहीं है। ज्ञान के साथ 'वि' प्रत्यय जोड़ने पर विज्ञान से तात्पर्य हो जाता है– विशिष्ट ज्ञान, विशेष ज्ञान। हमारा सामान्य ज्ञान हमेशा बाहर के ऑब्जेक्ट्स के बारे में है, सांसारिक विषयों के बारे में है। फिर विशिष्ट ज्ञान क्या होगा? विशिष्ट ज्ञान है स्वयं के बारे में– सब्जेक्टिव नोइंग। ज्ञेय को नहीं, ज्ञाता को जानना है; दृश्य को नहीं, द्रष्टा को पहचानना है। ज्ञाता का ज्ञान है विज्ञान! और भैरव शब्द का भावार्थ भी बड़ा प्यारा है– अमनी अवस्था को उपलब्ध व्यक्ति। भगवान शिव के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। भैरव शब्द का अर्थ है, जो मन के पार, विचारों के ऊपर उठ गया– द्वंद्वातीत दशा में पहुंच गया। मन हमेशा अतियों में डोलता है; कभी बाएं कभी दाएं, पेण्डुलम की भांति। इनके मध्य में है भैरव, यानी समस्त द्वैतों के पार। एक उदाहरण से समझें, त्रिकोण की कल्पना करें, नीचे के दो आधार कोण मन के द्वन्द्व हैं और जो द्रष्टा चैतन्य है, दोनों कोणों के पार, वह शीर्ष कोण है इस त्रिकोण का।

भगवान शिव का निवास स्थान कैलाश पर्वत को कहा जाता है। ओशो के अनुसार, चेतना की सर्वोपरि चोटी पर आवास प्रतीकात्मक है– प्रेम की पावन तीर्थयात्रा एक बात है, स्थायी निवास दूसरी बात है। पहुंच तो बहुत जाते हैं, चेतना की ऊंचाई को छू आते हैं मगर कोई विरला ही शिखर पर सदा जीता है। अधिकांश मानव तो अंधेरी घाटी में जीते और मरते हैं। ध्यान–समाधि में डूबना एक बात है लेकिन वहीं जड़ें जमा लेना बिल्कुल दूसरी बात है। शिव कैलाश पर ही रहते हैं, यानी वे समाधि के उच्चतम द्वन्द्वातीत शिखर पर रहते हैं। भैरव अर्थात अमनी दशा 'स्टेट ऑफ नो–माइंड' में रहने वाला व्यक्ति जो समस्त द्वन्द्वों के पार हो गया।

यह लघु–पुस्तिका बड़ी अद्भुत है। यह शुरू होती है पार्वती देवी के प्रश्न से; और ये प्रश्न भी बड़े प्रेम से, आश्चर्य भाव से पूछे गए हैं। जैसे छोटा बच्चा पूछता है, प्रश्न पर प्रश्न पूछता ही चला जाता, ठीक ऐसे ही देवी पार्वती भगवान शिव की गोद में लेटी हुई हैं और उनसे पूछती हैं– 'हे प्रभु शिव! आपका सत्य क्या है? आप कौन हैं? यह विस्मय भरा विश्व क्या है? इसका बीज क्या है? विश्वचक्र की धुरी क्या है? रूपों पर छाए किंतु रूपों के परे यह जीवन क्या है? परिवर्तनशील जगत की अचल कील क्या है? देश, काल, नाम व प्रत्यय के परे जाकर हम कैसे इसमें पूर्णतः प्रवेश करें? मेरे संशय निर्मूल करें।'

बड़े महत्त्वपूर्ण प्रश्न हैं। व्यक्तिगत सवाल से समष्टिगत प्रश्न में छलांग है। जो भी महत्त्वपूर्ण बात पूछी जा सकती है, पार्वती ने पूछ ली। बड़े अचरज से शुरुआत होती है, 'आप कौन हैं? आपका सत्य क्या है? ' आश्चर्यभाव बच्चों में और गहन प्रेम के क्षणों में घटित होता है। प्रेम में व्यक्ति पुनः शिशुवत हो जाता है। यह कोई दार्शनिक गंभीर सिद्धांतों की चर्चा नहीं है। एक व्यक्तिगत सवाल से बात आरंभ होती है और अंत में सारे ब्रह्माण्ड के बारे में, पूरे जीवन के रहस्य के बारे में फैल जाती है। व्यक्ति से शुरुआत है, समष्टि पर समापन है। अर्थात् जितने भी प्रश्न संभव हो सकते हैं, मनुष्य के मन में उठ सकते हैं, वे सब देवी के प्रश्नों में समा गए। और बड़ी अद्भुत बात... भगवान शिव जो उत्तर देते हैं, उन्हें सुनकर ऐसे लगेगा कि इन प्रश्नों से उन्हें कुछ लेना-देना ही नहीं। शिव सीधी विधि की बात शुरू कर देते हैं, वही तंत्र का अर्थ है। इसलिए इस किताब का नाम 'विज्ञान भैरव तंत्र' है। तंत्र यानि विधि, मेथड, टेक्नीक। वे नहीं बताते कि मैं कौन हूँ। वे कुछ भी नहीं कहते कि इस परिवर्तनशील जगत की कील और धुरी क्या है। वे सीधी विधि की चर्चा करते हैं कि यह विधि करो, यह विधि करो; 112 विधियों की चर्चा करते हैं।

ओशो कहते हैं कि ध्यान में जितनी विधियां संभव हो सकती हैं वे सारी की सारी इन 112 विधियों में आ गईं। यह ग्रंथ अपने आप में संपूर्ण है। इसके बाहर कोई अन्य विधि बचती ही नहीं। शेष जितनी भी विधियाँ बाद में खोजी गईं, वे सब इन्हीं विधियों कि अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स, संयोग हैं। इसलिए मैं कह रहा हूं, न केवल हिन्दुओं के धर्मग्रंथों में, बल्कि सारी दुनिया के सारे ग्रंथों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है- 'विज्ञान भैरव तंत्र'। इसमें अध्यात्म की सारी मेथडोलॉजी और टेक्नोलॉजी समा गई है, जिससे अंतर्मन के रहस्य, आत्मा के राज खुल जाते हैं। यूं सरसरी नजर से देखोगे इस किताब को तो शायद समझ भी न पाओगे कि इतने गूढ़ महत्व की बात है! ओशो ने बड़ी कृपा की, उन्होंने तंत्र के गूढ़ रहस्यों को सीधी-सरल भाषा में हमें समझाया। उन्होंने बड़े प्यारे 80 प्रवचनों में विज्ञान भैरव तंत्र की विधियों को उजागर किया। 'दि बुक ऑफ दि सीक्रेट्स' नामक इस अंग्रेजी प्रवचनमाला में न केवल विधि को विस्तार से समझाया, वरन साधकों के सवालों के जवाब दिए एवं आसानी से प्रयोग करने हेतु महत्त्वपूर्ण 'टिप्स' भी दिए।

देवी द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर ऐसे नहीं हैं जो शब्दों से दिए जा सकें। इन प्रश्नों के उत्तर हमें अपने भीतर स्वयं मिलते हैं, जब विधि से हम गुजरते हैं। शिव मंजिल के बारे में कुछ नहीं कहते, मार्ग के बारे में दिशा-निर्देश करते हैं। रास्ता बताते हैं कि यह रहा रास्ता। चलो, मंजिल पर पहुंचो, और स्वयं मंजिल को जानो; इसलिए विज्ञान भैरव तंत्र कोई दार्शनिक ग्रंथ नहीं है। इसमें कोई वाद-विवाद नहीं है, कोई तर्क नहीं है। देवी ने सवाल पूछे, जीवन के रहस्य

को जानने के लिए; और शिव शुरू कर देते हैं विधियों के वर्णन से। प्रथम नौ विधियां श्वास से संबंधित हैं। हम क्रमशः प्रतिदिन एक–एक विधि को समझकर माँ ओशो प्रिया के निर्देशन में उसका प्रयोग भी करते चलेंगे।

प्रथम विधि पर प्रकाश डालते हुए परमगुरु ओशो ने इस प्रकार समझाया– शिव कहते हैं, हे देवी! यह अनुभव दो श्वासों के बीच घटित हो सकता है। श्वास के भीतर आने के पश्चात् और बाहर लौटने के ठीक पूर्व–श्रेयस है, कल्याण है। दो श्वासों के बीच आत्म–अनुभव घटित हो सकता है। जब श्वास भीतर अथवा नीचे की ओर आती है, उसके बाद फिर श्वास बाहर लौटने के ठीक पूर्व; इन दो बिंदुओं के बीच में वह घटना घट सकती है। जब तुम्हारी श्वास भीतर आए तो उसका निरीक्षण करो। उसके बाद फिर बाहर या ऊपर मुड़ने के पहले एक क्षण के लिए; या एक क्षण के भी हजारवें भाग के लिए श्वास बंद हो जाती है। श्वास भीतर आती है और वह एक बिंदु है जहां वह ठहर जाती है, फिर श्वास बाहर जाती है। जब श्वास बाहर जाती है तो फिर वह एक क्षण या क्षणांश के लिए ठहर जाती है और तब वह भीतर मुड़ती है। भीतर आने वाली श्वास जीवन का प्रतीक है। हर नई श्वास एक पुनर्जन्म है और हरेक बाहर जाने वाली श्वास मृत्यु की प्रतीक है। इन दोनों के बीच में तुम जीवन–मरण के पार हो, आवागमन से मुक्त हो।

शिव कहते हैं पार्वती से, हे देवी! उन बिंदुओं को पकड़ो, जहां श्वास भीतर गई, मुड़ने के ठीक पहले या फिर श्वास बाहर आई और भीतर जाने के ठीक पूर्व; वह क्षण बहुत छोटा सा है। एक मिली–सेकण्ड से भी कम होगा। निश्चित रूप से उसके प्रति जागरूक होने के लिए खूब सजगता साधनी होगी। स्वयं गौतम बुद्ध इसी विधि के द्वारा निर्वाण को प्राप्त हुए थे। धीरे–धीरे यह विधि 'अनापानसतीयोग' के नाम से प्रचलित हो गई। बुद्ध ने इसमें थोड़ा सा परिवर्तन कर दिया। उन्होंने सिर्फ आती–जाती श्वास को देखा, उस मुड़ने वाले बिन्दु की बात छोड़ दी, क्योंकि अगर यह कहा जाए कि श्वास लौटने के ठीक पूर्व वाले बिन्दु को पकड़ो तो मन में एक लक्ष्य निर्मित हो जाता है। लक्ष्य तनाव पैदा करता है, शिथिल नहीं होने देता, अतः बुद्ध ने इसको और सरल कर दिया। उन्होंने कहा कि आती–जाती श्वास को देखो। किसी खास बिंदु की चर्चा नहीं की; कालान्तर में यह विधि अनापानसतीयोग के नाम से विश्व विख्यात हुई। और चूंकि गौतम बुद्ध ने इस पर बड़ा जोर दिया, धीरे–धीरे इसको एक बौद्ध विधि के रूप में जाना जाने लगा। और इसीलिए भारत के ब्राह्मण वर्ग ने इस विधि को छोड़ ही दिया। भारत को छोड़कर सारे एशिया के मुल्कों ने इस विधि का खूब लाभ उठाया।

ओशो कहते हैं कि अनापानसतीयोग के द्वारा अर्थात् भगवान शिव के द्वारा दी गई प्रथम विधि के द्वारा जो कि सुगमतम है, आज तक जितने लोग परमज्ञान को उपलब्ध हुए हैं,

उतने किसी अन्य विधि से उपलब्ध नहीं हुए। तो आओ इस विधि का प्रयोग हम करते हैं। माँ ओशो प्रिया इस विधि हेतु आपको निर्देश देंगी। निर्देशानुसार करें और देखें कैसे अद्भुत रहस्यों का खजाना भीतर खुलने लगता है।

माँ ओशो प्रिया– अभी आपने तंत्र की प्रथम व सरलतम विधि समझी, अब उसका प्रयोग करेंगे। श्वास ठहरने की दशा में हम क्षणिक रूप से संसार में नहीं होते। लेकिन समय इतना छोटा रहता है कि सामान्यतः उसे देख नहीं पाते। प्रत्येक भीतर आती सांस पुनर्जन्म जैसी, बाहर जाती सांस मृत्युवत है। पहले आती–जाती सांस के निरीक्षक बनो, तब अंतराल को देखने में भी सफलता प्राप्त करना संभव है। आरंभ के सात चरणों में भूमिका निर्मित हो जाएगी, तब सातवें चरण में ध्यान का अनुभव घट जाएगा। आएं, शुरुआत करते हैं–

1. सभी मित्र ओशो मंदिर की दीवार तक फैलकर, हाथ पकड़कर गोल घेरे में खड़े हो जाएं।
2. अब हाथ छोड़ दें। सब लोग दाहिने मुड़ें। घेरे में सामान्य गति से चलना आरंभ करें। स्टार्ट।
3. आती–जाती सांस के प्रति होश साधें। श्वास के भीतर आने के पश्चात् और बाहर लौटने के ठीक पहले कल्याण है।
4. स्टॉप। अंदर सांस लेकर रोक लें। 5 सेकंड बाद होशपूर्वक सांस के लौटने के बिंदु को देखें। यह अनुभव दो श्वासों के बीच घटित हो सकता है।
5. स्टार्ट। चलना शुरू करें। सांस बाहर गई। सांस भीतर आई। जिस क्षण सांस बाहर जाती है, उस प्वाइंट को गौर से देखें। स्टॉप।
6. हम स्टार्ट–स्टॉप के दस राउन्ड करेंगे। अंतर्कुम्भक के प्रति होश रखेंगे। आती–जाती सांस के प्रति होश से भरकर चलना है।
7. अब बैठ जाएं– विश्रामपूर्वक। विज्ञान भैरव तंत्र की प्रथम विधि को स्वयंमेव होने दें। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– हे देवी, यह अनुभव दो श्वासों के बीच घटित हो सकता है। सहज रूप से श्वास को चलने दें, आती–जाती श्वासों को देखें।

आती–जाती श्वासों के प्रति होश से भरें। श्वास भीतर आती है और फिर बाहर की ओर जाती है। जिस बिंदु पर मुड़ती है, उस बिंदु पर सचेत हो जाएं। बारंबार श्वास का भीतर होना, क्षण भर के लिए ठहरना और फिर अचानक इस मुड़ती हुई श्वास के प्रति सावधान हो जाएं। गौर से देखें, किंतु पूर्ण विश्राम में! निष्प्रयत्न विश्राम और पूर्ण होश। श्वास के भीतर आने के पश्चात् और बाहर लौटने के ठीक पूर्व– श्रेयस है, कल्याण है।

सातवें चरण को जितनी देर करना चाहें, सुविधानुसार कर सकते हैं। कभी भी, जब स्मरण आ जाए, कर सकते हैं। आज का ध्यान–प्रयोग यहीं पूरा होता है।

धन्यवाद! ओम नमः शिवाय।

श्वास के दो मोड़ों पर–2

जब श्वास नीचे से ऊपर की ओर मुड़ती है और फिर जब श्वास नीचे से ऊपर की ओर मुड़ती है– इन दो मोड़ों के द्वारा उपलब्ध हो।

ओशो शैलेन्द्र– श्वास के संबंध में कुछ मौलिक बातें समझ लें, क्योंकि 'विज्ञान भैरव तंत्र' की प्रथम नौ विधियां श्वास से ही संबंधित हैं। सबसे पहली और महत्त्वपूर्ण बात, श्वास प्रक्रिया जन्म से लेकर मृत्यु तक निरंतर चलती है। जीवन में और सब चीजें आती–जाती हैं, प्रेम जन्मता और समाप्त हो जाता है, घृणा पैदा होती खत्म हो जाती, क्रोध आता गुजर जाता, बचपन आता बीत जाता, जवानी आती, बुढ़ापा आ जाता, स्वास्थ्य आता, बीमारी आती, सब चीजें गत्यात्मक, परिवर्तनशील हैं। किन्तु बस एक श्वास चलती ही रहती है, चाहे बचपन हो कि जवानी, स्वास्थ्य हो अथवा बीमारी, प्रेम हो या घृणा; इसलिए श्वास जीवन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्वों में से एक है, अपरिवर्तनशील है।

दूसरी बात, श्वास के संबंध में तुम्हारे कर्तापन की जरूरत नहीं। श्वास लेने वाले तुम नहीं हो, श्वास स्वयं, अपने आप चल रही है। यहां तक कि जब गहरी नींद में सोए हैं तब भी

हमारी श्वास चलती रहती है वरना अगर हमारे हाथ में होता श्वास लेना तो बीच-बीच में हम भूल ही जाते! मैंने सुना है एक मजाक- नसरुद्दीन का बेटा फजलू तीन दिन तक स्कूल नहीं आया। चौथे दिन जब आया तो शिक्षक ने पूछा- तुम तीन दिन से कहां गायब थे? उसने कहा- मेरे दादाजी की मृत्यु हो गई। शिक्षक ने कहा- बड़े अफसोस की बात है! मुझे मालूम नहीं था। उनकी मृत्यु कैसे हुई? क्या बीमारी थी? फजलू बोला- यह तो नहीं पता कि क्या बीमारी थी, लेकिन बुढ़ापे में उनकी स्मृति कम हो गई थी, बहुत भुलक्कड़ हो गए थे; ऐसा अनुमान है कि शायद रात गहरी नींद में सांस लेना भूल गए!

स्वप्न और सुषुप्ति में भी हम सांस लेना नहीं भूलते, चाहे कितने ही बड़े भुलक्कड़ हों! श्वास के लिए हमारे कर्तापन की कोई जरूरत नहीं और इसलिए जब हम श्वास पर ध्यान देंगे तो हम कर्ताभाव यानी अहंकार से मुक्त हो जाएंगे।

तीसरी बात- श्वास जीवन की पर्यायवाची है। श्वास है तो जीवन है, जीवन है तो श्वास है। न केवल मनुष्यों में, कीट-पतंगों में भी, पशु, पक्षियों, मछलियों, वृक्षों में भी, जीवन के सब रूपों में, श्वास पर ही जीवन आधारित है। हां, फर्क हो सकता है। मनुष्य और दूसरे प्राणी ऑक्सीजन लेते हैं, कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ते हैं।

श्वास के बारे में चौथी महत्त्वपूर्ण बात- श्वास के द्वारा हम इस जगत से जुड़े हुए हैं। वनस्पतियां कार्बन डाइऑक्साइड लेती हैं, ऑक्सीजन छोड़ती हैं। और इस प्रकार से सारा जगत परस्पर आदान-प्रदान कर रहा है। श्वास के माध्यम से हम सब एक-दूसरे से संयुक्त हैं। अगर ये वृक्ष न होंगे तो हम भी नहीं हो सकते। अगर हम न होंगे तो ये वृक्ष भी न हो सकेंगे। हम अंतर-संबंधित है, इंटरडिपेंडेंट हैं। हमारी देह पूरे अस्तित्व से जुड़ी हुई है, श्वास के माध्यम से। हमारा होना श्वास पर ही निर्भर है।

पांचवीं बात- एक और गहन मिलन और जोड़ है जिसका हमें पता नहीं, वह है हमारी आत्मा का परमात्मा से जोड़। वहां भी श्वास का एक सूक्ष्म तत्व काम करता है। हमारे भीतर जो जागरूकता है, चैतन्यता है, वह परमात्मा से हमें प्राप्त हो रही है- प्राण तत्व के द्वारा। अक्सर श्वास को और प्राण को पर्यायवाची माना जाता है लेकिन दोनों में थोड़ा सा भेद है। श्वास है स्थूल- हवा जो नाक से भीतर गई फेफड़ों में और बाहर आई। प्राण तत्व है सूक्ष्म- भीतर से, इस जगत की चेतना से हमारी व्यक्तिगत चेतना तक आ-जा रहा; वहां भी एक प्रवाह हो रहा है। दो समानान्तर प्रक्रियाएं एक साथ श्वास में घट रही हैं। श्वास का स्थूल रूप तो हम सबको मालूम है, इसका सूक्ष्म रूप सामान्यतः हमें ज्ञात नहीं।

छठवीं बात, तंत्र-विधियों में श्वास के अलग-अलग बिंदुओं पर सजग होने के लिए कहा जाएगा, उनके भिन्न-भिन्न परिणाम हैं। विधियां करके देखना और जो विधि तुम्हें जम

जाए, जो ज्यादा रुचिकर व शांतिदायी लगे, वही विधि तुम्हारे लिए सबसे उपयोगी होगी। विधियों में चुनाव करने का एक ही उपाय है, प्रयोग करके देखो। तीन दिन तक एक ही विधि करो। तीन दिन में ख्याल में आ जाएगा। अगर तुम्हारे भीतर कुछ रूपान्तरित होने लगा, तुम्हें कुछ नयापन, कुछ नया जन्मता भीतर महसूस होने लगा, तो उस विधि को जारी रखना। तब कम से कम तीन माह उस पर गहन रूप से प्रयोग करना।

हां, एक बात का निवेदन करूंगा, जो भी विधि करो उसे पूर्णता से करना, आधे–अधूरे मन से नहीं। बहुत लोग ध्यान की प्रक्रिया करते हैं, किन्तु आधे–अधूरे भाव से; तब कोई भी विधि कारगर नहीं हो पाती। विधि से अधिक महत्त्वपूर्ण है साधक की समग्रता। मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन ने नौकरी के लिए कहीं आवेदन किया। मालिक ने पूछा– पहले तुमने कहां काम किया है? नसरुद्दीन ने बताया, फलां–फलां कंपनी में। मालिक ने कहा, कितने साल काम किया है? नसरुद्दीन बोला– दो साल तक। मालिक ने तुरंत फोन करके उस कंपनी के मैनेजर से पूछा कि क्या नसरुद्दीन नाम के आदमी ने आपके यहां नौकरी की है? उत्तर मिला, हां। मालिक ने पूछा, आपके यहां मुल्ला ने कितने समय तक काम किया? मैनेजर ने कहा– सिर्फ 15 दिन। मालिक ने आश्चर्य व्यक्त किया– आप कह रहे हैं 15 दिन और मुल्ला कह रहा है दो साल नौकरी की! मैनेजर ने जवाब दिया– दोनों बातें ठीक हैं, वास्तव में दो साल उसने तनख्वाह ली है, किंतु बामुश्किल काम मात्र 15 दिन ही किया है।

साधना में ऐसे नहीं चलेगा, जब कोई विधि करो तो पूर्णता से, लगन से करना। ध्यान में समग्रता और टोटलिटी की जरूरत है, उसके बिना बात न बनेगी। जैसे सौ डिग्री पर पानी खौलता है, 99 पर भी नहीं; ठीक वैसे ही साधना में सौ प्रतिशत शक्ति दांव पर लगाने की क्षमता चाहिए। खंडित मन, अधूरापन बाधा है।

अब आज की विधि को समझ लें। ओशो कहते हैं– जब श्वास नीचे से ऊपर की ओर मुड़ती है और फिर श्वास ऊपर से नीचे की ओर मुड़ती है, इन दो मोड़ों के द्वारा उपलब्ध हो जाओ। थोड़े से फर्क के साथ यह पहली विधि के समान है, जोर अब अंतराल पर न होकर, मोड़ पर है। बाहर जाने वाली श्वास और अंदर आने वाली श्वास वर्तुल बनाती है। वे समानान्तर रेखाओं की तरह नहीं है। हम सदा सोचते हैं कि भीतर आने वाली और बाहर जाने वाली श्वास दो 'पैरेलल लाइन्स' समानांतर रेखाओं के समान हैं किन्तु ऐसा है नहीं। यह वर्तुल के तुल्य है और वर्तुल में दो मोड़ हैं, जो न्यूट्रल गियर के समान है। आप कार चलाते हैं, एक गियर से दूसरे गियर में जाने के लिए न्यूट्रल से गुजरना होता है। ठीक इसी प्रकार जब श्वास भीतर गई और बाहर मुड़ी या बाहर गई और भीतर को मुड़ी, तो वह न्यूट्रल गियर से गुज़रती है। श्वास हमारे तन–मन को जोड़ने वाली है, और देह–जगत को भी जोड़ने वाली है।

उस न्यूट्रल गियर के क्षण में हम तन–मन के पार होते हैं, और जगत के भी पार होते हैं। इसलिए मोड़ पर इतना जोर है। तो पहली विधि में अंतराल पर जोर था– मुड़ने के पूर्व, दूसरी विधि में मोड़ पर जोर है। ये छोटे–छोटे बिंदु हैं लेकिन इनका निरीक्षण करना बहुत कठिन है। चांद पर पहुंच जाना सरल है, एवरेस्ट पर चढ़ जाना आसान है, मंगल ग्रह की यात्रा सुगम है, अपने ही सांस के उस छोटे से गैप को, अंतराल को या मोड़ को देखना ज्यादा दूभर है। लेकिन अगर लगनपूर्वक प्रयोग करोगे तो निश्चितरूप से सफलता मिलेगी। हजारों लोगों ने श्वास की विधि के द्वारा परम ज्ञान को प्राप्त किया है। इससे ज्यादा सहज तरकीब और कोई भी नहीं है।

संक्षेप में छः बातें पुनः दोहरा दूं–

1. श्वास प्रक्रिया जन्म से मृत्यु तक सतत है, शेष सब परिवर्तित होता रहता है।

2. नींद तक में श्वास जारी रहती है, इसमें हमारे कर्ताभाव की जरूरत नहीं है।

3. श्वास जीवन की पर्यायवाची, प्राण शक्ति है। सर्वाधिक आधारभूत है।

4. आत्मा व देह के बीच का सेतु, शरीर व अशरीरी चेतना का जोड़ है श्वास– दो ध्रुवों का मिलनस्थल।

5. देह व जगत के बीच का सेतु भी श्वास ही है। संसार से परस्पर–निर्भरता का माध्यम है।

6. श्वास के विभिन्न बिंदुओं के प्रति सजगता साधने के अलग–अलग परिणाम हैं। दूरस्थ ग्रह–नक्षत्रों का निरीक्षण आसान है, किन्तु निकटतम सूक्ष्म श्वास बिंदुओं का अवलोकन दुष्कर है।

तो आओ, माँ ओशो प्रिया के संग श्वास की इस प्यारी विधि में हम डूबें।

माँ ओशो प्रिया––मेरे प्रिय आत्मन्, आज द्वितीय तांत्रिक विधि की शुरुआत करते हैं। पांच चरणों में इसे सम्पन्न करेंगे। आरंभ के चार चरणों में सहयोगी भूमिका बन जाएगी, अंततः अपने अंतर्तम में छलांग लग जाएगी।

अ. सांस लेते हुए थोड़ा सा पीछे और छोड़ते हुए थोड़ा सा आगे झुक जाएं। बारी–बारी से सांस लेंगे तो पीछे की ओर, सांस छोड़ेंगे तो आगे की ओर झुकें।

ब. अंदाज से करीब तीन–तीन सेकंड भीतर व बाहर सांस रोकें। जब सांस बाहर जाती है तो कुछ सेकण्ड के लिए बाहर छोड़े रखना और फिर सांस भीतर आती है तो कुछ सेकण्ड के लिए भीतर रोके रखना। धीमे–धीमे सांस लेना–छोड़ना। आती सांस के साथ पीछे झुकना, जाती सांस के साथ आगे

झुकना। बाहर कुछ देर सांस को रोके रखना, भीतर कुछ देर सांस को रोके रखना।

स. अब सीधे बैठकर आती–जाती सांस के संग हाथों को ऊपर–नीचे वर्तुलाकार घुमाएं। तीन–तीन सेकंड भीतर व बाहर सांस रोकना जारी रखें। आती सांसों के साथ हथेलियों को ऊपर की ओर, छूटती सांसों के साथ हथेलियों को नीचे की ओर ले जाएं।

द. सांस के मोड़ के प्रति विशेष रूप से होश साधें। भीतर आती हुई सांस– हथेलियां ऊपर। बाहर जाती हुई सांस– हथेलियां नीचे। इसे सजगतापूर्वक करते जाएं। सांस का भीतर आना, हथेलियों का ऊपर जाना; सांस का बाहर जाना हथेलियों का नीचे जाना। सांस के इस वर्तुल में मोड़ों के प्रति पूरा होश रखें।

आखिर में अब सीधे बैठ जाना है। झुकना बंद कर दें।

आती–जाती सांसों का पूरा ख्याल रखें। सांस भीतर आती है, उसे कुछ क्षणों के लिए भीतर रोकें। जब बाहर की ओर मुड़ती है, पूरे सजग हो जाएं। सांस बाहर चली गई, कुछ पलों के लिए रोकें बाहर, फिर सांस भीतर मुड़ती है, इस मोड़ के प्रति सावधानी, इस मोड़ के प्रति पूरी कॉन्शियसनेस।

इ. अब सांस रोकना भी छोड़ दें। सहज सांस चलने दें। केवल मोड़ के प्रति सजग रहें। और विश्रामपूर्वक विज्ञान भैरव तंत्र की द्वितीय विधि को घटित होने दें। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– जब श्वास नीचे से ऊपर की ओर मुड़ती है और फिर जब श्वास नीचे से ऊपर की ओर मुड़ती है– इन दो मोड़ों के द्वारा उपलब्ध होओ।

गौर से निरीक्षण करें, कैसे सांस भीतर से बाहर मुड़ती है और फिर बाहर से भीतर मुड़ती है। जब सांस भीतर मुड़ी उसका ख्याल, जब सांस बाहर मुड़ी उसका ख्याल। धीमी या लंबी सांस भी नहीं लेनी है। रोकने का प्रयास भी ना करें। कुछ भी ना करें। चुपचाप सांस के मोड़ों के प्रति जागरूक बने रहें, बस!

सांस भीतर मुड़ी– ख्याल। सांस बाहर मुड़ी– ख्याल।

आरंभ में पांच मिनिट हमने जो प्रयत्न किया था, वह केवल मोड़ को समझने के लिए

था। सूक्ष्म मोड़ पकड़ में आ गया, अब सारे प्रयास को भूल जाएं। निष्प्रयत्न सजगता, निष्क्रिय जागरूकता! कैसी अनूठी शांति अवतरित हो गई!!

इस विधि की अवधि सुविधानुसार छोटी–लंबी की जा सकती है। दिन में कभी भी इसे किया जा सकता है।

आज की विधि पूरी हुई, धन्यवाद। ओम् नमः शिवाय। ओशो शरणम् गच्छामि।

ऊर्जारहित एवं ऊर्जापूरित–3

जब कभी अंतःश्वास और बर्हिश्वास एक–दूसरे में विलीन होती हैं, उस क्षण में ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केन्द्र को स्पर्श करो।

ओशो शैलेन्द्र– मैंने सुना है एक नास्तिक के बारे में, उसने अपने दफ्तर में बोर्ड लगा रखा था– 'गॉड इज नोव्हेयर' अर्थात ईश्वर कहीं नहीं है। एक दिन नास्तिक का छोटा बेटा जो अभी प्राइमरी स्कूल में पढ़ता था, उसके दफ्तर में पहुंचा, उसकी नजर बोर्ड पर पड़ी। उसने बोर्ड को पढ़ा। छोटा बच्चा था, इतना बड़ा शब्द 'नोव्हेयर' नहीं पढ़ सकता था। उसने उसे दो टुकड़ों में तोड़कर पढ़ा– 'गाड इज नाऊ–हियर' यानी परमात्मा अभी और यहीं हैं। वह नास्तिक भी सुनकर चौंका।

'नोव्हेयर' और 'नाऊ–हियर' एक ही यथार्थ के दो पहलू हैं। ईश्वर सर्वव्यापी, सब जगह है और कहीं भी नहीं है। उसको कहीं 'पिन प्वाइंट' नहीं किया जा सकता कि कहां है, क्योंकि वह सर्वत्र है। जो 'अभी और यहीं' है, वह 'कभी और कहीं' नहीं हो सकता। और

इसीलिए परम सत्य की खोज में जो जाते हैं, वे लोग अक्सर अपनी खोज की वजह से ही चूक जाते हैं। तलाश ले जाती है दूर, खोज पैदा करती है कामना, भविष्य की आशा; जबकि आना है वर्तमान में। विज्ञान भैरव तंत्र की विधियों को समझते हुए इस बात का विशेष ख्याल रखना। पार्वती ने जो सवाल पूछा है, शिव उसका कोई दार्शनिक उत्तर नहीं देते। वे टेक्नीक बताते हैं कि वर्तमान में कैसे आ जाओ और चूंकि श्वास सदा वर्तमान में ही होती है, अतः श्वास की विधियां सरलतम हैं। इसी वजह से शिव ने सर्वप्रथम श्वास की विधियां समझाईं। अन्य सब चीजों के बारे में मन सोच सकता है, श्वास के बारे में सोचने की क्या जरूरत, श्वास अभी और यहीं मौजूद ही है। किसी फिलासफी की, सिद्धांत की जरूरत नहीं, चिंतन–मनन की आवश्यकता नहीं, बस अपनी श्वास को देखो और तुरंत वर्तमान में आ जाओ। सांसारिक ही नहीं, आध्यात्मिक तमन्नाओं को भी त्याग दो। दूर से दूर और पास से पास है प्रभु; सब हम पर निर्भर है। सुनो यह प्यारा गीत–

तुम ह्रदय के पास हो, है पास जितनी सांस ये,
दूर हो तुम दूर जितनी, चिर मिलन की आस है!
तुम मधुर हो मधुर जितनी, प्रीति की मृदु भावना,
किंतु कटु इतने कि जितनी, स्वार्थों की साधना!
तुम सरल हो सरल जितनी, शिशु–ह्रदय की भावना,
तुम कुटिल हो कुटिल जितनी, है कपट की कामना!
तुम विकल हो विकल जितनी, मृदु–मिलन की कामना,
शांत हो तुम शांत जितनी, है विरागी भावना!
तुम करुण हो करुण जितनी, विफल आंसू–धार है,
तुम निठुर हो निठुर जितना, मृत्यु का प्रहार है!
तुम ह्रदय के पास हो, है पास जितनी सांस ये,
दूर हो तुम दूर जितनी, चिर मिलन की आस है!

निकट–से–निकट है परमात्मा और दूर–से–दूर भी। अगर तुम खोज में गए, तो बहुत दूर है, कभी भी न पा सकोगे। काश! तुम सारी खोज छोड़ दो और वर्तमान के इस सुंदर क्षण में स्थित हो जाओ। फिर करीब से भी करीब है; तुम्हारी श्वासों से भी ज्यादा नजदीक है वह। संत शिरोमणि कबीरदास जी ने फरमाया है–

मोको कहां ढूंढ़े रे बंदे, मैं तो तेरे पास में;

कहै कबीर सुनो भाई साधो, दो सांसों की सांस में।

ठीक यही बात, विज्ञान भैरव तंत्र की इन विधियों पर लागू होती है। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं, हे देवी! जब कभी अंतःश्वास और बर्हिश्वास एक दूसरे में विलीन होती हैं, उस क्षण में भीतर के ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केंद्र को महसूस करो। वह केंद्र पेट में नाभि के पास है, जहां तक भीतर श्वास जाती और जहां से बाहर श्वास लौटना शुरू होती है। वहां दोनों एक–दूजे में विलीन होती हैं। शुरुआत की दो विधियों में मोड़ एवं अंतराल पर जोर था। तीसरी विधि में शिव कहते हैं, जहां भीतर जाने वाली श्वास बाहर आने वाली श्वास में लय हो गई, जहां दोनों मिलकर एक हो गए, संयुक्त हो गए; उस बिंदु को महसूस करो, उसकी स्थिति नाभि से करीब दो इंच नीचे है। जरा गौर से देखना, जब तुम धीमी गहरी श्वास लेते हो, कहां तक तुम्हारी श्वास जाती है? नाभिकेंद्र के लगभग दो इंच नीचे अपने ध्यान को केंद्रित करना। वहां दोनों श्वासें आपस में विलय होती हैं और एक अद्भुत घटना घटेगी, तुम एक उर्जा रहित और उर्जा पूरित केन्द्र को जानोगे।

सांस को माला बना लो, विधि बड़ी सरल है। तथाकथित धार्मिक लोग ईश्वर को पाने के लिए चंदन अथवा तुलसी की, लकड़ी की या मोती की मालाएं जपते हैं, बेचारे व्यर्थ की कवायद करते हैं। उसकी कोई जरूरत नहीं है। सबसे सरल है– अपनी सांसों की माला को फेरो। सूफी फकीर गाते हैं, आपने यह प्रसिद्ध सूफी कलाम सुना होगा–

सांसों की माला पे सिमरूं मैं पिय का नाम।

प्रेम की माला जपते–जपते राधा हो गई श्याम।।

उस प्रीतम को, परमात्मा को पाने के लिए बाहरी क्रियाकाण्ड की आवश्यकता नहीं। कबीर साहब ने कहा है– कर का मनका छोड़ दे, मन का मनका फेर। ये बाहर के मनके, ये बाहर की मालाएं काम न आएंगी। भीतर श्वास की माला निरंतर चल ही रही है। तुम उसके चलाने वाले भी नहीं हो, अपने आप चल रही है। खुद–ब–खुद, खुदा की मेहरबानी से चल रही है। एक श्वास गई, ऐसा समझो माला का एक गुरिया खिसका। तुम सजग हो जाओ, भीतर के उस नाभिकेंद्र के पास जहां दोनों श्वासें मिल रहीं।

इस ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केंद्र के विषय में भी थोड़ा समझना। ओशो ने तंत्रसूत्र के प्रथम भाग में इस प्रकार व्याख्या की है– शिव परस्पर विरोधी शब्दावली का प्रयोग करते हैं। ऊर्जारहित और ऊर्जापूरित एक साथ। वह ऊर्जारहित है, क्योंकि तुम्हारे शरीर, तुम्हारे मन उसे ऊर्जा नहीं दे सकते। तुम्हारे शरीर की ऊर्जा और मन की उर्जा वहां मौजूद नहीं होती, इसलिए जहां तक तुम्हारे तादात्म्य का संबंध है, उर्जारहित है। लेकिन वह स्वयं अपने आप में ऊर्जा पूरित है, क्योंकि उसे ऊर्जा का जागतिक स्रोत उपलब्ध है। तुम्हारी शरीर की ऊर्जा तो ईंधन जैसी है, पेट्रोल जैसी है। तुम कुछ खाते हो पीते हो, उससे शक्ति मिलती है,

खाना–पीना बंद कर दो तो शरीर काम–धाम नहीं कर पाएगा, मर जाएगा। हां, तुरंत नहीं, कम से कम दो–तीन महीने लगेंगे। तुम्हारे पास पेट्रोल का एक रिजर्वायर है, तुमने बहुत ऊर्जा जमा कर रखी है, उसे खत्म होते–होते दो–तीन महीने लगेंगे। शरीर धीरे–धीरे क्षीण होता जाएगा। उसके पास जमा ऊर्जा है, चर्बी के रूप में। किसी आपातकालीन स्थिति में उस 'फैट्स' का उपयोग हो सकता है। इसलिए शरीर की ऊर्जा भोजन से संचित ईंधन ऊर्जा है। प्राणों के केन्द्र की ऊर्जा किसी ईंधन से नहीं मिलती। यही कारण है कि शिव उसे ऊर्जारहित कहते हैं। यह तुम्हारे खाने–पीने पर, आहार पर निर्भर नहीं है। यह संपूर्ण जगत के स्रोत से, सारे अस्तित्व की शक्ति से जुड़ी है। इसलिए शिव उसे ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केन्द्र कहते हैं। जिस क्षण तुम उस केन्द्र को अनुभव करोगे जहां से श्वास आती–जाती है, जहां श्वास विलीन होती है, जहां अंतःश्वास और बर्हिश्वास आपस में मिलती हैं, उस क्षण तुम आत्मज्ञान को उपलब्ध हो जाओगे।

अद्भुत है यह विधि! ये छोटी–छोटी विधियां चमत्कारिक चाबियां हैं। चाबियां तो छोटी ही होती हैं, मगर विराट खजाने खोल सकती हैं। परमात्मा को पाने के लिए किसी कठिन तपस्या की जरूरत नहीं है, अपनी अंतरात्मा में उतरना है। 'परमात्मा' शब्द भी ठीक से समझना, सामान्यतः हम सोचते हैं कहीं आकाशीय स्वर्ग में, स्वर्ण–सिंहासन पर बैठा हुआ कोई व्यक्तिवाची ईश्वर है– दुनिया का स्रष्टा तथा संचालक। नहीं, परमात्मा शब्द का अर्थ बिल्कुल साफ–सुथरा है। परम और आत्मा दो शब्दों से मिलकर बना है परमात्मा; आत्मा का परम रूप, दि अल्टीमेट सेल्फ।

अपनी श्वास के सहारे उस परम–आत्मा में प्रवेश हो सकता है, बस विलय बिंदु पकड़ने की कोशिश करना। जापान के झेन संतों और चीन के ताओवादी संतों ने इसका खूब प्रयोग किया है। वे अपने साधकों से कहते हैं, नाभि–केन्द्रित बनो; और इसका एक आश्चर्यजनक परिणाम हुआ, जापान के लोग पृथ्वी के सर्वाधिक प्रसन्न लोग रहे। हां, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद स्थिति बदल गई है। अमेरिकी प्रभाव में अब वहां भी श्वास की साधना नहीं सिखाई जाती, वरना प्रत्येक बच्चे को बचपन से ही गहरी धीमी श्वास, पेट से लेना सिखाया जाता था। नाभि को वे 'हारा' या 'तान्देन' केन्द्र के नाम से पुकारते हैं।

आधुनिक शिक्षित जगत में हम सभी विकेन्द्रित हो गए हैं। एक प्रकार से अपरूटेड, जैसे किसी पौधे की जड़ें उखड़ गई हों। हमारी सभ्यता, संस्कृति, शिक्षा हमें मजबूर करती है कि हम गहरी श्वास न लें क्योंकि जो प्राकृतिक भावनाएं हैं, गहरी श्वास लेने से वे प्रज्वलित हो जाती हैं। जबकि सामाजिकता व नैतिकता कहती है, प्रकृति को दबाओ, दमन करो, सप्रेशन करो। इसलिए हर व्यक्ति उथली सांस लेने लगता है, वर्ना तुम अपने क्रोध का क्या

करोगे? अपनी वासना का क्या करोगे? ताओ और झेनवादी संत कहते हैं, गहरी श्वास लो, इसके माध्यम से प्राकृतिक गुणों के भी पार जाया जा सकता है। छोटे बच्चों को देखते हो– कैसी गहरी श्वास लेते हैं! अगर नहीं देखा तो कभी गौर से देखना। सोते हुए बच्चे को देखना, उसकी श्वास पेट से चलती है, सीने से नहीं। उनकी गहरी सांस का अवलोकन बताएगा कि कैसे वे इतने प्रसन्न, ऊर्जावान, वर्तमान में, समग्रता से जीते हैं! उनका गुस्सा या हिंसा तक सुंदर होती है।

कुरूपता की शुरुआत खंडित होने से होती है। बर्टेंड रसेल ने कहा है, 'हमने सभ्यता बड़ी मंहगी कीमत चुकाकर हासिल की है। जितनी सभ्यता, उतनी मुर्दानगी; संस्कृति ने मनुष्यता को बधिया कर दिया है।' मुख्यतः काम–क्रोध के दमन ने, देह के निचले हिस्से की निंदा से चित्त को भर दिया है। गहरी सांस से भय लगने लगा। नियंत्रण की वजह से सांस जितनी उथली हो गई, आदमी की जीवंतता भी उतनी ही कम हो गई।

जैसे–जैसे बड़े होते हैं हम उथली श्वास लेने लगते हैं। और हम अपने ही प्राणों के केन्द्र से जैसे उखड़ जाते हैं। वयस्क होते–होते हम अपनी श्वास को अप्राकृतिक तरीके से नियंत्रित करना सीख जाते हैं। अचानक पहाड़ी स्थल पर पहुंचकर पर्यटक को जो आनंद आता है, वह वास्तव में गहरी सांस के कारण आता है– जब उसके मुंह से निकलता है– अहा! शहर में सभी एक–दूसरे से भयभीत होकर जी रहे हैं– परिवार, समाज, पुलिस, पुरोहित, पड़ोसी; सब न्यायाधीश जैसा व्यवहार कर रहे हैं। हर व्यक्ति अपराध–बोध से ग्रस्त है।

शिव कह रहे हैं, हे देवी! फिर प्राकृतिक, नैसर्गिक श्वास लो और भीतर के उस केन्द्र में जहां अंतःश्वास और बहिर्श्वास एक दूसरे में विलय होती हैं, उस केन्द्र को जानो और इस प्रकार स्वयं को पहचानो। वह शरीर की ऊर्जा से रहित किन्तु सारे अस्तित्व की ऊर्जा से आपूरित केन्द्र है। वहां परम–आत्मा का ज्ञान घटता है, जो वस्तुतः हमारा ही 'होना' है। जब पहचानना संभव नहीं कि सांस आ रही या जा रही, वह अगतिमान विलय–बिंदु ही हमारा असली केन्द्र है। वास्तव में वही हम हैं।

चलो, माँ ओशो प्रिया के संग इस विधि को करें।

माँ ओशो प्रिया– ध्यान सत्र में आप सबका हृदय से स्वागत करती हूं। आज हम श्वास की तृतीय तंत्र विधि में उतरेंगे। प्रथम चार सोपानों में भूमिका निर्मित हो जाएगी, फिर पांचवें सोपान में ध्यान घट सकेगा। निवेदन है कि सभी साधक–साधिकाएं खड़े हो जाएं। पैरों को उतना फैला लें जितने चौड़े आपके कंधे हैं। लगभग डेढ़ फीट दूर कर लें– आराम से!

अ. शिथिलरूप से खड़े होने के बाद अब पूरे शरीर को कंपित करें। भाव

करें पैर के पंजों से ऊर्जा की लहर रीढ़ की हड्डी से होती हुई ऊपर सिर की तरफ बढ़ रही है। जैसे थर्मामीटर में पारा ऊपर की ओर उठता है, ऐसे ही मेरूदंड से उठ रही शक्ति, सिर की ओर भाग रही है। लहर की तरह महसूस करें ऊर्जा का उर्ध्वगमन, विद्युत जैसी ऊर्जा बड़े वेग से चढ़ रही है। ऊर्जा ही ऊर्जा का बवंडर... ऊर्जा का एक तूफ़ान आ गया।

ब. ठहर जाएं। शांत हो जाएं। भीतर जागी हुई ऊर्जा को महसूस करें। आप एक शक्ति–पुंज बन गए हैं। जैसे एक दीपक की लौ होती है, ऐसे ही आप एक पुंज–स्वरूप हैं। ऊर्जा के स्तंभ जैसा स्वयं को फील करें।

स. धीरे से बैठ जाएं, अपनी–अपनी जगह पर। अब सहज रूप से धीमी गहरी श्वास चलने दें। श्वास के छूटने पर ताली बजाएं। पुनः श्वास भीतर आएगी। श्वास जब बाहर छूटेगी फिर ताली बजाएं। दो मिनिट तक इस प्रक्रिया को चलने दें। अनुभव करें कि हरेक ताली के साथ क्रमशः ऊर्जा–तल उठता जा रहा है।

द. श्वास भीतर आ रही है, श्वास बाहर जा रही है। फिर श्वास भीतर आ रही है, श्वास बाहर जा रही है। भीतर आती, बाहर जाती श्वासों का मिलन, हाथों से वर्तुल बनाएंगे। श्वास भीतर आई, श्वास बाहर गई। श्वास भीतर आई, श्वास बाहर गई। भीतर–बाहर श्वासों की माला बन गई। श्वासों की माला जपते–जपते सुनो पिय का नाम– ब्रह्मनाद।

इ. हाथ आराम से रख लें। अब कुछ भी ना करें। सांस को नैसर्गिक ढंग से चलने दें। विज्ञान भैरव तंत्र की तीसरी विधि में डूबें। आती–जाती सांस के मिलन बिंदु को देखें। पूरी जागरूकता– आती–जाती श्वासों के मिलन बिंदु के प्रति। आती–जाती श्वासें आपस में कैसे मिलती हैं, गौर से देखें। फील करें उस मिलन स्थल को। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– जब कभी अंतःश्वास और बहिर्श्वास एक–दूसरे में विलीन होती हैं, उस क्षण में ऊर्जारहित, ऊर्जापूरित केन्द्र को स्पर्श करो।

आज का ध्यान पूरा होता है। इस विधि को सुविधानुसार कितने ही समय तक किया जा सकता है। हरि ओम् तत्सत्। ओम् नमः शिवाय।

जब श्वास स्वतः ठहरे, तब...–4

जब श्वास पूरी तरह बाहर गई है और स्वतः ठहरी है, या पूरी तरह भीतर आई है और ठहरी है– ऐसे जागतिक विराम के क्षण में व्यक्ति का क्षुद्र अहंकार विसर्जित हो जाता है। केवल अशुद्ध के लिए यह कठिन है।

पिछले सप्ताह एक मित्र ने सवाल पूछा था उसका मैंने उत्तर नहीं दिया था। मैं प्रतीक्षा कर रहा था ठीक समय पर उत्तर दूँ। आज वह समय आया, उन्होंने पूछा है पूज्यनीय सद्गुरु त्रिविर, आप लोग जब ओशो मंदिर में प्रवेश करते हैं तो नजर मिलते ही मेरा हृदय कह उठता है अहा! और क्षण भर को जैसे दिल की धड़कन रूक जाती है, आँखें थम जाती हैं और श्वांस ठहर जाती है। मेरे भीतर आनन्द ही आनन्द बरस उठता है। यह सब क्या है? आज विज्ञान भैरव तंत्र की विधि समझते हुये तुम्हें इस घटना की समझ पैदा हो जायेगी।

भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– हे देवी! जब श्वांस पूरी तरह बाहर गई है और स्वयं ठहरी है अथवा जब भीतर आई है और स्वतः ठहरी है ऐसे जागतिक विराम के क्षण में व्यक्ति का शुद्ध अहंकार विसर्जित हो जाता है, केवल अशुद्ध के लिये यह कठिन है। आचार्य को देखकर शिष्य के मन में अहा का भाव उठना, उस अहा के साथ सांस रूक जाना, हृदय की धड़कन थम जाना और आनन्द की वर्षा हो जाना, क्यों? क्योंकि श्वांस के रूकते ही मन निर्विचार हो जाता है। इन मित्र ने एक शेर भी लिख के भेजा है प्रश्न के साथ कि–

पंछी समझते हैं कि चमन बदल गया; सितारे मानते हैं कि गगन बदल गया।
मुर्शिद को देखकर दिल ये कहता है– वही खुदा है, बस नाम बदल गया।।

तुम इस भाव से अपने गरु की तरफ, मूर्शिद की तरफ देखोगे, तो निश्चित ही तुम्हारे विचार थम जायेंगे, श्वांस के ठहरते ही विचार ठहर जाते हैं। हमारे भीतर श्वांस का और विचार का एक बड़ा साहचर्य है। आपने मनोविज्ञान के समस्वरता के, साहचर्य के नियम के बारे में सुना होगा, श्वांस चलती है शरीर में, विचार चलते हैं मन में, दोनों आपस में संयुक्त हो गये हैं, जुड़ गये हैं। यदि अचानक तुम्हारी श्वांस कभी रूक जाये, तो भीतर विचार चल नहीं सकते, वे भी रूक जाते हैं। एक समस्वरता उन दोनों के बीच में पैदा हो गई है। अगर तुम विचार को रोक लो तो क्षण भर को श्वांस ठहर जायेगी, श्वांस को रोक लो तो विचार ठहर जायेंगे। इसलिये तो कभी पहाड़ पर जाकर, किसी सुन्दर हिल स्टेशन पर जाकर सूर्योदय को देखते हुये तुम्हारे मुख से निकलता है अहा, और आनन्द की वर्षा हो जाती है। तुम सोचते हो इन पर्वतों का, वादियों का, वृक्षों का, सूर्योदय का कमाल है, तो तुम भूल में हो। जो तुम्हारे भीतर अहा का भाव पैदा हुआ, क्षण भर के लिये विराम घटित हो गया। सूर्योदय का सौन्दर्य, उससे तुम अभिभूत हो गये। पक्षियों की चहचहाहट, रंगीन बादल, तुम चकित और विस्मृत रह गये। उस विस्मय के क्षण में विचार नहीं चल सकते। और उस निर्विचार में तुमने अपने भीतर के परमात्मा में जड़े जमा लीं, जड़ें तो जमी ही हुई थीं, तुम्हें ख्याल आ गया। तुम्हारे विचारों की शृंखला टूटी।

विज्ञान भैरव तंत्र की ये श्वांस की विधियाँ, उस निर्विचार अवस्था में जाने के लिये ही हैं। कभी कभी यह निर्विचार अवस्था अनायास भी घटती है। खासकर उन लोगों के लिये जिनके मन में वासना और चाहत नहीं है। इसलिये भगवान शिव कह रहे हैं, अशुद्ध व्यक्तियों के लिये यह कठिन है। अशुद्ध व्यक्तियों के लिये भी कभी–कभार होती है, उदाहरण के लिये– किसी खतरनाक काम में जब आप लगते हैं, अचानक कोई खतरे की स्थिति पैदा हो जाये। समझो आप यहाँ बैठे हैं और कोई आदमी आके बंदूक लगा दे आपकी छाती से। क्षण भर को श्वांस ठहर जायेगी, श्वांस के ठहरते ही मन भी रूक जायेगा। वो बन्दरों की तरह उछलने

वाला मन छलांग लेना बंद कर देगा। और एक आनन्द भीतर झर जायेगा। इसलिये खतरों में भी आनन्द आता है।

ये बात सब लोग समझ नहीं पाते कि क्यों लोग पर्वतारोही बनते हैं, पता है कि पर्वत पर चढ़ने में सैकड़ों लोग अपनी जान गवाँ चुके। क्यों अंतरिक्ष की यात्रा पर जाते हैं, कितनी दुर्घटनायें हो चुकीं। माता–पिता मना करते हैं अपने लड़कों को कि मोटरसाईकिल मत तेज चलाओ, फिर भी वह बेटा क्यों तेज मोटरसाईकिल चलाता है? उसको भी पता है कि खतरा है। लेकिन खतरे का एक मजा है, जब वह तेज मोटरसाईकिल चला रहा है कुछ क्षण विराम के आ जाते हैं। इतनी तीव्र गति में विचार नहीं चल सकते। किन्हीं क्षणों में श्वांस थम जाती है रूक जाती है। और तब उससे आनन्द झरता है। सब जानते हैं कि जुआ खेलने में, जुआघर जाने में आर्थिक नुकसान है। फिर भी लोग जुआ खेलते हैं, क्यों? जब वो सिक्का उछाला है और उस पर दाँव लगाया है, वो 'चित्त' गिरेगा कि 'पट्ट' गिरेगा, उस पर हार–जीत निर्भर है। उस एक क्षण के लिये सिक्के का ऊपर जाना और नीचे आना, एक क्षण उस जुँआरी की श्वांस नहीं चल सकती, श्वांस ठहर जायेगी। उस ठहरी हुई अवस्था में भीतर विचार नहीं चल सकते। जुआ खेलने का आनन्द वास्तव में ध्यान का ही आनन्द है। उसका जुआ से कुछ लेना–देना नहीं है। उस बाह्य परिस्थिति ने केवल सहयोग किया श्वांस के ठहर जाने में। किसी शायर ने लिखा है–

समझा था तुझसे दूर निकल जाऊंगा कहीं, देखा तो हर मुकाम तेरी रहगुजर में है।
अब मुझको करार है तो सबको करार है, दिल क्या ठहरा कि जमाना ठहर गया।

असली बात यही है कि दिल क्या ठहरा कि जमाना ठहर गया। तुम रूक जाओ, अचानक तुम्हें पता चलेगा सब रूक गया। तुम्हारे रूकते ही, तुम्हारी विचार श्रृंखला के ठहरते ही हमारा क्षुद्र अहंकार दैनिक उपयोगिता की चीज है। डे–टू–डे लाईफ में हम इगो के साथ जीते हैं। खतरे के क्षणों में, या अचानक किसी संकट की घड़ी में, या किसी अविश्वसनीय स्थिति को देखकर, अनपेक्षित परिस्थिति में हमारी श्वांस और विचार रूक जाते हैं। झेन फकीरों ने जापान में इस विधि का खूब उपयोग किया। यह भगवान शिव की ही विधि है। झेन फकीर अप्रत्याशित व्यवहार करते हैं। शिष्य आया है पूछने, प्रवचन सुनने, उसने पूछा है कि प्रभो! ईश्वर के बारे में कुछ बतायें, गौतम बुद्ध की शिक्षा के बारे में बतायें। झेन फकीर ने बोलना शुरू किया, बोलते–बोलते अचानक बिना किसी कारण के उसने डण्डा उठा लिया और शिष्य की पिटाई करने लगा। कभी–कभी झेन फकीरों ने अपने शिष्यों को खिड़की में से धक्का मारके बाहर गिरा दिया। और शिष्य निर्विचार हो गया, परमज्ञान को उपलब्ध हो गया। समझ में नहीं आता यह कैसे हुआ होगा, शिष्य भी उम्मीद नहीं कर रहा था कि गुरु अभी

डण्डा मारेगा, कि खिड़की में से धक्का देकर बाहर गिरा देगा, कि चाँटा मारेगा, या अनाप–शनाप गालियाँ देने लगेगा, बिना किसी कारण के।

जब अकारण कोई घटना घटती है तो तुम्हारा मन रूक जाता है, ठहर जाता है। आपने पुराण कथाओं में भगवान शिव की बारात के बारे में सुना होगा। ओशो कहते हैं वह भी भगवान शिव की एक टेक्नीक थी। पूरा का पूरा नगर निर्विचार ध्यान की अवस्था में पहुँच गया होगा। विज्ञान भैरव तंत्र पर बोलते हुये ओशो ने भगवान की शिव की बारात के बारे में समझाया है। समूची झेन विधि शिव की चौथी विधि पर आधारित है। लेकिन कैसा दुर्भाग्य की अब हमें जापान से झेन का आयात करना पड़ रहा है क्योंकि हमने वह परम्परा विस्मृत कर दी है। अब हम उसे नहीं जानते।

शिव इस विधि के बेजोड़ विशेषज्ञ थे।

जब वो अपनी बारात लेकर देवी को ब्याहने पहुँचे, पूरे नगर ने जागतिक विराम का अनुभव किया होगा। देवी के पिता अपनी बेटी को इस हिप्पी के साथ ब्याहने को बिल्कुल राजी नहीं थे। शिव ओरिजिनल हिप्पी, प्रथम हिप्पी थे। पार्वती के पिता उनके खिलाफ थे। कोई भी पिता ऐसे विवाह की अनुमति नहीं दे सकता था। कौन पिता शिव से विवाह की अनुमति देगा, लेकिन देवी हठ कर बैठीं और पिता को अनिच्छापूर्वक खेदपूर्वक अनुमति देनी पड़ी। फिर बारात आई, बारात बड़ी विचित्र। कहा जाता है कि शिव और उनकी बारात देखकर लोग भागने लगे। समूची बारात मानो एलएसडी, मारीजुआना, भाँग, गाँजा इत्यादि चीजें लेकर आई हो। लोग नशे में चूर थे। सच तो यह है कि एलएसडी, मारिजुआना भी नई चीजें हैं। शिव और उनके दोस्त और उनके शिष्य इससे भी ऊँचे नशों को जानते थे। जिसे वे सोमरस कहते थे। एलएसडी उसके सामने कुछ भी नहीं। पश्चिम के महान् विचारक अल्डुअस हक्सले ने शिव के कारण ही परम शराब जो कभी भविष्य में खोजी जायेगी उसको सोमा नाम दिया है, सोमरस पर आधाारित। वे बाराती मतवाले नाचते गाते, चीखते चिल्लाते, नगर में आये। समूचा नगर भाग खड़ा हुआ। अवश्य ही विराम का अनुभव हुआ होगा।

अशुद्ध के लिये कोई भी आकस्मिक, अप्रत्याशित, अविश्वसनीय चीज विराम पैदा कर सकती है। लेकिन शुद्ध के लिये ऐसी चीजों की जरूरत नहीं। शुद्ध व्यक्ति के लिये तो हमेशा ही विराम उपलब्ध है। विश्राम ही विश्राम है। कई बार शुद्ध चित्त के लिये श्वांस अपने आप ही रूक जाती है। अगर तुम्हारा चित्त शुद्ध है, शुद्ध का अर्थ है तुम किसी चीज की चाहना नहीं कर रहे, किसी चीज के पीछे दौड़ नहीं रहे, शांत, मौन, शुद्ध, सरल हो तो तुम बैठे रहोगे, और अचानक तुम्हारी श्वांस रूक जायेगी, ध्यान की झलक मिल जायेगी। परमात्मा से मिलन बहुत आसान है। शिव की ये सरल–सरल विधियों पर ध्यान करना और अपने चित्त को

निर्दोष और सरल होने देना। कई बार समाधि में डूबे हुए मित्र, बाद में पूछते हैं कि बीच में हमें ऐसा लग रहा था कि जैसे हमारीं श्वांस रूक गई हो और घबरा कर हम वापस लौट आए। नहीं, घबरा कर वापस लौटने की कोई जरूरत नहीं, वह तो सौभाग्य का क्षण है जब श्वांस ठहर जाए। वही परम जीवन में प्रवेश का क्षण है। अपने सौभाग्य पर नाज करना, जब कभी श्वांस रूक जाये।

आओ माँ ओशो प्रिया के संग इस विधि में गहराई से डूबते हैं। धन्यवाद...।

माँ ओशो प्रिया– मेरे प्रिय आत्मन्, नमस्कार!

आज आपने जो तंत्र–सूत्र की विधि समझी, उसका प्रयोगात्मक रूप हम करते हैं। सर्वप्रथम नाड़ीशोधन करना है। नाड़ीशोधन का तरीका है कि उँगलियों को इस प्रकार रखें .. ...ये दो उँगलियां आपकी भृकुटियों के बीच रहेंगी और इस उंगली को एक नाक पर और अंगूठे को दूसरी नाक पर। बारी बारी से सांस लेना है और छोड़ना है, जैसे आपने बायीं नाक से श्वांस ली तो बायीं से ही छोड़ना है, फिर दायीं नाक से श्वांस ली तो दायीं से ही छोड़ना है। बारी–बारी से जिस नाक से श्वांस ली उससे छोड़ेंगे। इसे करें। आईए, शुरू करते हैं।

जिस नाक से श्वांस ले रहे हैं उसी से छोड़ रहे हैं और फिर कुछ सेकण्ड के लिए रूकेंगे। फिर नाक बदलेंगे, रूक–रूक कर, बायीं से सांस ली, बायीं से छोड़ी, फिर कुछ सेकेण्ड को रूके, सहज रूप से और फिर दायीं नाक से सांस लें, दायीं से ही छोड़ें, फिर कुछ सेकण्ड्स को रूकें, सहज रूप से।

अब श्वांस को... सामान्य रूप से लें। हाथ नीचे कर लें। अब हम अनुलोम–विलोम करेंगे। जिस तरफ से श्वांस छोड़ेंगे, उसी तरफ से लेंगे। फिर से हाथों को वैसे रख लें। जिस तरफ से श्वांस छोड़ी, उसी तरफ से श्वांस ली। बारी बारी से... लेना और छोड़ना है। पहले छोड़ना, फिर दो सेकण्ड रूकना, फिर लेना...। अब हाथ नीचे कर लें। शरीर शिथिल छोड़ दें। श्वांस को दोनों स्वरों से चलने दें। भीतर... बाहर ... दो–दो सेकण्ड श्वांस को रोके। जब श्वांस बाहर जाती है तो बाहर उसे दो सेकण्ड के लिये छोड़े रखें फिर भीतर आती है तो दो सेकेण्ड के लिये भीतर रोके रहें। श्वांस बाहर गई। ठहराव की स्थिति में गहन होश साधना है। जब श्वांस ठहरी है उस समय पूरा होश, ठहराव के प्रति।

अब श्वांस को सामान्य चलने दें, रोकने का प्रयास न करें, बिल्कुल सहज स्थिति में। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं, जब श्वांस पूरी तरह बाहर गई है और स्वतः ठहरी है या पूरी तरह भीतर आयी है और ठहरी है, ऐसे जागतिक विराम के क्षण में व्यक्ति का शुद्ध अहंकार विसर्जित हो जाता है। कोई प्रयास नहीं करना है। निष्क्रिय होकर पूरे होश से भरना है। सहज होकर पूरे होश से भरना है। आज का ध्यान पूरा हुआ। हरि ओम् तत्सत!
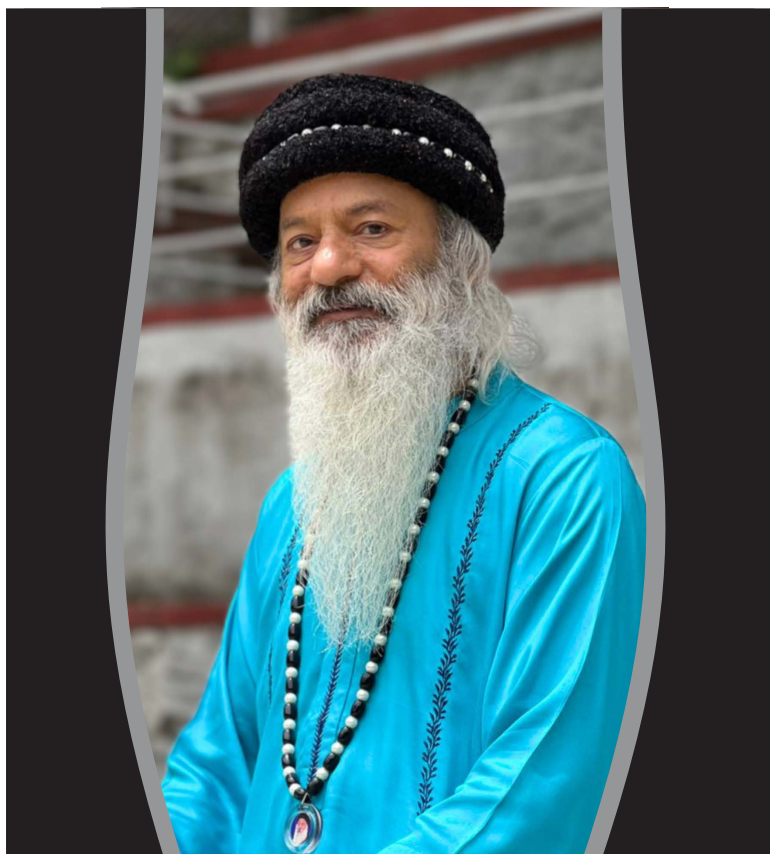
भृकुटियों के मध्य में अवधान–5

भृकुटियों के बीच अवधान को स्थिर करके विचार को मन के सामने करो। फिर सहस्रार तक रूप को श्वास–तत्व से, प्राण से भरने दो। वहां वह प्रकाश की तरह बरसेगा।

मैंने सुना है सरदार विचित्तर सिंह के घर से रोज रात को हँसी की आवाजें आती थीं, कभी पत्नी खिलखिलाती, कभी पति के अट्टहास की आवाज। मोहल्ले के लोगों ने पूछा कि हमारे घर में तो पति–पत्नी की हमेशा कलह चलती है, आप लोगों का दाम्पत्य जीवन इतना सुखी कैसे है? विचित्तर सिंह ने बताया कि सुखी नहीं है, हम दोनों की भी कलह होती है और मेरी पत्नी अक्सर गुस्से में बेलन या कोई भी वस्तु जो उसके हाथ में हो मेरी तरफ फेंकती है। जब उसका निशाना सही लग जाता है तो वो हँसती है और जब नहीं लगता तो मैं हँसता हूँ। इस प्रकार हम दोनों ही हँसते हैं, बारी–बारी से। फिर विचित्तर सिंह का बुढ़ापा आया। कोई सत्तर साल की उम्र में विचित्तर सिंह ने तलाक के लिये अर्जी पेश की। जज ने पूछा कि पूरी जवानी तो तुमने हँसते–खेलते गुजार दी अब बुढ़ापे में तलाक। विचित्तर सिंह ने कहा कि हाँ मेरी पत्नी सामान फेंक–फेंक कर मुझे मारती है। जज ने

कहा कि यह बात तो मुझे पहले से ही पता है कि तुम्हारी पत्नी की सामान फेंकने की आदत, उस बीमारी से ग्रस्त है। अब कौन सी तकलीफ हो गई कि तलाक चाहिए। विचित्तर सिंह ने कहा कि अब उसका निशाना कभी चूकता ही नहीं, ऐसा सध गया है। अब हमें हँसने का मौका ही नहीं मिलता, हमेशा वहीं हँसती है। आध्यात्मिक साधक का निशाना क्या है?

आज की विधि में भगवान शिव उस तरफ इशारा करते हैं, उसे वे कहते हैं त्रिनेत्र, 'दि थर्ड आई'। दोनों भृकुटियों के मध्य में अवधान को केन्द्रित करके, हे देवी! विचार को मन के सामने करो, फिर सहस्रार तक रूप को श्वांस तत्व से प्राण को भर जाने दो, वहाँ वह प्रकाश की तरह बरसेगा। आध्यात्मिक साधक का निशाना है यह तीसरा नेत्र। इसी को शिवनेत्र भी कहा जाता है। प्रसिद्ध रशियन मनोवैज्ञानिक पावलफ का आपने नाम सुना होगा। उसने अपने कुत्तों के साथ प्रयोग किए। सारे जग–जाहिर हैं वह प्रयोग। कुत्ते को जब वह रोटी देता था और उसी समय वह घण्टी बजाता था। एक महीने तक लगातार भोजन के साथ घण्टी, भोजन के साथ घण्टी बजी, फिर एक महीने बाद पावलफ ने सिर्फ घण्टी बजाई और कुत्तों ने ऐसा व्यवहार किया कि जैसे उन्हें भोजन दिया जा रहा है। उनकी जीभें बाहर निकल आई, लार टपकने लगीं, वे भोजन करने के लिये उत्सुक और उत्तेजित हो गये। क्या हुआ एक साधारण कुत्ते को अगर हम घण्टी बजाएं, तो वह ऐसा व्यवहार नहीं करेगा, लेकिन पावलफ के कुत्ते एक महीने में संस्कारित हो गये, कण्डीशन्ड हो गये। उनके लिये भोजन और घण्टी की आवाज पर्यायवाची हो गई। ठीक इसी प्रकार हमारे भीतर मन में लगातार विचार चल रहे हैं, शरीर में श्वांस चल रही है और हमारी आँख की पुतलियाँ निरंतर यहाँ से वहाँ डोलती रहती, हिलती रहती हैं। ये तीनों चीजें आपस में एसोसिएटेड हो गई हैं। संस्कारित हो गई हैं।

यदि हम श्वांस को ठहरा लें, जैसा कि पिछली विधि में शिव ने कहा, तो विराम के क्षण में निर्विचार की घटना घट सकती है। आज पाँचवी विधि में शिव कहते हैं कि भृकुटियों के मध्य में ध्यान को टिका लें। दोनों आँखें ऊपर की तरफ देख रहीं हों। मध्य में देख रहीं हों, ऐसी आँखें हो जायें। तब पुतलियाँ हिल नहीं सकतीं। और जब पुतलियाँ नहीं हिल सकतीं तो भीतर विचार नहीं चल सकते, क्योंकि वे आपस में एसोसिएटेड हैं। संस्कारित हो गये हैं। किसी व्यक्ति को सोते हुये आप देखना। कभी कभी उसकी आँख की पुतलियाँ बन्द पलकों से भी हिलती हुई आयेंगी। तब वह सपना देख रहा है। वैज्ञानिक भाषा में इसे कहते हैं आर.ई. एम. स्लीप, रैपिड आई मूवमेन्ट, और कभी–कभी आठ घण्टे की नींद में लगभग दो घण्टे नॉन रैपिड आई मूवमेन्ट स्लीप होती है, जब आँख की पुतलियाँ गति नहीं कर रही होंती या बहुत धीमी गति से कर रही होती हैं, उस समय स्वप्न नहीं चल रहे होते भीतर। क्योंकि जब सपना चलता है तब आपकी आँख की पुतली वैसी ही हिलती है जैसे आप टेलीविजन पर फिल्म

देखने में, या चलती हुई कार से बाहर के हिलते हुये दृश्य देखने में आँख की पुतली हिलती है। शरीर को तो कुछ पता नहीं, आँख को पता नहीं वास्तविक दृश्य है या सपना है। अगर पुतलियाँ थिर हो जायें, तो यह सपना नहीं चल सकेगा, भीतर विचार भी नहीं चल सकेगा। वहीं है निशाना, जो हमें साधना है।

ओशो इस विधि के संबंध में कहते हुये, तीसरे नेत्र के बारे में इस प्रकार समझाते हैं– आधुनिक शरीर–शास्त्र कहता है, वैज्ञानिक शोध कहती है कि दोनों भौंहों के मध्य में जो ग्रन्थि है वह शरीर का सबसे रहस्यपूर्ण भाग है उसका नाम पिनियल ग्लैण्ड, यहीं तिब्बतियों की तीसरी आँख है और यहीं शिवनेत्र है। विज्ञान भैरव तंत्र का त्रिनेत्र। दो आँखों के बीच एक तीसरी आँख भी है। लेकिन सामान्यतः वह सक्रिय नहीं है। वह है, और किसी भी समय सक्रिय हो सकती है। इसको सक्रिय करने के लिये इसके संबंध में तुम्हें कुछ श्रम करना पड़ेगा। हाँ वह अन्धी नहीं है, सिर्फ बन्द है। यह विधि तीसरी आँख को खोलने की विधि है। तन्त्र के पुराने ग्रन्थों में कहा गया है कि ध्यान तीसरी आँख का भोजन है। यह भूखी है, जन्मों–जन्मों से भूखी है। जब तुम इसे ध्यान देते हो तो यह जीवित हो उठती है। इसे भोजन मिल जाता है। और जब तुम जान लोगे कि इसका भोजन ध्यान है, जान लोगे कि यह ध्यान को चुम्बक की तरह खींचती है, तब ध्यान बहुत सरल हो जायेगा।

सिर्फ सही बिन्दु को जानना है। वह सही बिन्दु दोनों आँखों के मध्य में है। और इसलिये हिन्दुओं ने तिलक लगाने की परम्परा की शुरुआत की। यह टीका या तिलक कोई सांयोगिक या कोई फैशन की बात नहीं है। एक बहुत महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक विधि है। जब चंदन का टीका दोनों भौंहों के मध्य में लगा होगा तो दिनभर तुम्हारा ध्यान अपने आप उस शीतल बिन्दु की तरफ जाता ही रहेगा। धीरे धीरे तुम्हारी ऊर्जा ऊर्ध्वगामी हो जायेगी और हमारे भीतर जो शक्ति है उसके भी दो हिस्से हैं, एक स्थूल है जो हवा से प्राणवायु जा रही है, ऑक्सीजन जा रही है; हमें शक्ति दे रही है और एक उसका आंतरिक हिस्सा है। पश्चिम के प्रसिद्ध वैज्ञानिक विलियम रेक ने जर्मनी में पिछली सदी में प्राणशक्ति की खोज की। हवा से भिन्न है वह शक्ति। बिना हवा के भी वह शक्ति प्राप्त की जा सकती है। विलियम रेक ने इसको आरेगान इनर्जी नाम दिया। उसे हम 'व्हाइटल फोर्स' कह सकते हैं।

कई योगियों ने बिना श्वांस लिये भी इस प्राण शक्ति को एब्जॉर्व करने की विधि खोज ली। और तब वे जमीन की नीचे समाधि ले लेते हैं। कई कई महीनों तक। मिस्त्र में एक बार ऐसा हुआ, एक योगी ने चालीस साल की समाधि ली थी, जमीन के नीचे स्वयं को बन्द करा लिया था। चालीस साल बाद तो लोग भूल ही गये थे। एक पीढ़ी समाप्त हो चुकी थी। फिर अचानक किसी ने लाइब्रेरी में किसी किताब को पढ़ते हुए देखा कि इसमें लिखा है कि फलाँ

फलाँ व्यक्ति ने समाधि ली है। उम्मीद नहीं थी कि वह जिन्दा होगा। चालीस साल पूरे हो गये थे, जमीन खोदी गई और वह व्यक्ति जिन्दा पाया गया। उससे पूछा कैसे? उसने कहा कि मैं प्राण ऊर्जा को सीधा ही ग्रहण कर सकता हूँ बिना श्वांस के। त्रिनेत्र पर अगर ध्यान हो तो प्राण शक्ति को सीधा ग्रहण किया जा सकता है। 'गहरे पानी पैठ नामक प्रवचनमाला के तीसरे प्रवचन में ओशो ने तिलक, टीका के विज्ञान को तीसरे नेत्र के खोलने के विज्ञान को बड़े विस्तार से समझाया है। यह पीनियल ग्लेंड चुम्बक जैसी होती है। जब पुतलियाँ स्थिर हो जाती हैं, तब भीतर विचार रूक जाते हैं अथवा हम विचारों के साक्षी हो सकते हैं।

सामान्यतः हम विचारों के साक्षी नहीं हो पाते, यदि हमारी ऊर्जा आज्ञा चक्र पर नहीं है। आज्ञा चक्र पर ऊर्जा आते ही विचार ऐसे हो जाते हैं जैसे राह पर चलते हुये राहगीर। ट्रैफिक चल रहा है और तुम किनारे खड़े होकर, तटस्थ होकर देख रहे हो। और धीरे–धीरे विचारों के बीच के गैप दिखाई पड़ने लगते हैं। और निर्विचार अवस्था उपलब्ध हो जाती है। यदि तीसरे नेत्र पर ध्यान न हो तो विचारों से या भावनाओं से हमारा आइडेन्टिफिकेशन, तादात्म्य बन जाता है और तब हम उनके साक्षी नहीं हो पाते। तो दो प्रकार से प्रयोग किया जा सकता है कि या तो तुम साक्षी भाव को साध लो तो तुम्हारी ऊर्जा ऊर्ध्वगामी हो जायेगी या तुम ऊर्जा को ऊर्ध्वगामी कर लो तो तुम साक्षी हो जाओगे। ये दोनों बातों में से साक्षी को साधना कठिन है। सीधा सीधा तीसरे नेत्र पर ऊर्जा को लाना सरल है। कभी तुमने महसूस किया होगा कि किसी अस्पताल में जाते हो या बीमारों के बीच जाते हो, वहाँ से थके मांदे लौटते हो, क्यों? तुम्हारी प्राण शक्ति खींच ली गई। वह जो व्हाईटल फोर्स है, वह बीमार लोगों ने खींच लिया। श्वांस के अलावा एक सूक्ष्म शक्ति हमारे भीतर है, उस शक्ति को इकट्ठा किया जा सकता है, जब तीसरे नेत्र पर ध्यान हो।

शिव कहते हैं पार्वती से कि हे देवी! फिर सहस्रार पर अर्थात् सिर के सबसे ऊपरी हिस्से पर भाव करो कि वहाँ प्राण शक्ति भर रही है और प्रकाश की वर्षा फिर होने लगेगी। तीसरे नेत्र पर जब ध्यान हो तो तुम्हारी भावना, तुम्हारी कल्पना की शक्ति अति प्रगाढ़ हो जाती है। अगर तुम सपना भी देखोगे तो वह यथार्थ हो जायेगा। शंकराचार्य जब कहते हैं कि यह जगत माया है, सपना है, उनकी बात ठीक है। वे कहते हैं चूँकि परमात्मा की शक्ति तीसरे नेत्र पर है इसलिये परमात्मा अगर कोई सपना देखेगा तो वह सत्य हो जायेगा। सम्मोहनविद् इस बात को जानते हैं। शंकराचार्य ठीक कहते हैं कि यह जगत परमात्मा के द्वारा देखा हुआ सपना है, यह वास्तव में नहीं है।

सम्मोहनविद् तीसरे नेत्र को एकाग्र करने के लिये कहते हैं और सुझाव देते हैं और तब वह सुझाव वास्तविक बन जाता है। अगर तुम्हारे हाथ पर एक छोटा सा पत्थर रख कर कहा
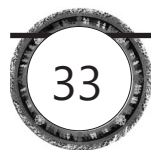
जाए कि यह जलता हुआ अंगारा है और तीसरे नेत्र पर तुम्हारा ध्यान करवा दिया जाये उसके पहले, तो तुम मान लोगे कि यह अंगारा है। न केवल तुम उसे चीख कर फेंक दोगे बल्कि तुम्हारे हाथ में जलने का निशान भी आ जायेगा। तुम्हारा सपना वास्तविक बन गया। तो स्वप्न यथार्थ हो सकता है और यथार्थ स्वप्न हो सकता है, दोनों बातें संभव है। तो तीसरे नेत्र का यह ध्यान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। भगवान कृष्ण ने गीता में भी अर्जुन को यह ध्यान करने की सलाह दी है। भगवान महावीर ने भी अपने शिष्यों को तीसरे नेत्र पर ध्यान करना और श्वांस को ठहराने की सलाह दी है। इसके मौलिक खोजी भगवान शिव हैं। आओ, माँ प्रिया के साथ हम तीसरे नेत्र का ध्यान करते हैं।

धन्यवाद...।

माँ ओशो प्रिया–

मेरे प्रिय आत्मन्, नमस्कार।

आज जो हम विधि करेंगे, उस विधि के पहले परमगरु ओशो के द्वारा दी हुई मण्डल ध्यान विधि की भूमिका बनाकर, तंत्र सूत्र की विधि का अनुभव करेंगे।

तो पहला चरण है आप खड़े हो जाएं और खड़े होकर जॉगिंग करना है। ऊर्जा को जगायें...। ऊर्जा जाग रहीं है...। ठहर जायें। बैठ जायें। नाभि को केन्द्र मानते हुये अब पूरे शरीर को वर्तुलाकार घुमायेंगे...। जागी हुई शक्ति नाभि–केन्द्रित हो रहीं है...। जागी हुई शक्ति... नाभि केन्द्रित हो गई है, नाभि पर... इकट्ठी हो रहीं है। सारी ऊर्जा नाभि पर आ गई... । अब स्थिर हो जायें। रीढ़ व गर्दन सीधी कर लें। धीरे से आँखें खोलें... और क्लॉक वाइज आँखों को घुमाएं...। अब ऐन्टीक्लॉक वाइज घुमायें आॅखों को...। मानों दीवाल पर बड़ी.. घड़ी लगीं है... और आप घड़ी को देख रहे हैं...। आँखें बन्द कर लें ...। सारी ऊर्जा दोनों भौंहों के बींच... दोनों आँखों के बींच इकट्ठी हो गई...। धींमीं... गहरी श्वांस लें। भाव करें। श्वांस के साथ सिर के ऊपरी हिस्से में प्राण शक्ति भर रहीं है। श्वांस के साथ प्राण शक्ति का भरना सिर के ऊपरी हिस्से में। इकट्ठी हुई ऊर्जा सहस्रार पर पहुँच गई है।

भगवान शिव पार्वती से कहते हैं हे देवीं! भृकुटियों के बींच अवधान को स्थिर करके विचार को मन के सामने करो फिर सहस्रार तक रूप को प्राण से भरने दो, वहाँ पर वह प्रकाश कीं तरह बरसेगा। सारी प्राण ऊर्जा सहस्रार पर इकट्ठी हो गई। प्रकाश हीं प्रकाश का अनुभव हो रहा है। धींरे–धींरे आँखें खोलें। आज का ध्यान पूरा हुआ।

हरि ओम् तत्सत्!

कार्यों में लगे हुए ध्यान साधो–6

सांसारिक कामों में लगे हुए, अवधान को दो श्वासों के बीच में टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े ही दिनों में नया जन्म होगा।

आज मेरे पास दो सवाल आये हैं। एक मित्र ने पूछा है कि आप चुटकुलों के माध्यम से अध्यात्म के गुह्य रहस्य क्यों समझाते हैं। शिव की विधि का ही प्रयोग कर रहा हूँ। अचानक, अनायास, आकस्मिक जब कुछ होता है तो तुम्हारा मन ठहर जाता है। लतीफा सुनकर मजा क्यों आता है? तुमने कभी इसके मनोविज्ञान पर सोचा। क्योंकि लतीफे में एक कहानी चल रही होती है। शुरुआत में तार्किक से रूप से चल रही है, तुम्हारा मन आशा और उम्मीद कर रहा है कि अब ऐसा होगा, अब ऐसा होगा और अचानक एक टर्न आता है, एक मोड़ आता है और कुछ अनपेक्षित हो जाता है। वहाँ तुम्हारी श्वांस रूक जाती, वहाँ तुम्हारे विचार रूक जाते, अचानक तुम गहरी श्वांस लेते हो, खिलखिलाकर हँसते हो। ये आनन्द का श्रोत तुम्हारे भीतर ही था। लेकिन चुटकुले ने एक परिस्थिति पैदा कर दी। यह शिव की ही विधि है अचानक विराम पैदा करने की, निर्विचार करने की। मैंने झेन फकीरों की

बात आपसे कहीं, वे अचानक गालियाँ देने लगते, मारपीट करने लगते, डण्डा मार देते, खिड़की से उठा कर फेंक देते। मैं ओशो का शिष्य हूँ, झेन फकीरों का शिष्य नहीं हूँ लेकिन तरकीब वहीं काम पर ला रहा हूं। ओशो ने इसकी शुरुआत की।

ओशो प्रथम व्यक्ति हैं जिन्होंने जोक्स का धार्मिक विधि के रूप में प्रयोग किया। ओशो के पहले कभी किसी ने नहीं किया था। और इससे ज्यादा सरल और क्या हो सकता है, तुम्हें कुछ नहीं करना सिर्फ चुपचाप बैठकर सुनना है। गुरु को साधना करनी पड़ रही है, शिष्य आराम से बैठे हैं। ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था। और दूसरी बात, हम ठहरे आलसी, अब एक–एक को कहाँ डण्डा मारने जायेंगे। इतनी हिंसा और क्रूरता हमसे न होगी, झेन फकीरों के पास यदा–कदा कोई शिष्य आता था। उठाकर खिड़की से बाहर फेंक देते थे। अब मैं खिड़की से बाहर फेंकने लगूँ तो कितनी ताकत लगेगी, मेरे जैसे आलसी से यह काम न होगा। तुम्हें चुटकुला सुनाकर भी वही काम कर रहा हूँ जो शिव अपनी विचित्र बारात लाकर किये थे और झेन फकीर जो डण्डा मारकर किये थे।

एक दूसरा सवाल एक साधिका ने पूछा है कि ध्यान के प्रयास में मैं बारम्बार चूक जाती हूँ, मिस्टर विचित्तर सिंह की तरह निशाना नहीं साध पा रही। घर गृहस्थी के कार्यों में समय भी नहीं मिल पाता। मन में बच्चों के भविष्य को लेकर चिन्तायें चलती रहती हैं, क्या करूँ? इसी चिन्ता करने वाले मन को तो ठहराने की विधि मैं तुमको समझा रहा हूँ। मन हमेशा भविष्य में छलांग मारता है।

मैंने सुना है, सेठ चन्दूलाल ट्रेन में यात्रा कर रहे थे। लो! ....फिर आ गया चुटकुला। सेठ चन्दूलाल ट्रेन में यात्रा कर रहे थे, सामने ही सीट पर एक बहुत सुन्दर युवक बैठा था। चन्दूलाल के मन में आया काश ये उनका दामाद बन जाये। लड़की के लिये रिश्ते की बात करें। उसका नाम पता पूछा। पता चला अविवाहित है, पूछा क्या काम करते हो, उसने बताया एक साधारण सी नौकरी करता हूँ, क्लर्क हूँ। तब सेठ चन्दूलाल ने सोचा फिर ठीक नहीं। क्लर्क से उन्हें सख्त नफरत! गरीब आदमी से कैसे शादी कर सकते हैं। चन्दूलाल ने दूसरी तरफ मुँह फेर लिया और अपनी पत्रिका पढ़ने लगे, निराश हो गये। उस युवक ने पूछा कि समय कितना हुआ है। चन्दूलाल ने एक नजर उसकी तरफ उठाकर देखा फिर नजर नीची कर ली, उसको उत्तर नहीं दिया। उसने फिर पूछा कि क्षमा करें समय कितना हुआ है आपकी घड़ी में। चन्दूलाल ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने कहा, क्या आपकी घड़ी बन्द है? चन्दूलाल को गुस्सा आ गया, बोले, घड़ी बन्द नहीं, घड़ी मेरी बिल्कुल ठीक है लेकिन समय नहीं बताऊंगा। वो भी थोड़ा हैरान हुआ। आज तक कभी ऐसा न हुआ कि कोई समय न बताये। उसने पूछा, समय क्यों नहीं बतायेंगे? चन्दूलाल ने कहा, और लम्बी बातचीत का सिलसिला

मत चलाओ। क्योंकि मुझे पता है, मैं समय बताऊंगा, तुम फिर कुछ और पूछोगे, कहाँ के रहने वाले हो, कहाँ जा रहे हो, फिर मैं कहूँगा बम्बई में रहता हूँ, जुहू में रहता हूँ, फिर कभी मुझे औपचारिकतावश कहना पड़ेगा, मेरे घर आ जाना, फिर तुम आओगे, निश्चित रूप से मेरी लड़की तुम्हें देखकर प्रेम में पड़ जायेगी, फिर कभी तुम पूछोगे कि हम दोनों जाकर फिल्म देख आएं क्या? और फिर मुझे पक्का पता है एक दिन तुम विवाह का प्रस्ताव लेकर आओगे और मैं एक क्लर्क के साथ अपनी बेटी का विवाह नहीं कर सकता। और खासकर जिस आदमी के पास खुद अपनी घड़ी नहीं है, उसे अपनी बेटी दूंगा?

अब चन्दूलाल कितनी दूर की सोच रहे हैं। तुम कह रहीं, ऐसे ही बच्चों के भविष्य को लेकर चिंतायें चलती रहती हैं। जरा हँसों अपनी चिन्ताओं पर। वे चुटकुलों से ज्यादा नहीं हैं। और तुमने पूछा घर गृहस्थी के काम में समय नहीं मिलता। आज की विधि तुम्हारे लिये ही है।

शिव कहते हैं पार्वती से, सांसारिक कामों में लगे हुए अवधान को दो श्वासों के बीच में टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े ही दिनों में नया जन्म होगा। वही मैं तुमसे कहता हूँ। ध्यान को कामों से अलग न करो। मंदिर और घर, दो अलग-अलग चीजें न रहें। तुम्हारा घर ही मंदिर हो जाये। तुम्हारा कर्म ही पूजा हो जाये। इस भाव से कर्म करो। और विधि बड़ी सरल है। दो श्वासों के बीच, अंतराल में वो जो ठहराव का क्षण है, उसका स्मरण रहे। परिधि पर काम चलता रहेगा और भीतर श्वास का स्मरण चलता रहेगा। तुम्हारे होने के दो तल हो जायेंगे। करने का तल और होने का तल। परिधि पर क्रियायें चलती रहेंगी और भीतर तुम्हारा होना। तुम्हारी आत्मसत्ता, उसका अहसास होता रहेगा। एक छोटी सी कविता तुम्हारे लिये –

क्यों समझती खुद को तुम कमजोर बिटिया,
अपनी ताकत पर करो तुम गौर बिटिया,
सृष्टि में तुम सूर्य की पहली किरण हो,
रोशनी का तुम सुनहरा भोर बिटिया,
मंदिरों की घण्टियों की गूँज हो तुम,
शक्ति की पूजा का तुम्हीं ठौर बिटिया,
धर्म दर्शन ज्ञान की उड़ती पतंगें,
इन पतंगों की तुम्हीं हो डोर बिटिया,
तुम रहो चोकस तो बिल्कुल न बनोगी,

वासना के भेड़ियों का कौर बिटिया,
राह में ठोकर लगे हिम्मत न हारो,
फिर करो कोशिश कोई पुरजोर बिटिया,
एक दिन निश्चित तुम्हें मंजिल मिलेगी,
साधना से मुँह को न मोड़ो बिटिया।

बस इतना ही याद रखो, निश्चित ही मंजिल मिलेगी ध्यान की। एक दिन निश्चित तुझे मंजिल मिलेगी, साधना को मुख से न मोड़ बिटिया। साधना करती रहो, और सबसे सुगम उपाय है, साधना को अपने दैनिक क्रियाकलाप के साथ जोड़ दो। अगर तुमने ध्यान को अलग से कोई प्रक्रिया बनाया, तो चूक–चूक जाओगी, हो नहीं पायेगा। इस विधि को समझाते हुये हमारे परमगरु ओशो के अमृतवचन सुनो।

'सांसारिक कामों में लगे हुये, हे देवी! अवधान को दो श्वांसों के बीच में टिकाओ। शिव कहते हैं इस अभ्यास से थोड़े ही दिनों में नया जन्म होगा। लेकिन इसको लगातार करना है। इस छठवीं विधि को निरंतर करना है। इसलिए कहा गया है, सांसारिक कामों में लगे हुऐ जो कुछ तुम कर रहे हो उसमें ध्यान को श्वांसों के अंतराल में थिर रखो। और काम काज में लगे हुए ही इस साधना को करना है, अलग से बैठकर नहीं। ठीक ऐसी ही एक विधि की चर्चा हम पहले कर चुके हैं। उसमें और इसमें फर्क सिर्फ इतना है कि इसे संसार के कामों में लगे हुए, घर गृहस्थी में लगे हुए करना है, अलग होकर नहीं। यह साधना तब करो जब तुम कार्य में निमग्न हो।

भोजन कर रहे हो, भोजन करते जाओ और श्वांस के अंतराल पर ध्यान रखो। चल रहे हो चलते जाओ, ध्यान को श्वांस के अंतराल पर टिकाओ। तुम सोने जा रहे हो, लेटो, नींद को आने दो, श्वांसों के अंतराल के प्रति सजग बने रहो। क्यों कामकाज की बात कर रहे हैं शिव? क्योंकि काम–काज करते हुये मन डोलता है, डांवाडोल होता है। बार–बार तुम भूल–भूल जाते हो। तो डांवाडोल न हो, अंतराल में थिर बने रहो। काम–काज भी न रूके, चलता रहे। तब तुम्हारे लिये अस्तित्व के दो तल हो जाएंगे, करने के और होने के। तब बाहर का जगत तुम्हारे लिऐ एक नाटक के समान, एक अभिनय के समान हो जायेगा। बाहर बाहर तुम अपना पार्ट अदा करते रहोगे और भीतर–भीतर आत्मस्मरण बना रहेगा। अपने भीतर तुम केन्द्रित हो जाओगे।'

बड़ी अद्भुत विधि है यह। राम के जीवन को हम कहते हैं रामलीला। कृष्ण के जीवन को कहते हैं रासलीला। लीला का अर्थ होता है नाटक, अभिनय। कहा जाता है कि वाल्मीकि ने

कहानी पहले ही लिख दी थी राम की और राम ने फिर अपना पार्ट अदा किया। अगर शिव की इस विधि का पालन करो, तुम्हारा जीवन भी एक लीला, एक नाटक, एक अभिनय जैसा हो जायेगा। मुझे याद आता है एक फिल्म अभिनेता ओशो के पास आया और उसने कहा कि मेरी डायरी में कुछ आशीष वचन लिख दें। ओशो ने उसकी डायरी में लिखा– जीवन को ऐसे जियो जैसे वह अभिनय है, और अभिनय को ऐसे करो जैसे वह वास्तविक जीवन है, तब दोनों में तुम्हें सफलता मिलेगी। तो अध्यात्म की सारी सफलता का राज यही है और बड़ी ही सरल विधि से इसे किया जा सकता है। चलते–फिरते, उठते–बैठते, खाते–पीते, स्नान करते, बातचीत करते हुये अपना ध्यान दो श्वांसों के बीच के अंतराल में रखो। श्वांस आयी, श्वांस गयी। बीच का छोटा सा गैप, वह चूके न! बाहर परिधि पर काम चलता रहेगा, भीतर में तुम्हारे एक नया केन्द्र उदित हो जायेगा। पहली बार तुम केन्द्रित अनुभव करोगे। तुम्हारी जड़ें अपनी आत्मा में जमेंगी। बड़ी ही अद्भुत और सरल विधि है। और तुम्हारे कामकाज में कोई बाधा न पड़ेगी। आओ इस विधि का प्रयोग करें, माँ ओशो प्रिया के संग। धन्यवाद...।

माँ ओशो प्रिया– मेरे प्रिय आत्मन्, नमस्कार!

आज का ध्यान प्रयोग ध्यान कक्ष में करने के लिए नहीं, बल्कि सारे जीवन में हम जो भी कर्म करते हैं, उनको ध्यानपूर्ण बनाने के लिये है। कर्म ही पूजा बन जाये। जब हम ऑफिस में काम करते हैं, जब हम घर में खाना पकाते हैं, जब स्वयं चाय पीते हैं, या घर का अन्य काम करते हैं, तब करते समय इन कामों को चलते–फिरते, उठते–बैठते, श्वांसों पर ध्यान रखना है। खासकर दो श्वांसों के बीच जो अंतराल है उस पर ध्यान रखना है जैसे चल रहे हैं। चलते हुए श्वांस आ रही है जा रही है। बीच में एक छोटा सा गैप है उस गैप में ध्यान रखना है। दो श्वांसों के अंतराल को देखें। चलते हुये, चाय पीते हुये, चाय का सिप भीतर आ रहा है... जा रहा है...। श्वांस आ रही है... जा रही है...। अंतराल को पकड़े चाय पीते हुये श्वासों के अंतराल को देखें। भोजन करते हुये श्वांसों के अंतराल पर ध्यान दें। बगीचे में काम करते हुए श्वांसों के अंतराल पर गहन होश से भर जाएं घर की सफाई करते हुये..., श्वांसों के गैप के प्रति होशपूर्ण हो जाएं। इस तरीके से आपका सारा जीवन एक पूजा बन जायेगा, अर्चना बन जायेगा, उपासना हो जायेगा, पूरी जिन्दगी ही एक बन्दगी बन जायेगी, तब किसी मंदिर में जाने की जरूरत नहीं, गुरूद्वारे में जाने की जरूरत नहीं है, जीवन ही है प्रभु! जीवन एक मंदिर बन जायेगा। दो श्वांसों के बीच प्रभु का द्वार है। वहाँ से भीतर प्रवेश हो जायेगा। संत कबीर कहते हैं–

मोको कहाँ ढूढ़े रे बन्दे, मैं तो तेरे पास रे।

ना मैं बकरी, ना मैं भेड़ो, ना मैं छुरी गंड़ास में,
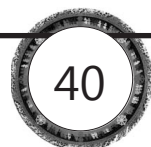
ना मैं मंदिर, ना मैं मस्जिद, ना काबे कैलाश में,
ना तो कौनो क्रियाकर्म में, नाहीं जोग वैराग में,
खोजी होय तो तुरते मिलूँ, पल भर की तलाश में।
कहे कबीर सुनो भई साधो सब सांसों की सांस में।

श्वासों की सांस में, दो श्वासों की सांस यानि जो गैप है दो श्वांसों के बीच के गैप में, अंतराल में परमात्मा मिलता है। भगवान शिव पार्वती से कहते हैं, सांसारिक कामों में लगे हुए अपने अवधान को दो श्वांसों के बीच में टिकाओ। इस अभ्यास से थोड़े दिनों के बाद नया जन्म होगा। आज का ध्यान पूरा हुआ।

हरि ओम् तत्सत्!

मृत्यु पर अधिकार पाओ–7

ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वास, प्राण को टिकाओ। जब वह सोने के क्षण में हृदय तक पहुंचेगा तब स्वप्न और मृत्यु पर अधिकार हो जाएगा।

मृत्यु के क्षण में कैसा प्रतीत होता है, किसी कवि ने प्यारे शब्दों में उस भाव को बांधा है, सुनो–

लो बीत चली वासंती बेला जीवन की
धूमिल हो चली ललित–स्मृति कल्पित फूलों की
विहंसा होगा उद्यान कभी मन–आंगन में
अब तो है स्मृति केवल जीवन की भूलों की।
है कुछ–कुछ स्मरण कि प्राची में था जीवन–रवि

वह चमक रहा था पूर्व क्षितिज में तेजवान
पर अब जो आकाशोन्मुख होकर के देखा
तो देखा– प्रायः पूर्ण हुआ है दिवस–यान।

सुन उस प्रभात में मुक्त पंछियों का गायन
सोचा था जीवन होगा मंगल–गायनमय
पर अब, जब आ पहुंची श्यामा संध्या बेला
तो देखा– रुंधे कंठ से निकली एक न लय।

अनमिल असाधना युक्त, दिग्भ्रमित जीवन–क्षण
कट गए यम, नियम, आसन, प्राणायाम–शून्य
श्वासें न सधीं, आसन न जमा, चापल न गया
अस्तित्व रहा विश्वास–शून्य, उपराम–शून्य।

क्या मिला? नहीं कुछ भी तो मिला यहां मुझको
जीवन यह एक मिला था, वह भी खो बैठे
क्या ही विचित्र लीला है किसी खिलाड़ी की
सपनों तक से हाथों को अपने धो बैठे।

कैसे इसको बदला जाए? भगवान शिव आज की विधि में इसी तरफ संकेत करते हैं। कहते हैं, हे देवी! ललाट के मध्य में सूक्ष्म श्वांस प्राण को टिकाओ। जब वह सोने के क्षण में हृदय तक पहुंचेगा तब स्वप्न और मृत्यु दोनों पर अधिकार हो जाएगा। बड़ी अद्भुत और चमत्कारी है यह विधि। यह सोते समय करने के लिए है। अभी तक जो छः विधियां हमने जिसके संबंध में चर्चा की, वे जागते समय करने की थीं। यह विधि सोने के क्षण जब नींद उतर रही है, नींद का अंधकार धीरे–धीरे छाने लगे, उस समय ललाट के मध्य में, आज्ञाचक्र पर ध्यान रखते हुए, श्वासों के अंतराल को देखते हुए, भीतर प्रकाश भरता जाए सहस्रार पर और यह इस भाव में कि नींद के समय में वह हृदय पर बरसेगा। प्रकाश की वर्षा जब हृदय पर होगी तब एक चमत्कार घटेगा। सबसे पहले तो स्वप्न पर तुम्हारा अधिकार हो जाएगा। आदमी कितना नपुंसक है, सपनों पर तक उसका अधिकार नहीं है। सपनों तक से अपने हाथे धो

बैठे। सपनों पर भी हमारा अधिकार नहीं, स्वप्न हम पर आते हैं, थोपे जाते हैं, लादे जाते हैं, प्रकृति के द्वारा हम अपनी मर्जी से एक सपना भी पैदा नहीं कर सकते। हम सपने को भी कोई दिशा नहीं दे सकते, न रोक सकते, न बुला सकते।

जब आज्ञा चक्र पर और श्वांस पर ध्यान करते हुए आप सोएंगे तब धीरे–धीरे सपनों पर आपकी मालकियत शुरू हो जाएगी। अगर आप चाहेंगे कि आज रात सपने में मैं एक गुलाब का फूल देखूं, तो तीन महीने के प्रयोग के भीतर–भीतर आप गुलाब का फूल देखने में सक्षम हो जाएंगे। दूसरी अद्भुत घटना घटेगी जब सपना आप पैदा करने में सक्षम हो जाएंगे, तब सपने में भी होश आ जाएगा। जैसे ही गुलाब का फूल दिखाई देगा, आप चौंकेंगे, जागेंगे। शरीर सोया हुआ पड़ा रह जाएगा और भीतर आप जाग जाएंगे। गुलाब का फूल विदा हो जाएगा। सारे स्वप्न की श्रृंखला टूट जाएगी। शरीर सोया हुआ पड़ा है, करीब–करीब मृतवत, मुर्दे के समान और भीतर चेतना जाग गई। तब अगली घटना घटती है, आपने मृत्यु को देखा और जिसने मृत्यु को देखा, वह निश्चित स्वयं अमृत है। वह साक्षी चेतना जो इस लाश जैसे पड़े हुए शरीर को देख रही है गहन निद्रा में, वह चेतना इस शरीर के पार है, वह देह में है किन्तु वह स्वयं पार्थिव नहीं है। माटी की काया में, माटी के इस दीपक में जो चिन्मय ज्योति जल रही है चेतना की, वह इससे भिन्न और पृथक है। तो सपनों पर जब अधिकार होगा तब मृत्यु पर भी अधिकार हो जाएगा।

आपने सुना होगा बहुत से संत अपनी आसन्न मृत्यु की तिथि बता देते हैं कि 6 महीने बाद फलां–फलां तारीख को वे विदा होंगे। कैसे वे जान लेते हैं? इस संबंध में चर्चा करते हुए ओशो ने कहा, – यदि तुम प्राण को अपने भीतर प्रवाहित होता अनुभव कर सको, तो तुम यह भी जान सकते हो कि कब तुम्हारी मृत्यु होगी? यदि तुम सूक्ष्म श्वांस को, प्राण को महसूस करने लगे तो मरने के छः महीने पहले ही तुम्हें पता लग जाएगा कि मृत्यु आसन्न है। इसी प्रकार योगी अपनी मृत्यु की तिथि बता देते हैं। बड़ा आसान मामला है क्योंकि तुम प्राण के प्रवाह को जान गए, अब तुम उसकी उलटती गति को भी समझ पाओगे। क्योंकि छः माह पूर्व श्वांस की प्रक्रिया उलट जाती है, प्राण तुम्हारे बाहर जाने लगते हैं। जब भीतर जाती हुई श्वांस प्राण तत्व को भीतर नहीं ले जाती; उल्टे बाहर लाने लगती है। जब तुम मृत्यु के करीब होते हो, तब उल्टी प्रक्रिया शुरू हो जाती है। भीतर आने वाली श्वांस प्राणविहीन रिक्त आती है क्योंकि तुम्हारा शरीर अब अस्तित्व से प्राण को ग्रहण करने में असमर्थ होता जा रहा है। तुम मरने वाले हो, अब प्राण तत्व की जरूरत नहीं रही। प्रक्रिया उलट गई, अब बाहर जाने वाली सांस तुम्हारे भीतर के भी प्राण को भी बहा के ले जाती है। इसलिए जिसने सूक्ष्म प्राण को जान लिया वह अपनी मृत्यु का दिन भी तुरंत जान सकता है। करीब–करीब छः माह पहले उसे पता चल जाता है।

विज्ञान भैरव तंत्र का यह सूत्र बहुत महत्त्वपूर्ण है। शिव कहते हैं, हे देवी! ललाट के मध्य में प्राण को टिकाओ जब सोने के क्षण में वह हृदय तक पहुंचेगा, तब स्वप्न और स्वयं मृत्यु पर भी अधिकार हो जाएगा। जब तुम नींद में उतर रहे हो तब इस विधि को साधना, अन्य समय में नहीं। ठीक सोने का समय इस विधि के अभ्यास के लिए उपयुक्त समय है। जैसे सपने को तुम दिशा देने में सफल हो जाओगे, ठीक उसी प्रकार मृत्यु के बाद अगले जन्म को भी तुम दिशा देने में सफल हो सकते हो। तिब्बत में इसके बहुत प्रयोग किए गए हैं। इसे वे कहते हैं, बारदो का प्रयोग। मृत्यु के समय व्यक्ति को सुझाव दिया जाता है। अगला जनम उसे कहां लेना है, कैसे लेना है, किस प्रकार के माता–पिता चुनने हैं ताकि ऐसी परिस्थितियां मिल सकें, जहां पुनः तुम्हारी आध्यात्मिक प्रगति हो सके। अपने अगले जनम की तैयारी इसी जनम में बारदो के प्रयोग द्वारा कर दी जाती है।

महावीर और बुद्ध के बारे में कथाएं हैं कि वे अपने पिछले जनम में ही बता गए थे कि वे कब, किन परिस्थितियों में जन्म लेगे। बुद्ध कह गए थे कि जिस माँ के गर्भ से वे पैदा होंगे वह माँ उन्हें जन्म देने के पश्चात् शीघ्र ही मर जाएगी। उनकी माँ एक वृक्ष के तले खड़ी होंगी जब उनका जनम होगा। अपने पिछले जनम में ही वो बता गए थे। माँ को कैसे–कैसे सपने आएंगे गर्भाधान के पश्चात्, वह पहले ही तय हो गया था। ठीक ऐसी ही कथा महावीर के बारे में भी प्रचलित है। महावीर की माँ ने एक विशेष रूप से सिलसिलेवार क्रम से सपने देखना शुरू कर दिया था। तब महावीर के पिता ने पंडितों को, ज्योतिषियों को बुलाया।

पश्चिम के मनोवैज्ञानिक सोचते हैं कि फ्रायड मनोविश्लेषण का जन्मदाता है। 100 साल पहले पहली बार उसने एनालिसिस शुरू की, ड्रीम एनालिसिस। पश्चिम के लोग भूल में हैं, भारत में कम से कम पिछले पांच हजार सालों से स्वप्न विश्लेषण का ज्ञान है। महावीर की माँ को, बुद्ध की माँ को सपने आए थे, उन सपनों से पहले ही पता चल गया था कि कोई बहुत विराट चेतना आने को है। सपनों पर अधिकार, मृत्यु पर अधिकार, सपनों को दिशा देना, मृत्यु के बाद अगले जनम को दिशा देना, यह सब संभव है। यह विधि अत्यंत महत्त्वपूर्ण विधियों में से एक है। लेकिन इसे सिर्फ सोते समय करना, जागते समय नहीं। सोते समय, दिन में आप श्वांस की अन्य विधियां करना और इसको जोड़ देना रात को सोने के पूर्व। शिथिल होके लेट जाना आराम से, भाव करना, जैसे नींद का अंधेरा छाता जा रहा है, आप डूबते जा रहे हैं नींद में, डूबते जा रहे हैं। ललाट के मध्य में जहां तिलक लगाते हैं वहां ध्यान रखे हुए, श्वांसों के अंतराल को देखते हुए। हर भीतर आती श्वांस प्राण तत्व को भीतर ला रही है, प्रकाश भीतर बढ़ता जा रहा है, सहस्रार प्रकाशित हो उठा है। धीरे–धीरे वह आलोक बरसने लगा, हृदय तक जाने लगा और तब इसी भाव दशा में आप सो जाना। यह नींद

साधारण नींद नहीं होगी। एक तीन महीने का प्रयोग और आप पाएंगे की आप पूरी तरह परिवर्तित हो गए।

पश्चिम के प्रसिद्ध गणितज्ञ दार्शनिक पाइथागोरस जब पहली बार मिश्र के एक मिस्ट्री स्कूल में, एक रहस्य विद्यालय में अध्यात्म का ज्ञान प्राप्त करने गए तो उन लोगों ने यही विधि उन्हें सिखाई। यह मिस्र की विधि भगवान शिव से ही भारत से चलकर मिस्र तक पहुंची थी। पाइथागोरस को तीन माह तक विशेष ढंग से श्वांस, विशेष ढंग से सोना, उपवास ये सब सिखाए गए और तब उनको मिस्ट्री स्कूल में प्रवेश दिया गया। तो आओ आज हम इस विधि को करते हैं, अभी सिर्फ समझने के लिए, वास्तव में आपको इसको सोते समय करना है। तो चार चरणों में हम करेंगे। जैसा–जैसा मैं निर्देश देता हूँ कृपया वैसा करते चलें। पहला चरण– अंगूठा उठाकर करीब छः इंच दूर रख लें। बारी–बारी से दूर और पास देखना है। अंगूठे को देखें और फिर मंच पर लगी ओशो की तस्वीर को देखें। दूर...... पास, दूर......पास, दूर...... पास, दूर...... पास, दूर...... पास। करते जाएं।

अब दूसरा चरण –अपना हाथ नीचे रख लें, विश्राम पूर्ण मुद्रा में। एक मिनट के लिए अधखुली आंखें रखें, आज्ञाचक्र पर ध्यान स्वतः आ जाएगा। इसे कहते हैं नासाग्र दृष्टि! नाक का अगला हिस्सा आपको दिखाई दे। नासाग्र दृष्टि रखें या जमीन पर लगभग ढाई–तीन फीट आगे किसी एक बिंदु को देखें। आंख की पुतली जरा भी न हिले, आंखें बिल्कुल थिर हो जाएं।

तीसरा चरण– शाम्भवी मुद्रा, गर्दन और रीढ़ को सीधा रखते हुए, केवल आंखों को ऊपर उठाएं और छत की तरफ देखें। दोनो आंखों की पुतलियां बिल्कुल स्थिर हो जाएंगी, छत की तरफ देखते हुए और अपनी श्वांस का भी ध्यान रहे। सारी शक्ति आज्ञाचक्र पर ललाट के मध्य में केन्द्रित होने लगी। अंतिम चरण– अब लेट जाएं, शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें, भाव करें आप नींद में डूब रहे हैं, सिर के भीतर एकत्रित हो गए। आलोक बरसने लगा, हृदय की तरफ प्रवाहित होने लगा। भगवान शिव के वचन याद रखते हुए सो जाएं। ललाट के मध्य में प्राण को टिकाएं वह सोने के क्षण में हृदय तक पहुंचेगा, तब हे देवी! स्वप्न और मृत्यु दोनों पर अधिकार हो जाएगा। नींद का स्वागत करें, नींद आ रही है, नींद आ रही है, नींद आ रही है। ललाट के मध्य में ध्यान। नींद आ रही है, नींद आ रही है, नींद आ रही है। अब छोड़ दें, सब छोड़ दें, कुछ भी न करें। अब जो अपने आप हो रहा उसे होने दें।
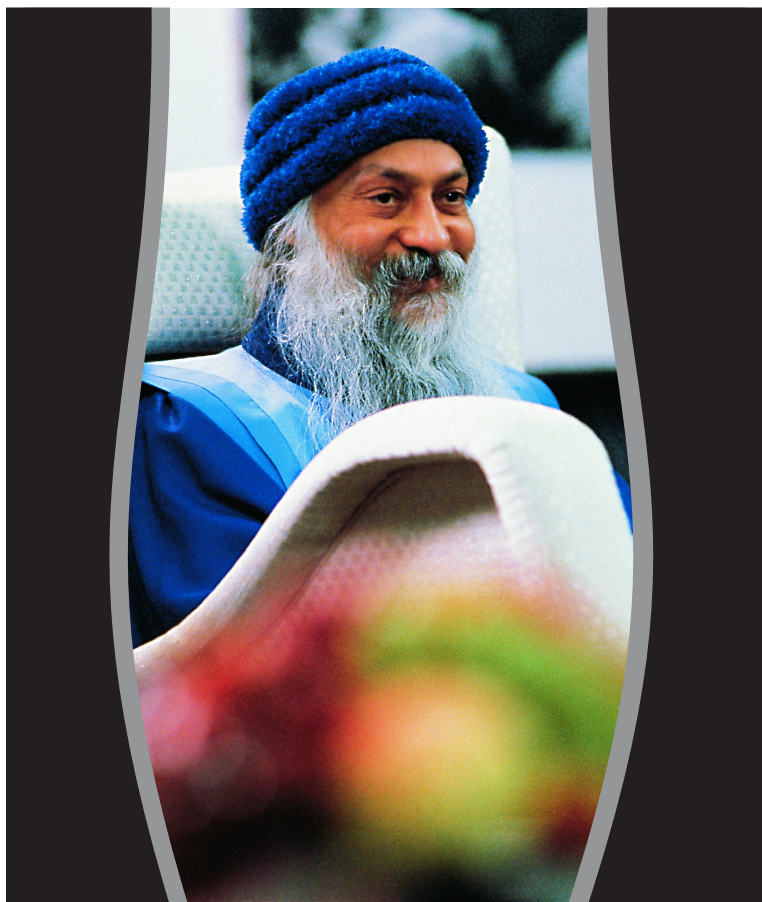
भक्तिपूर्वक श्वास लो–8

आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वास के दो संधि–स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो।

लाए कौन संदेश नए घन! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
अम्बर गर्वित, हो आया नत, चिर निस्पंद हृदय में उसके
उमड़े री पुलकों के सावन! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
चौंकी निद्रित, रजनी अलसित, श्यामल पुलकित कम्पित कर में
दमक उठे विद्युत के कंकण! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
दिशि का चंचल, परिमल अंचल, छिन्न हार से बिखर पड़े सखि
जुगनू के लघु हीरक के कण! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
जड़ जग स्पंदित, निश्चल कम्पित, फूट पड़े अवनी के संचित
सपने मृदुतम अंकुर बन–बन! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
रोया चातक, सकुचाया पिक, मत्त मयूरों ने सूने में

झाड़ियों का दुहराया नर्तन! लाए प्रेम संदेश नए घन!!
सुख–दुख से भर, आया लघु उर, मोती से उजले जलकण से
छाए मेरे विस्मित लोचन! लाए प्रेम संदेश नए घन!!

आज शिव पार्वती से जो कह रहे हैं, वह प्रेम का संदेशा है। नई पुलक, सावन की दामिनी की नई दमक है। प्रेम की वर्षा है। भीगे ह्रदय से सुनना। ये सूत्र मस्तिष्क से, बुद्धि से समझने के लिए नहीं, भाव प्रधान लोगों के लिए है। दुनिया में सहस्त्रों धर्मग्रंथ हैं, लेकिन विज्ञान भैरव तंत्र अद्वितीय है। क्योंकि इसमें गुरु अपनी शिष्या से बात कर रहे हैं। 108 उपनिषद् हैं, उसमें गुरु अपने पुरुष शिष्यों के प्रश्नों का उत्तर दे रहे हैं। विज्ञान भैरव तंत्र एकमात्र ऐसा शास्त्र है जिसमें सवाल पूछा है शिष्या ने, ना केवल शिष्या ने, बल्कि प्रेमिका ने। देवी पार्वती शिव की प्रेयसी हैं इसे भूल नहीं जाना। एक प्रेयसी को दिया गया उत्तर है यह 'विज्ञान भैरव तंत्र'। शिव कहते हैं, हे देवी! आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वांस के दो संधि–स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो। भक्तिपूर्वक श्वांस लो। किसी अन्य शास्त्र में ऐसी बात नहीं आई है। हमेशा से जागरूकतापूर्वक श्वांस लेने को कहा गया है। होशपूर्वक, ध्यानपूर्वक, ध्यान पर केंद्रित होने को कहा गया है। भक्तिपूर्वक! अद्भुत है यह वक्तव्य। क्योंकि कोई अन्य शास्त्र स्त्रियों के लिए नहीं हैं।

विज्ञान भैरव तंत्र एक स्त्री के लिए दिया गया उपदेश है और स्त्रियां जीती हैं ह्रदय के तल से, भाव के तल पर, प्रेम के तल पर। पार्वती ने कोई दार्शनिक सवाल नहीं पूछा है। बड़ा व्यक्तिगत सवाल पूछा है कि हे प्रभु! आप कौन हैं, आपका सत्य क्या है, यह रहस्य मुझे बताने की कृपा करें और शिव जो विधि दे रहे हैं बड़ी गहरी विधि है। श्वांस को भी भक्तिपूर्वक लें। ऐसा समझें तीन प्रकार के लोग दुनिया में हैं। पहला देह–केन्द्रित, दूसरा मन–केन्द्रित और तीसरा–भाव केन्द्रित। एक है शरीर के तल पर जीने वाले, शरीर के क्रियाकाण्ड उनके लिए प्रमुख हैं। उनका धर्म, उनका अध्यात्म भी क्रियाकाण्डों से ही शुरू होगा। दूसरे लोग हैं मस्तिष्क में जीने वाले, विचारों में, तर्कों में जीने वाले। उनके लिए धर्म भी दर्शनशास्त्र की तरह होगा, चिंतन–मनन का विषय होगा। तीसरे तल के लोग हैं ह्रदय में, भाव में, प्रेम में जीने वाले। उनके लिए अध्यात्म भक्ति का मार्ग होगा। प्रेम के चार रूप हैं। भक्ति इसमें सर्वश्रेष्ठ है।

प्रेम का पहला रूप है वात्सल्य भाव, अपने से छोटों के प्रति स्नेह। करुणा का भाव, कोई हमसे पीछे है, कोई हमसे कमजोर है, कोई हमसे छोटा है। बच्चों के प्रति, विद्यार्थियों के प्रति, अपने से छोटों के प्रति कमजोरों के प्रति स्नेह भाव, वात्सल्य भाव। प्रेम का दूसरा रूप है, मित्रता का भाव, दोस्ती का भाव, अपने बराबर वाले के प्रति। पति–पत्नी के बीच,

मित्र–मित्र के बीच, भाई–बहन के बीच, पड़ोसियों के संग बराबरी का प्रेम, उसका नाम है मैत्री भाव। प्रेम का तीसरा रूप है आदर भाव, सम्मान भाव, श्रद्धा भाव। अपने से बड़ों के प्रति, माता–पिता के प्रति, शिक्षकों के प्रति, गुरुजनों के प्रति, किन्हीं को हम अपने से श्रेष्ठतर मान रहे हैं, अपने से उच्चतर मान रहे हैं। उस प्रेम का नाम है श्रद्धा, आदर, सम्मान। और चौथा प्रेम का रूप है भक्ति। वह श्रद्धा से भी आगे है।

कई लोग श्रद्धा को और भक्ति को एक समझ लेते हैं, यहां पर थोड़ी सी भूल हो जाती है। श्रद्धा किसी व्यक्ति के प्रति होती है, भक्ति समष्टि के प्रति होती है। श्रद्धा के कई रूप हैं, कई आकार हैं, कई नाम हैं। भक्ति में अरूप है, निराकार है, अनाम है। सारे अस्तित्व के साथ जब प्रेम हो जाए तो उसका नाम है भक्ति। तो भक्ति और श्रद्धा के भेद को समझना। यदि आप किसी गरु के शिष्य हैं या आप किसी देवी–देवता को पूजते हैं, तो गुरु का नाम है, रूप है, उस देवता का भी नाम है, आकार है, व्यक्तित्व है। कोई भी हो आपका इष्ट देवता, आप उसकी भक्ति नहीं कर सकते हैं। आप उसके प्रति श्रद्धा में हैं। कोई कहता है कि मैं राम का भक्त हूँ कि कृष्ण का भक्त हूँ, कि ईसामसीह का भक्त हूँ, वह गलत शब्द का प्रयोग कर रहा है। उसे कहना चाहिए मैं राम का, कृष्ण का या ईसा का श्रद्धालु हूं। भक्ति तो केवल परमात्मा की ही हो सकती है। उस अरूप और निराकार के प्रति प्रेम, जब सारे जगत के प्रति तुम्हारे हृदय में प्रेम हो, उसका नाम है भक्ति। निश्चित रूप से ऐसे प्रेम में स्वयं का होना भी समाविष्ट होगा। जो व्यक्ति सारे जगत को प्रेम कर रहा है, वह अपने भी शरीर को प्रेम करेगा। वह अपने मन को भी प्रेम करेगा। वह स्वयं के प्रति भी बड़ी कोमल भावनाओं से भरा होगा। वह स्वयं के प्रति कठोर नहीं हो सकता। संत कबीर साहब के वचन सुनो, कहते हैं,

साधो सहज समाधि भली,
गुरु प्रताप जा दिन से लागी दिन–दिन अधिक चली,
जहां–जहां डोलूं सो परिक्रमा, जो कछु करूं सो सेवा,
जब सोबूं तब करूं दण्डवत पूजूं और न देवा।

कहते हैं, अब किसी देवी–देवता की पूजा नहीं करता, मेरी श्रद्धा भक्ति बन गई है। जब सोता हूं, बस वही दण्डवत् नमस्कार है, अलग से कहीं किसी मूर्ति के सामने साष्टांग प्रणाम नहीं करता। जहां–जहां डोलूं सो परिक्रमा, मेरा चलना–फिरना ही परिक्रमा हो गया, अब किसी मंदिर, किसी तीर्थ स्थान जाने की जरूरत न रही। जो कछु करूं सो सेवा, अब मेरे कर्म ही पूजा हो गए हैं, अलग से कोई पूजा और सेवा नहीं करनी पड़ती।

कहों सो नाम सुनूं सो सुमिरन, खाऊं–पिऊं सो पूजा,

गृह उजाड़ एक सम लेखौं भाव मिटाऊं दूजा।

कहते हैं दूजा भाव, द्वैत भाव समाप्त हो गया, अब तो जो खाता हूं वही समझो भगवान को लगाया गया भोग है। किसी पत्थर की मूर्ति को क्या भोग लगाउँगा। जब स्वयं भोजन करते हैं, पानी पीता हूं, वहीं मेरे लिए भोग लगाने के बराबर है। खाऊं–पिऊं सो पूजा। कहों सो नाम, सुनूं सो सुमिरन, अब तो जो मैं कहता हूँ वह हरिकथा ही है, परमात्मा का ही नाम है। अब तो जो बात–चीत लोगों के साथ करता हूँ, परमात्मा से ही बातचीत करता हूं। कबीर कपड़ा बेचने जाते थे बाजार में, ग्राहकों से कहते थे, हे राम! सुनो ये चादर मैंने तुम्हारे लिए बुनीं है। राम नाम रस बींनीं चदरिया, बींनीं रे झींनीं चदरिया। अब तो चादर बुनना भी, जुलाहे का कृत्य भी उनका काम हो गया। बहुत से शिष्यों ने उनसे बारम्बार कहा कि आप यह काम छोड़ दें, आप जुलाहे का काम क्यों करते हैं? हम लोग आपकी आर्थिक रूप से देखभाल करेंगे। कबीर ने कहा कैसे छोड़ दूं, यहीं तो मेरी पूजा है, यहीं तो मेरी सेवा है।

आंख न मूंदूं कान न रोधूं, तनिक कष्ट नहीं धारूं,
खुले नैन पहचानूं, हंसि–हंसि सुंदर रूप निहारूं।

अब तो परमात्मा को ही सर्वत्र निहार रहा हूं। तो याद रखना शिव की यह विधि देवी पार्वती को दी गई, अपनी प्रेमिका को दी हुई विधि है। देवी कोई दार्शनिक नहीं, क्रियाकाण्डों में उनकी उत्सुकता नहीं। बड़े प्रेम से उन्होने प्रश्न पूछा था और एक अद्भुत जवाब भगवान शिव उन्हें देते हैं कि भक्तिपूर्वक श्वांस लो, अपने शरीर को मंदिर समझ के इस श्वांस को भी भक्तिपूर्वक लो। ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, अगर तुम वैज्ञानिक रुझान के नहीं हो, अगर तुम्हारा मन वैज्ञानिक नहीं है, बौद्धिक नहीं है तो तुम इस विधि का प्रयोग करके देख सकते हो। आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वांस के दो संधि–स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जान लो। यदि तुम अपने शरीर को मंदिर मान सको, तो यह विधि तुम्हारे काम आ सकती है। आत्यंतिक भक्तिपूर्वक इसका प्रयोग करो। जब तुम भोजन कर रहे हो इसका प्रयोग करो, यह न सोचो कि भोजन कर रहे हो, यह समझो की परमात्मा ही भोजन कर रहा है। और तब परिवर्तन को देखो, वहीं चीज खा रहे हो लेकिन सब कुछ बदल गया है, तुम परमात्मा को भोजन दे रहे। जब स्नान कर रहे हो, मामूली सा कृत्य है, लेकिन अगर तुम दृष्टि बदल दो, अनुभव करो की तुम परमात्मा को स्नान करा रहे हो। तब यह विधि आसान होगी।

श्वांस लेना भी पूजा का कृत्य बन सकता है। भीतर जाती श्वांस तुम परमात्मा को प्राण ऊर्जा अर्पित कर रहे हो। बाहर जाती श्वांस अहोभाव के साथ जाने दो। श्वांस–श्वांस में धन्यवाद हो जाए। सारे अस्तित्व के साथ एक प्रेम का संबंध निर्मित हो जाए। जरा सोचो हम श्वांस छोड़ते हैं उसे वृक्ष ले लेते हैं, फिर वृक्ष छोड़ते हैं फिर हम ले लेते हैं। यह श्वांस,

आत्मजगत के साथ हमारा संबंध है, परमात्मा का जो रूप बाहर फैला हुआ है, सारे रूपों में उसके साथ हमारा जोड़ है। इसे भक्तिपूर्वक कर सको यदि, तो इससे ज्यादा सरल विधि और कोई नहीं होगी। लेकिन आज का आधुनिक मनुष्य प्रेम से बिल्कुल शून्य और रिक्त हो गया है। किसी कवि ने लिखा है--

स्नेह निर्झर बह गया है, रेत मन सा रह गया है।

मन बिल्कुल रेगिस्तान है। विचारों की रेत, ज्ञान की रेत, वह प्रेम का निर्झर अब नहीं मन, रूखा-सूखा रेगिस्तान है।

स्नेह निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है
आम की यह डाल जो सूखी दिखी
कह रही है- अब यहां पिक या शिखी
नहीं आते; पंक्ति मैं हूं अनलिखी
जिसका अर्थ-जीवन ढह गया है
स्नेह निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है
दिए हैं मैंने जगत को फूल फल
किया है अपनी प्रभा से चकित चल
पर अनश्वर था सकल पल्लवित पल
ठाठ जीवन का वही जो ढह गया है
स्नेह निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है
अब नहीं आतीं पुलिन पर प्रियतमा
श्याम तृण पर बैठने को निरुपमा
बह रही है हृदय पर केवल अमा
मैं अलक्षित हूं यही कवि कह गया है
स्नेह निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है

जिनके हृदय सूख गए हैं, प्रेम का झरना जहां नहीं बहता, उनके लिए यह विधि नहीं है।

जिनके जीवन में अभी–भी प्रेम बाकी है, श्रद्धा, वात्सल्य भाव और सर्वोपरि भक्तिभाव है, वही इस विधि में डूब सकते हैं। अपनी देह को मंदिर मानकर, अपनी चेतना को परमात्मा जानकर, अपनी श्वांस को पूजा जानकर, आओ इस विधि को करने के लिए हम बैठें। आज की विधि स्त्रैण चित्त वाले साधकों के लिए विशेषकर साधिकाओं के लिए बहुत उपयोगी है। नमाज आसन में बैठकर सबसे पहले परमगरुरू ओशो को प्रणाम करें। उनकी अदृश्य मौजूदगी को अनुभव करें। धीमी गहरी श्वांस लें, भीतर जाती श्वांस के साथ हल्के से कंधों को ऊपर उठाएं। छूटती श्वांसों के साथ कंधों को विश्राम में छोड़ दें। भाव करें हर श्वांस के साथ आपका हृदय फैल रहा है। भाव करें आप प्यारे सद्‌गुरु ओशो के सम्मुख ही बैठे हैं। श्रद्धा भाव से भरें, श्रद्धा के बाद भक्ति में जाना बहुत आसान होगा। अब दोनों हाथ जोड़कर ओशोमंत्र के माध्यम से अपने अहोभाव गुरु के प्रति समर्पित करें। आकाश की ओर अपने हाथ उठाकर भीतर श्वांस लें। फिर नमस्कार की मुद्रा में हाथ जोड़ते हुए सांस को बाहर छोड़ें। बारी–बारी से हाथ ऊपर–नीचे करें। भक्ति भाव से भरें। श्वांस के संधिस्थल के प्रति जागरूक बनें। जागरूकता भी, प्रेमपूर्ण जागरूकता, रूखी–सूखी नहीं, भाव से भरी जागरूकता।

शरीर की क्रिया गौण है, हृदय का भाव प्रमुख है। प्रेमपूर्वक श्वांस लें और श्वांस लेने वाले के प्रति, ज्ञाता के प्रति भी होश रखें। यह कौन है जो श्वांस को देख रहा है। अब सारी क्रिया छोड़ दें। देह के तल से, मन के तल से, बिल्कुल भीतर प्रवेश कर जाएं। तंत्र सूत्र की आठवीं विधि में भगवान शिव कहते हैं, भवानी से, हे देवी! आत्यंतिक भक्तिपूर्वक श्वांस के संधि स्थलों पर केन्द्रित होकर ज्ञाता को जानो, स्वयं को पहचान लो। बाह्य क्रिया छोड़ दें, श्वांस पर नियंत्रण भी छोड़ दें, कुछ भी न करें। सहज स्वाभविक श्वांस, उसके संधि स्थल के प्रति भक्तिभावपूर्ण जागरूकता और आत्मज्ञान फलित हो जाएगा।

ओशो शरणं गच्छामि!

मृतवत लेटे रहो–9

मृतवत लेटे रहो। क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो। या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो। या कुछ चूसो और चूसना ही बन जाओ।

आज श्वांस की अंतिम विधि शिव पार्वती को दे रहे हैं। इस एक विधि में चार बातें कह रहे हैं, चारों शरीर से संबंधित हैं। आठवीं विधि में भक्तिभाव की बात थी, हृदयवान लोगों के लिए थीं। यह अंतिम विधि देह–केन्द्रित लोगों के लिए है। कहते हैं भगवान शिव, मृतवत लेटे रहो या क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो या पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो या कुछ चूसो और चूसना ही बन जाओ। शरीर की क्रियाओं का उपयोग करो, निष्क्रिय जागरूकता में जाने के लिए। ये चारों ही विधियां बड़े काम की होंगीं। समझना! मृतवत लेटे रहो, जैसे शरीर एक लाश की भांति पड़ा हो। महर्षि रमण इसी विधि के द्वारा आत्मज्ञान को उपलब्ध हुए। छोटे बच्चे थे, 15–16 साल उम्र थी। घर में किसी की मृत्यु हो गई, सब लोग तो रोने–धोने में लगे थे, अर्थी को मरघट ले जाने की तैयारी कर रहे थे। रमण ऊपर की मंजिल पर गए। उन्हें ख्याल आया कि यह मृत्यु क्या होती है? यह आदमी कैसे मर गया? वे जमीन पर लेट गए। जैसा उन्होंने लाश को देखा था, ठीक उसकी नकल उन्होंने की। शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दिया, मुर्दे के समान, हाथ–पैर हिलने–डुलने भी बंद हो गए। वे इसी भाव में डूबते गए कि मैं भी मौत को जानूं, मौत क्या होती है? कोई दो घंटे वे उसी अवस्था में पड़े रहे, मुर्दे के समान... और बस यह छोटी सी तरकीब काम कर गई। दो घंटे बाद जब रमण उस अवस्था से वापस लौटे तो वे रमण नहीं थे, वे महर्षि रमण होकर वापस लौटे। उन्होंने स्वयं को जान लिया।

दूसरी विधि शिव कह रहे हैं, क्रोध से क्षुब्ध होकर उसमें ठहरे रहो। हमारा मन बहुत चंचल है। वह किसी भी भावदशा में ठहरता नहीं है। न हम प्रेम में ठहरते हैं, न क्रोध में, न हम घृणा में ठहरते हैं, न करुणा में। हमारा मन बंदर की भांति छलांग लगाता है, एक जगह से दूसरी जगह। शिव कह रहे हैं पार्वती से कि रुक जाओ, जिस समय जो भाव है, उसी में। याद रखना क्रोध का तो सिर्फ उदाहरण है, किसी भी भावदशा में– चाहे वह प्रेम का क्षण हो, चाहे घृणा से भरे हो या करुणा से भरे हो या चिंतित हो, तो चिंता में ही डूब जाओ, निकलने की कोशिश न करो। हमारा मन हमेशा परिस्थिति को बदलने की कोशिश में रहता है और तब हम स्वयं को नहीं जान पाते। उस परिस्थिति या मनःस्थिति में उलझ जाते हैं और आत्मा से चूक जाते हैं। यह विधि बड़ी अद्भुत है। जो भी भावदशा या मनोदशा है, उससे बचने की कोशिश न करो, शुभ–अशुभ का भी ख्याल न करो। हिम्मत के साथ रुक जाओ। लेकिन हमारे भीतर हिम्मत और साहस तो जैसे है ही नहीं! शुभ करने का भी साहस नहीं है, अशुभ करने का भी साहस नहीं है। और तंत्र की दृष्टि में शुभ–अशुभ की कोई कीमत नहीं।

मैंने सुना है, एक पादरी स्कूल में बच्चों को समझा रहा था, मॉरल करेज के बारे में, नैतिक साहस के बारे में। उसने एक उदाहरण दिया कि समझो 30 बच्चे हैं, पिकनिक पर गए हैं। कड़कड़ाती ठण्ड है। दिन–भर के थके–मांदे, रात्रि का भोजन करके, 29 बच्चे तो कंबल ओढ़कर सो गए, एक बच्चा कोने में बैठ गया, प्रार्थना करने। रात की प्रार्थना उसने पूरी की, फिर सोया। ये है मॉरल करेज, नैतिक साहस। वह पादरी एक महीने बाद फिर उस स्कूल में आया। उसने बच्चों से पूछा, 'मॉरल करेज क्या होता है? किसी उदाहरण से समझाओ।' एक बच्चे ने कहा, ऐसा समझिए कि आपके जैसे 30 पादरी थे, पिकनिक पर गए, कड़कड़ाती ठण्ड, दिनभर के थके–मांदे, भोजन करके 29 पादरी तो प्रार्थना करने बैठ गए और एक पादरी शान के साथ, मजे के साथ कंबल तानकर सो गया, ये है मॉरल करेज, ये है नैतिक साहस! हमने साहस बिल्कुल खो दिया है। शिव कह रहे हैं, जिन भावनाओं को गलत कहा जाता है या सही कहा जाता है, उनकी चिंता न करो। उसमें तुम रुक जाओ, ठहर जाओ। तुम्हारा ठहरना ही तुम्हें मन के पार अपनी आत्मा का दर्शन करा देगा।

तीसरी विधि कह रहे हैं कि पुतलियों को घुमाए बिना एकटक घूरते रहो। आपने मेहर बाबा का नाम सुना होगा, अद्भुत संत हुए पिछली सदी में, महर्षि रमण की ही कोटि के, उन्होंने इस विधि का प्रयोग किया था। वे घंटों–घंटों आंखें खोलकर पड़े रहते अपने बिस्तर पर और छत की ओर घूरते रहते। पुतलियां बिल्कुल स्थिर हो जातीं, कोई हलन–चलन नहीं। अद्भुत है यह विधि! सुनने में लगता है कि इन छोटी–छोटी विधियों से क्या होगा? लेकिन तुम करके देखो। अगर तीन मिनट के लिए भी तुम्हारी पुतली न हिले तो भीतर तुम्हारे निर्विचार अवस्था उपलब्ध हो जाएगी, भीतर मौन छा जाएगा। मेहर बाबा लगभग तीन साल तक इस विधि का

प्रयोग करते रहे और उसका परिणाम यह हुआ कि उनके भीतर गहन सन्नाटा छा गया, विचारों की श्रृंखला ही टूट गई और उस निर्विचार जागरूकता में उन्होंने स्वयं को जान लिया। परमज्ञान उपलब्ध हो गया। छोटी–छोटी विधियां हैं, लेकिन छोटी नहीं हैं। और ये तो सिर्फ उदाहरण हैं। इसी प्रकार किसी भी क्रिया के साथ कर सकते हो।

अंतिम विधि कह रहे हैं शिव– कुछ चूसो और चूसना ही बन जाओ। चूसने की जगह तुम और भी कुछ कर सकते हो। चल रहे हो, चलना बन जाओ, दौड़ रहे हो, दौड़ना बन जाओ, कि चाय पी रहे हो कि पानी पी रहे हो कि भोजन कर रहे हो, उस समय सिर्फ उसी क्रिया में संपूर्णता से संलग्न हो जाओ। सवाल तुम्हारी टोटलिटी का है, समग्रता का है। जिस कार्य को भी तुम पूर्णता से डूबकर कर पाओगे, वही विधि तुम्हारे लिए काम की हो जाएगी। चूसना इसलिए चुना गया है क्योंकि चूसना पहला कृत्य है, जो छोटा बच्चा जन्म के बाद करता है। बहुत लोग दुनिया में इतना सिगरेट पीते हैं, बीड़ी पीते हैं, धूम्रपान करते हैं, गुटखा गुड़गुड़ाते हैं, मनोवैज्ञानिक इसकी खोज करते हैं कि इसका कारण क्या होगा? कारण यही है कि बचपन में शायद माँ का दूध ठीक से नहीं पी पाए, स्तनपान की कमी रह गई और उनके मन में वह आकर्षण आज भी मौजूद है। बड़े हो गए फिर भी छोटे बच्चे की भांति स्तन के प्रति एक पागलपन, एक आकर्षण है और फिर ये सिगरेट पीते हैं, ये सिगरेट परिपूरक है। वह गरम धुआं जब भीतर जा रहा है, वह ठीक वैसा ही लग रहा है, जैसा दूध पीते हुए कुनकुना दूध भीतर जाता है। सिगरेट को छुड़ाना बड़ा कठिन है क्योंकि यह एक परिपूरक का काम कर रहा है। छोटे बच्चे को आपने देखा होगा। अकसर अपना ही अंगूठा चूसने लगते हैं। माँ का स्तन नहीं मिला, अपने अंगूठे से ही काम चलाने लगे। यही बच्चे बड़े होकर धूम्रपान करेंगे।

ओशो ने वर्णन किया है कि एक युवक उनके पास आया, जो सिगरेट पीने की लत से परेशान था। ओशो ने विज्ञान भैरव तंत्र की यह विधि उसे करने को दी। उसने वह विधि की। थोड़े दिन बाद उसने लौट कर बताया कि उसके क्या परिणाम हुए। ओशो ने स्वयं इसका प्रवचन में वर्णन किया है। उसने चूसना शुरू किया। तीन दिन के अंदर वह इतनी तेजी से, पागलपन के साथ चूसने लगा कि वह बिल्कुल मंत्रमुग्ध सा हो गया, वह एक जाप जैसा बन गया। उसने मुझसे आकर कहा कि बहुत मजा आ रहा है। सारा दिन मैं चूसता ही रहता हूं और इतना सुंदर लगता है, ऐसी गहरी शांति मेरे मन में पैदा हो रही है, जिसका कोई हिसाब नहीं। तीन महीने के भीतर–भीतर उसका चूसना एक मौन मुद्रा बन गया। अब बाहरी ओंठों से तो नहीं समझ सकते थे कि वह कुछ कर रहा है, लेकिन अंदर ही अंदर वह चूस रहा था। सारे समय वह चूसता ही रहता। चूसना उसके लिए अजपा जाप बन गया।

तीन महीने बाद उसने मुझसे कहा, बहुत कुछ अनूठा मेरे साथ घट रहा है। निरंतर एक मीठा सा द्रव सिर से मेरी जीभ पर बरसता रहता है, अद्भुत स्वाद है उसमें! हल्की मिठास और

इतना शक्तिदायक है वह कि अब मुझे किसी भोजन पानी की जरूरत नहीं रही। मेरी भूख–प्यास लगभग समाप्त हो गई है। नाममात्र को, औपचारिक रूप से भोजन ले लेता हूँ ताकि परिवार वाले समस्या न खड़ी कर दें, इसलिए कुछ खा लेता हूँ, पी लेता हूँ। लेकिन भीतर से ही मुझे शक्ति मिल रही है। कुछ बहुत मीठा और जीवनदायी मेरी जीभ पर बरस रहा है। मैंने उसे यह विधि और जारी रखने को कहा। छः महीने बाद वह एक दिन नाचता हुआ मेरे पास आया, पागल जैसा, दीवाना और बोला चूसना तो समाप्त हो गया, किंतु मैं अब दूसरा ही आदमी बन गया हूँ। अब मैं वही नहीं हूँ, जो आपके पास आया था। एक छोटी सी समस्या लेकर आया था, सिगरेट छोड़ने की। आपने तो मुझे एक नया जन्म ही दे दिया! अब मेरे भीतर कोई आकांक्षा नहीं है, कोई कामना नहीं है, मैं कुछ भी नहीं चाहता, न परमात्मा, न मोक्ष। अब तो जो जीवन है, जैसा है, ठीक है। उसे पूर्णता से स्वीकारता हूँ और परम आनंदित हूँ। इसे प्रयोग में लाओ, किसी चीज को चूसो और चूसना ही बन जाओ। यह बहुतों के लिए उपयोगी होगा। तो आज की ये विधियां विशेष–विशेष प्रकार की श्वांस व्यवस्थाएं पैदा करेंगी। जब तुम चूसोगे एक खास प्रकार की श्वांस होगी, जब क्रोध में ठहर जाओगे, श्वांस की विधि, श्वांस का पैटर्न अलग ढंग का होगा। जब मुर्दे के समान लेट जाओगे, श्वांस अत्यंत धीमी, लगभग नहीं के बराबर हो जाएगी। तो आओ चार चरणों में आज हम इस प्रयोग को करते हैं।

पहला चरण– सबसे पहले गुस्से का अभिनय करेंगे, आधा मिनट के लिए या एक मिनट के लिए बिल्कुल क्रोध में पागल हो जाएं, एक्टिंग करें गुस्से की। अब रुक जाएं।

दूसरा चरण– इस क्षुब्ध अवस्था में ठहर जाएं। देखें अपनी श्वांस को, कैसी चल रही है। आंख बंद करके कल्पना करें कि आप छोटे बच्चे हैं, अपनी माँ का स्तनपान कर रहे हैं। चूसना ही बन जाएं समग्रता से। अब इसी अवस्था में ठहर जाएं। पत्थर की मूर्ति के समान हो जाएं।

तीसरा चरण– एकटक घूरते रहें, घूरते रहें और घूरते–घूरते देखें भीतर विचारों की गति रुक गई। पुतलियां ही नहीं ठहरीं, मन भी ठहर गया, मन मौन हो गया।

चौथा चरण– अब मुर्दे के समान लेट जाएं, भीतर सन्नाटा छा गया, शांति ही शांति है। सब शिथिल हो गया, एक–एक अंग शिथिल हो गया। क्रोध का पागलपन आया था, चला गया, उससे मुक्ति मिली। चूसने की बचकानी हरकत, उससे छुटकारा हुआ। वह तूफान गुजर गया, पीछे रह गई शांति ही शांति। जैसे बाहर पुतलियां थिर हो गई थीं, देखें, भीतर भी कुछ थिर हो गया, सब कुछ थिर हो गया। शांति ही शांति, सन्नाटा ही सन्नाटा। शेष रह गए केवल आप। सारी क्रियाएं खो गईं, केवल आपका होना है, अपने होने के प्रति जागरूक, यही ध्यान है; स्वयं को जानना ध्यान है, आत्मज्ञान ही ध्यान है।

प्रेम को नित्य जीवन मानो–10

प्रिय देवी, प्रेम किए जाने के क्षण में प्रेम में ऐसे प्रवेश करो जैसे कि वह नित्य जीवन हो।

सूफी फकीर बायजीद के पास एक आदमी आया और कहने लगा कि मैं परमात्मा की खोज में हूँ, मुझे मार्गदर्शन दें। उसके पूछने का ढंग, उसका खड़ा होना, उसकी शकल सूरत... लगता था बिल्कुल पाषाण हृदय है। बायजीद ने गौर से उसकी तरफ देखा और पूछा क्या तुमने कभी किसी को प्रेम किया है? उस आदमी ने कहा– कभी नहीं। मैं एक आध्यात्मिक आदमी हूं, मैं केवल प्रभु से प्रेम करना चाहता हूं, बस! बायजीद ने फिर कहा, भूलचूक से कभी किसी के प्रति प्रेमपूर्ण हुए हो? उस आदमी ने कहा कि बार–बार वही सवाल क्यों पूछते हैं? मैं संसार में किसी को प्रेम नहीं करता, मैं धार्मिक आदमी हूं, केवल परमात्मा से प्रेम करना चाहता हूं। बायजीद की आंखों में आंसू आ गए। बायजीद ने कहा, क्षमा करो, मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर पाऊंगा, मैं तुम्हें मार्गदर्शन नहीं दे पाऊंगा। तुम्हारे भीतर बीज ही नहीं है, फूल कहां से पैदा होगा? प्रेम तो बीज है, ध्यान और समाधि उसके फूल हैं, बुद्धत्व उसकी सुगंध है। तुम्हारे भीतर अगर प्रेम नहीं, तो ध्यान भी घटित न हो सकेगा, बहुत मुश्किल है। प्रेम का रूपान्तरण ही प्रार्थना बनता है। प्रेम ही एक दिन

परमात्मा बनता है। प्रेम की आंख से देखा गया जगत परमात्मा है। परमात्मा संसार से भिन्न कोई अलग तत्व नहीं है। बिना प्रेम के देखा गया परमात्मा संसार है और प्रेम की आंख से देखा गया संसार ही परमात्मा है। संत खुसरो साहब ने कहा है–

खुसरो पाती प्रेम की बिरला बांचे कोय,

वेद पुराण पोथी पढ़े प्रेम बिना का होय।

अमीर खुसरो साहब का एक दूसरा वचन है–

खुसरो दरिया प्रेम का उल्टी वा की धार,

जो उबरा सो डूब गया जो डूबा सो पार।

जो प्रेम में डूबा, वह पार हो जाता है और जिन्होंने प्रेम से अपनेआप को बचाया, जो किनारे बैठे रहे, नहीं डूबे प्रेम के दरिया में, वे एक दिन बहुत पछताएंगे। वे इस जीवन के पार भी न जा सकेंगे, जहां डूबने वाले पार हो जाते हैं।

खुदा हमको ऐसी खुदाई न दे

कि अपने सिवा कुछ दिखाई न दे।

वह जो अहंकार है, खुदाई है, वह केवल अपने स्वार्थ को देखती है। प्रेम में पहली बार हमारा अहंकार गलता है, पिघलता है, पहली बार परमात्मा की तरफ हमारे चरण उठते हैं। कबीर साहब ने कहा है–

पोथी पढ़–पढ़ जग मुआ पंडित भया न कोय,

ढाई आखर प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।

ये ढाई आखर ध्यान के और ढाई आखर प्रेम के। ओशो से कोई पूछता है कि आपकी धर्म देशना के मुख्य तत्व क्या हैं? ओशो कहते हैं दो शब्द, प्रेम और ध्यान। बस इन दो को समझ लो तो सारी बात आ गई। विज्ञान भैरव तंत्र में पीछे हमने नौ प्रकार की ध्यान विधियों की चर्चा की जो श्वांस से संबंधित थीं। अब शिथिल होने की विधियां शुरू होती हैं।

भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– प्रिय देवी! प्रेम किए जाने के क्षण में प्रेम में ऐसे प्रवेश करो जैसे कि वह नित्य जीवन हो। शिव प्रेम से शुरू करते हैं। शिथिल होने की पहली विधि प्रेम संबंधित है क्योंकि तुम्हारे शिथिल होने के अनुभव में प्रेम का अनुभव निकटतम है। अगर तुम प्रेम नहीं कर सकते तो शिथिल भी नहीं हो सकते और अगर शिथिल नहीं हो सकते तब तुम्हारा जीवन प्रेमपूर्ण नहीं हो सकता। एक तनावग्रस्त आदमी कहीं प्रेम नहीं कर सकता

क्योंकि तनावग्रस्त आदमी सदा उद्देश्य से, प्रयोजन से जीता है। वह धन कमा सकता है, राजनीति कर सकता है किन्तु प्रेम नहीं कर सकता, क्योंकि प्रेम प्रयोजन रहित है। प्रेम कोई वस्तु नहीं है, तुम उसका संग्रह नहीं कर सकते, तुम उसे बैंक खाते में जमा नहीं कर सकते, तुम उससे अपने अहंकार की पुष्टि नहीं कर सकते।

सच तो यह है कि प्रेम सबसे अर्थहीन काम है, उसका कोई अर्थ नहीं, उसका कोई प्रयोजन नहीं। प्रेम अपनेआप में जीता है, किसी अन्य चीज के लिए नहीं। तुम धन कमाते हो किसी उद्देश्य से, धन मात्र एक साधन है। तुम मकान बनाते हो रहने के लिए, वह भी एक साधन है। किन्तु प्रेम साधन नहीं। तुम प्रेम क्यों करते हो, किसलिए करते हो? प्रेम स्वयं अपनेआप में लक्ष्य है। यही कारण है कि हिसाब-किताब रखने वाला मन, तार्किक मन, प्रयोजन के बारे में सोचने वाला मन, प्रेम नहीं कर सकता और जो प्रयोजन की भाषा में सोचता है, वह हमेशा तनावग्रस्त रहेगा क्योंकि प्रयोजन भविष्य में ही पूरा हो सकता है। भविष्य तनाव पैदा करता है। प्रेम सदा अभी और यहां है। प्रेम वर्तमान में है और यही वजह है कि प्रेम और ध्यान इतने करीब हैं। प्रेम से ज्यादा उपयोगी कोई और बात नहीं हो सकती ध्यान में डुबाने वाली। इसलिए सौभाग्यशाली हो अगर तुम्हारे हृदय में प्रेम के फूल खिलते हैं, जल्दी ही ध्यान की सुगंध भी उग सकेगी और थोड़ा सा ही रूपान्तरण करना होगा। एक सुंदर गीत मैं पढ़ रहा था।

बह गया मैं भावनाओं में कोई ऐसा मिला,
फिर महक आई हवाओं में कोई ऐसा मिला।
खो के पाना, पा के खोना खेल जैसा हो गया,
लुत्फ जीने की सजाओं में कोई ऐसा मिला।
खो गए थे जो मेरे, वो सारे सुर वापस मिले,
एक सुर उसकी सदाओं में कोई ऐसा मिला।
हमको बीमारी भली लगने लगी ऐसा हुआ,
दर्द मीठा सा दवाओं में कोई ऐसा मिला।
रेत में भी बीज बो देने का मन होने लगा,
मेघ आशा का घटाओं में कोई ऐसा मिला।

जब प्रेम बदली तुम्हारे जीवन में छाती है तो आशा अंकुरित होती है, पहली बार जीवन

रसधार बरसती है। विज्ञान भैरव तंत्र की दसवीं विधि में शिव कहते हैं, पार्वती से– हे देवी! प्रेम के क्षण में ऐसे डूबो जैसे वही नित्य जीवन हो। यह नित्य शब्द समझने जैसा है। सामान्यतः हम समय को तीन हिस्सों में बांटते हैं, भूत, वर्तमान और भविष्य। लेकिन प्रेम का क्षण न तो कोई भूत होता है, न वर्तमान, न भविष्य होता है। भविष्य की कामनाएं विदा हो जाती हैं, अतीत की स्मृतियां पुंछ जाती हैं। प्रेम के क्षण में व्यक्ति शुद्ध वर्तमान में आ जाता है। किन्तु सवाल यह है कि ये तीनों शब्द आपस में सापेक्ष हैं, जहां भूत और भविष्य नहीं, वहां इस क्षण को फिर वर्तमान कहने का क्या औचित्य रहा, वह वर्तमान भी नहीं। इसलिए भगवान शिव उसे कहते हैं, नित्य जीवन, शाश्वत। वर्तमान का क्षण द्वार बन जाता है शाश्वत में प्रवेश का, सनातन में प्रवेश का।

वर्तमान का छोटा सा क्षण, प्रेम उसका द्वार खोलता है और अनंतता, शाश्वतता उपलब्ध हो जाती है और इसलिए प्रेम के क्षण में शिथिलता घटित होती है, ध्यान घटित होता है। प्रकृति के द्वारा दिया गया अनुपम उपहार है प्रेम, जिसमें ध्यान स्वाभाविक रूप से, अपने आप घटित होता है। यदि हमें थोड़ी सी समझ आ जाए तो इसी प्रेम में हम और गहरी डुबकी मार सकते हैं। तब प्रेम के क्षण, क्षण नहीं रहेंगे। सामान्यतः मुहावरा है 'प्रेम के क्षण'। प्रेम के घंटे नहीं होते, प्रेम के दिन नहीं होते, प्रेम के सप्ताह नहीं होते। हमारा मन, प्रयोजन वाला मन, तनाव वाला मन, भविष्य वाला मन, फिर हम पर हावी हो जाता है। क्षणिक रूप से हम शिथिल होते हैं प्रेम में, फिर हमारा अहंकार वापस लौट आता है। काश हम प्रेम में डूबना सीख जाएं! तब किसी मंदिर–मस्जिद जाने की जरूरत नहीं, तब किन्हीं पोथियों, शास्त्रों को पढ़ने की जरूरत नहीं। प्रेम अपने आप में पर्याप्त है, वह परमात्मा का द्वार खोल सकता है।

लेकिन तथाकथित बुद्धिमान लोग तो कहते हैं प्रेम अंधा होता है। निश्चित ही उन तर्कशील लोगों के लिए, धन कमाने वाले महत्वाकांक्षियों के लिए, राजनीतिज्ञों के लिए प्रेम अंधा होता है। लेकिन जो ज्ञानी हैं वे कहेंगे प्रेम ही एकमात्र असली आंख है। प्रेम साधन नहीं, साध्य है। प्रेम अहंकार को पुष्ट करने वाला नहीं, अहंकार को गलाने वाला है। और इसलिए प्रेम ही प्रार्थना का प्रथम रूप है। जिसने प्रेम को जाना एक व्यक्ति के प्रति, एक दिन वह प्रार्थना भी जान सकेगा। प्रार्थना का अर्थ है समस्त जगत के प्रति प्रेम। जिसने एक को भी प्रेम न किया, वो सारे जगत को कैसे प्रेम कर सकेगा? जीसस क्राइस्ट कहते हैं– परमात्मा प्रेम है। ओशो इस बात को और आगे ले जाते हैं। वे कहते हैं प्रेम ही परमात्मा है। इन दोनों में एक छोटा सा भेद है। जब ईसामसीह कहते हैं, परमात्मा प्रेम है, तो वे कह रहे हैं परमात्मा के कई गुणवत्ताएं हैं, कई आयाम हैं, उसमें एक प्रेम है। और जब ओशो कह रहे हैं प्रेम ही परमात्मा है तब उन्होंने प्रेम को और ज्यादा महत्ता दी, और ज्यादा महत्व दिया।

धन्यभागी हो अगर प्रेम कर सको, फिर कोई अन्य विधियां तुम्हारे लिए जरूरी नहीं।

प्रेम आपने आप में पर्याप्त है। लेकिन आज का बौद्धिक मन, विशेषकर आज का आधुनिक, शिक्षित मन, शहरों में रहने वाले लोग, प्रेम को जैसे भूल ही गए हैं। प्रेम के नाम पर कुछ और ही चल रहा है।... वासना का खेल। वह प्रेम नहीं। याद रखना मैं वासना के खिलाफ नहीं हूं। ऐसा समझो जैसे कीचड़ में कमल खिलते हैं, ठीक वैसे ही कामना के कीचड़ में प्रेम के फूल खिलते हैं। तो कामना को भी मैं स्वीकरता हूं। उसकी कोई निंदा नहीं, उसका भी सम्मान है, लेकिन कीचड़ अपने आप में पर्याप्त नहीं, फूल तो खिलना चाहिए। तो ऐसा समझना, कामना है कीचड़, प्रेम है फूल, ध्यान और समाधि हैं उसकी सुगंध। तो कामना की निंदा नहीं है लेकिन रुकावट की जरूर निंदा है। कीचड़ अगर कीचड़ ही रह जाए और कमल न बन पाए तो यह जरूर निंदनीय है। फूल अगर फूल ही रह जाए और उससे सुगंध न उठे यह जरूर निंदनीय है। तो चीजों को उसकी पूर्णता पर जाने दो, विकसित होने दो। धर्म यानी आत्मविकास।

आओ, विज्ञान भैरव तंत्र की 10वीं विधि करने के पहले हम थोड़ा अपनी ऊर्जा को जगाएं, प्राणायाम के द्वारा। फिर वह ऊर्जा प्रेम बनकर प्रवाहित हो सकेगी। तो बारी–बारी से बाईं और दाहिनी नाक से अर्द्धभस्त्रिका प्राणायाम करें। एक नाक बंद कर लें। बाईं तरफ से शुरू करें। बाईं नाक से श्वांस लें... और बाईं नाक से ही श्वांस छोड़ें .....अब दाईं नाक से श्वांस लें....और दाईं नाक से ही श्वांस छोड़ें। अब श्वांस पर नियंत्रण छोड़ दें। अपने निकट खड़े मित्र का हाथ अपने हाथों में लें। भाव करें कि प्राणायाम के द्वारा जागी हुई ऊर्जा प्रेम के रूप में आपकी आंखों से और आपकी हथेलियों से बह रही है, प्रेम ऊर्जा का प्रवाह हो रहा है। प्रेम को ग्रहण करें, प्रेम को बांटे, प्रेम को ही शाश्वत जीवन जाने। प्रेम के आदान–प्रदान में प्रसन्न हों। प्यार भरी नजरों से अपने मित्र को देखें, नाचें, गाएं, झूमें। अब आंख बंद कर लें। भाव करें यह सारा जगत परमात्मा की प्रगट देह है। अपने मित्र को नमस्कार करें। हाथ जोड़ लें, आपका मित्र भी प्रभु का ही प्रतिनिधि है, उसका ही प्रगट रूप है और प्रेम ही पूजा है। ईसा मसीह कहते हैं, परमात्मा प्रेम है। ओशो कहते हैं प्रेम ही परमात्मा है। यह जगत प्रेम का उत्सव है। प्रेम में डूबें। अब अपने मित्र का हाथ पकड़ कर शांतिपूर्वक बैठ जाएं, शिथिल हो जाएं। प्रेम भाव में मगन हो जाएं। भगवान शिव का वचन याद रखें। प्रेम के क्षण में ऐसे प्रवेश करो, जैसे की वह नित्य जीवन है, यही शाश्वत जीवन है। डूबें, प्रेम भाव में डूबें, गहरे और गहरे, और गहरे प्रेम भाव में डूबें, यही शाश्वत जीवन है। प्रेम ही परमात्मा है।

ओम नमः शिवाय!

इंद्रियों को बंद कर लो–11

चींटी के रेंगने की अनुभूति हो तो इंद्रियों के द्वार बंद कर दो।

यह विधि सरल दिखती है लेकिन है नहीं। चींटी केवल एक उदाहरण है, कोई भी संवेदना जैसे पैर में कांटा गड़ा, या सिरदर्द या चोट, घाव, भूख जैसी संवेदनाओं का उपयोग कर सकते है।

दरीचां बेसदा कोई नहीं है, अगरचें बोलता कोई नहीं है।
खुली हैं खिड़कियां हर घर की लेकिन,
गली में झांकता कोई नहीं है।
मैं ऐसे जमघटे में खो गया हूं, जहां मेरे सिवा कोई नहीं है।
रुकूं तो मंजिलें ही मंजिलें हैं, चलूं तो रास्ता कोई नहीं है।

दस भिक्षु सत्य की खोज में एक बार निकले थे। उन्होंने बहुत पर्वतों–पहाड़ों, आश्रमों की यात्रा की। लेकिन उन्हें कोई सत्य का अनुभव न हो सका। क्योंकि सारी यात्रा बाहर हो रही थी। किन्हीं पहाड़ों पर, किन्हीं आश्रमों में, किन्हीं गुरुओं के पास खोज चल रही थी। जब तक खोज किसी और की तरफ चलती है, तब तक उसे पाया भी कैसे जा सकता है, जो

स्वयं में है।

आखिर में थक गए और अपने गांव वापस लौटने लगे। वर्षा के दिन थे, नदी बहुत पूर पर थी। उन्होंने नदी पार की। पार करने के बाद सोचा कि गिन लें, कोई खो तो नहीं गया। गिनती की, प्रतीत हुआ कि एक आदमी खो गया है, एक भिक्षु डूब गया है। गिनती नौ होती थी। दस थे वे। दस ने नदी पार की थी। लौटकर बाहर आकर गिना, तो नौ मालूम होते थे। प्रत्येक व्यक्ति अपने को गिनना छोड़ जाता था, शेष सबको गिन लेता था। वे रोने बैठ गए। सत्य की खोज का एक साथी खो गया था।

एक यात्री उस राह से निकलता था, दूसरे गांव तक जाने को। उसने उनकी पीड़ा पूछी, उनके गिरते आंसू देखे। उसने पूछा, क्या कठिनाई है? उन्होंने कहा, हम दस नदी में उतरे थे, एक साथी खो गया, उसके लिए हम रोते हैं। कैसे खोजें? उसने देखा वे दस ही थे। वह हंसा और उसने कहा, तुम दस ही हो, व्यर्थ की खोज मत करो और अपने रास्ते चला गया।

उन्होंने फिर से गिनती की कि हो सकता है, उनकी गिनती में भूल हो। लेकिन उस यात्री को पता भी न था। उनकी गिनती में भूल न थी, वे गिनती तो ठीक ही जानते थे। भूल यहां थी कि कोई भी अपनी गिनती नहीं करता था। उन्होंने बहुत बार गिना, फिर भी वे नौ ही थे।

और तब उनमें से एक भिक्षु नदी के किनारे गया। उसने नदी में झांककर देखा। एक चट्टान के पास पानी थिर था। उसे अपनी ही परछाई नीचे पानी में दिखाई पड़ी। वह चिल्लाया, उसने अपने मित्रों को कहा; आओ, जिसे हम खोजते थे, वह मौजूद है। दसवां साथी मिल गया है। लेकिन पानी बहुत गहरा है और उसे हम शायद निकाल न सकेंगे। लेकिन उसका अंतिम दर्शन तो कर लें। एक-एक व्यक्ति ने उस चट्टान के पास झांककर देखा, नीचे एक भिक्षु मौजूद था। सबकी परछाई नीचे बनती उन्हें दिखाई पड़ी। तब इतना तो तय हो गया, इतने डूबे पानी में वह मर गया है।

वे उसका अंतिम संस्कार कर रहे थे। तब वह यात्री फिर वापस लौटा, उसने पूछा कि यह चिता किसके लिए जलाई हुई है? यह क्या कर रहे हो? उन नौ ही रोते भिक्षुओं ने कहा, मित्र हमारा मर गया है। देख लिया हमने गहरे पानी में डूबी है उसकी लाश। निकालना तो संभव नहीं है। फिर वह मर भी गया होगा, हम उसका अंतिम दाह-संस्कार कर रहे हैं।

उस यात्री ने फिर से गिनती की और उनसे कहा, पागलो! एक अर्थ में तुम सबने अपना ही दाह-संस्कार कर लिया है। तुमने जिसे देखा है पानी में, वह तुम्हीं हो। लेकिन पानी में देख सके तुम, लेकिन स्वयं में न देख सके! प्रतिबिंब को पकड़ सके जल में, लेकिन खुद पर तुम्हारी दृष्टि न जा सकी! तुमने अपना ही दाह-संस्कार कर लिया। और दसों ने मिलकर
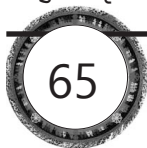
उस दसवें को दफना दिया है, जो खोया ही नहीं था। उसकी इस बात के कहते ही उन्हें स्मरण आया कि दसवां तो मैं ही हूं। हर आदमी को ख्याल आया कि वह दसवां आदमी तो मैं ही हूं। और जिस सत्य की खोज वे पहाड़ों पर नहीं कर सकते थे, अपने ही गांव लौटकर वह खोज पूरी हो गई। वे दसों ही जाग्रत होकर, जान कर, गांव वापस लौट आए थे।

उन दस भिक्षुओं की कथा ही हम सभी की कथा है। एक को भर हम छोड़ जाते हैं– स्वयं को। और सब तरफ हमारी दृष्टि जाती है– शास्त्रों में खोजते हैं, शब्दों में खोजते हैं; शास्ताओं के वचनों में खोजते हैं; पहाड़ों पर, पर्वतों पर खोजते हैं; सेवा में, समाज सेवा में; प्रार्थना में, पूजा में खोजते हैं। सिर्फ एक व्यक्ति भर इस खोज से वंचित रह जाता है– वह दसवां आदमी वंचित रह जाता है, जो कि हम स्वयं हैं। (असंभव क्रांति– अंश, तीसरा प्रवचन)

ओशो के एक परिचित नास्तिक थे, उनके कमर का फ्रैक्चर हो गया। डॉक्टरों ने कहा तीन महीने बिल्कुल हिलना–डुलना नहीं है, प्लास्टर में बंधे पड़े रहना है बिस्तर पर। वे बड़े ही तकलीफ में पड़ गए। बड़े ही कर्मठ किस्म के इंसान थे, कभी जिंदगी में चैन से दो मिनट बैठे न थे। जब ओशो उनको देखने गए, वो रोने लगे, उन्होंने कहा, इससे अच्छा होता कि मैं मर ही जाता। कमर की हड्डी टूट गई, बड़ी मुसीबत हो गई, तीन महीने बिना हिले–डुले पड़े रहना पड़ेगा। इससे तो अच्छा मौत हो जाती। मैं तो बड़ा कर्मठ किस्म का हूँ, आप जानते ही हैं, बिना किए रहना मेरे लिए संभव नहीं। ओशो ने कहा एक छोटा सा काम करो। ध्यान का एक प्रयोग कहता हूँ। वे कहने लगे कि, देखिए मैं नास्तिक हूं, आपको पता है, मुझे ध्यान में कोई उत्सुकता नहीं है। ओशो ने कहा, ईश्वर की छोड़ो, मैं तुमसे ईश्वर की बात नहीं कर रहा। एक छोटी सी विधि दे रहा हूँ, ये जो दर्द हो रहा है तुम्हें, इसको भीतर से एहसास करो। इसके प्रति प्रतिरोध छोड़ दो, कि मिट जाए, कि नष्ट हो जाए। दुश्मनी का भाव छोड़ दो कि तीन महीने बिस्तर पर पड़े रहना है, इसको स्वीकार लो और इसे भीतर से जानो, कहां हो रहा है? कहने लगे इससे क्या होगा? ओशो ने कहा, तुम करके तो देखो, फिर बताना क्या होगा। कहने लगे, मैं नहीं करने वाला, ध्यान में मुझे कोई रस नहीं है।

तीन दिन बाद उनके बेटे का ओशो के पास फोन आया कि पिताजी आपको बुला रहे हैं, आपको धन्यवाद देना चाहते हैं। ओशो गए उनके चेहरे पर अद्भुत शांति नजर आ रही थी। वे कहने लगे, पहले तो मैंने आपकी बात नहीं मानी, मैंने इंकार कर दिया कि प्रयोग नहीं करूँगा, लेकिन फिर मुझे समझ में आया कि तीन महीने मुझे पड़े ही रहना है तो प्रयोग करने में हर्ज ही क्या है, वैसे भी खाली पड़ा हूँ, कुछ करने को नहीं है। मैंने भीतर–भीतर ख्याल किया, कहां दर्द हो रहा है? पूरी कमर, पैर, पेट, सब जगह एहसास हो रहा था। जब गौर से ख्याल किया, तो और कम जगह में महसूस होने लगा, फिर बिल्कुल पिन प्वाइंटेड एक जगह महसूस हो रहा था जहां फ्रैक्चर था और फिर अंत में अचानक पता नहीं क्या हुआ, आपने

कोई चमत्कार किया, आपने कोई आशीर्वाद दिया क्या? मैं तो नास्तिक हूँ, चमत्कार और आशीर्वाद को मानता नहीं हूँ, लेकिन बहुत विचित्र घटना घटी। अचानक दर्द विलीन हो गया और मैं बड़े आनंद से भर गया और आपको धन्यवाद देने के लिए ही बुलाया है। ओशो ने उनको समझाया कि जब तुम जागरूक हुए तो तुम्हारी चैतन्यता बढ़ी, तुम कर्ता से साक्षी में आना शुरू हुए, जब तुम द्रष्टा बने तो शरीर में होने वाली पीड़ा तुमसे अलग हो गई, तुम उससे अलग हो गए। और यही घटना है, जैसे ही तुम देह से भिन्न हुए, देह में होने वाली पीड़ा पीछे छूट गई, तुम चेतना में आ गए और चेतना आनंदस्वरूप है, सच्चिदानंद है। ये छोटी-छोटी विधियां बड़ी अद्भुत हैं।

अ. वज्रासन में बैठें। आंख बंदकर हथेलियों से ढांककर कल्पना करें कि हम जन्मजात अंधे हैं। हमने कभी कोई रोशनी देखी ही नहीं है। दृश्य जगत हमारे लिए अस्तित्व नहीं रखता। किंतु भीतर द्रष्टा चेतना तो है। उस साक्षी को पहचानें।

ब. दोनों हथेलियों से कानों को ढांककर कल्पना करें कि हम बिल्कुल बहरे हैं। हमें कोई आवाज सुनाई नहीं देती। ध्वनियों की सत्ता हमारे लिए है ही नहीं। लेकिन अंदर श्रोता तो मौजूद है। श्रव्य से श्रोता पर, स्वयं पर आएं।

स. वज्रासन में बैठने से अनेक मित्रों को पैरों में झुनझुनी महसूस हो रही होगी। ग्यारहवीं विधि में- भगवान शिव पार्वती से कहते हैं- जब चींटी के रेंगने की अनुभूति हो तो इंद्रियों के द्वार बंद कर दो। अनुभवकर्ता को जानो।

द. अब कूर्मासन में बैठ जाएं- जैसे कछुआ अपनी सारी इंद्रियों को सिकोड़ लेता है। संसार आपके लिए खो गया, लेकिन आपका होना मौजूद है। स्वयं की उपस्थिति के प्रति जागरूक! आपकी आत्मा, देह व मन के पार, इंद्रियातीत है।

धन्यवाद! ओशो शरणं गच्छामि!

वजनशून्य हो जाओ–12

जब किसी बिस्तर पर या आसन पर हो तो अपने को वजनशून्य हो जाने दो– मन के पार।

विज्ञान भैरव तंत्र की आज की विधि बड़ी चमत्कारिक मालूम पड़ेगी, लेकिन वास्तव में चमत्कारिक है नहीं। प्रयोग करके देखना, बड़ी सरल, बड़ी सुगम, बड़ी सहज। भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, हे भवानी! जब किसी विस्तर पर या आसन पर हो, तो अपने आप को वजन शून्य हो जाने दो, मन के पार। वाक्य को अधूरा ही छोड़ देते हैं, बस मन के पार। उसके पार क्या होगा? वह कहा नहीं जा सकता, इसीलिए वाक्य को अधूरा छोड़ दिया। लेकिन जाना जा सकता है, कहा नहीं जा सकता। करके देखना इस विधि को, बड़ी सरल है। सामान्यतः हमें स्वयं का जो भार अनुभव होता है, वह शरीर और मन के साथ तादात्म्य की वजह से। हम मानते हैं कि हम शरीर हैं, कि हम मन हैं। स्त्रियों–पुरुषों में थोड़ा सा भेद है। स्त्रियों का शरीर के साथ ज्यादा तादात्म्य है। पुरुषों का मन के साथ ज्यादा तादात्म्य है। यदि किसी स्त्री से कह दो कि तुम्हारा चेहरा बड़ा कुरूप है, तो उसे बहुत बुरा लगेगा। उसे ऐसा नहीं लगता कि तुमने कहा है कि चेहरा कुरूप है, उसे लगता है तुमने कह दिया कि वही कुरूप है। जब कि यह शरीर तो मात्र वस्त्र की भांति है, यह हमारा वास्तविक होना नहीं है। किसी पुरुष से अगर तुम कहो कि तुम्हारा चेहरा सुंदर नहीं, उसे उतना बुरा नहीं

लगता। जब तुम किसी पुरुष से कहो कि तुम्हारे विचार गलत हैं, तुम्हारा सिद्धांत, तुम्हारी फिलासफी, तुम्हारा संप्रदाय, तुम्हारी धारणाएं गलत हैं, तब उसे चोट लगती है, और वह झगड़े पर उतारू हो जाता है,

मन के साथ पुरुषों का ज्यादा तादात्म्य है। सारे लड़ाई–झगड़े, फसाद, युद्ध, आतंकवाद, उनके झगड़े की जड़, मतभेद; मनों के भेद, विचारों के भेद हैं। शरीर और मन का तादात्म्य हमें वजन की अनुभूति देता है। लेकिन वास्तव में न तो हम देह हैं, न हम मन हैं। तन और मन के पार शुद्ध चेतन हैं। यदि हम अपने चेतन से परिचीत हो जाएं, हम अपने वास्तविक स्वरूप को जान लेंगे, हमें निर्भारता की अनुभूति होने लगेगी। अपने सामान्य जीवन में भी आपने अनुभव किया होगा। जब आप विषादग्रस्त होते हैं, तनाव में होते हैं, परेशान, दुखी होते हैं, चिंता में होते हैं, तब आप बहुत भारी अनुभव करते हैं। जब आप स्वस्थ होते हैं, शांत होते हैं, प्रसन्न होते हैं, तो आप हल्के–फुल्के हो जाते हैं, फूल की तरह। भीतर एक निर्भारता की अवस्था आ जाती है। लगता है, जैसे हवा में उड़ रहे हों, तो इने दो अवस्थाएं तो आप जानते ही हैं। कभी न कभी आपने भारीपन महसूस किया होगा, दुख के क्षणों में। और सुख के क्षणों में बड़ा हल्कापन महसूस किया होगा। सुख और दुख के पार तीसरी अवस्था है, शांति की, आनंद की। वह है पूर्ण निर्भारता की अवस्था। तो आप सुख से अनुमान लगा सकते हैं, अगर सुख में हल्के–फुल्के हो गए, तो आनंद में तो बिल्कुल ही वजनहीन हो जाएंगे। आज की विधि उसी तरफ इशारा है।

पिछली सदी में सोवियत रूस में एक प्रसिद्ध नर्तक हुआ। निजिंस्की उसका नाम था। कभी–कभी नृत्य करते हुए अचानक वो बड़ी ऊंची छलांग भरता था, जो कि मानवीय रूप से संभव नहीं। बहुत ऊपर उठ जाता। उससे भी आश्चर्य की बात जब वह ऊपर से नीचे उतरता, तो यूं लहराता हुआ जैसे कोई सूखा पत्ता पेड़ से गिरता है, यह विज्ञान के नियम के खिलाफ है। फिजिक्स के नियमानुसार कोई भी वस्तु जो ऊपर से नीचे गिरेगी, वह पहले सेकण्ड में लगभग बत्तीस फुट गिरेगी। दूसरे सेकण्ड में उसकी गति बढ़ जाएगी 64 फुट, हर अगले सेकेण्ड में 32–32 फुट उसकी गति तेज होती चली जाएगी। लेकिन निजिंस्की का ऊपर से नीचे उतरना जादू जैसा लगता था, असंभव जान पड़ता था। चूंकि वैज्ञानिक मुल्क में, सोवियत रूस में था, इसलिए बहुत शोध कार्य उस पर किए गए। उससे पूछा गया तुम करते क्या हो? उसने कहा मैं कुछ नहीं करता हूं। कभी–कभी नाचते–नाचते मैं भूल ही जाता हूं कि मेरा शरीर भी है और तब उस क्षण में ये घटना घटती है। ये मेरी कोई तरकीब नहीं है और मैं इसको जानबूझकर कर भी नहीं सकता। कभी–कभी अनायास यह घटना घटती है।

ठीक इसी प्रकार ओशो जब विज्ञान भैरव तंत्र पर प्रवचन दे रहे थे, सन 1970, 71, 72 में, उस समय एक स्त्री इसी प्रकार पश्चिम के देश में थी, उसका वर्णन उन्होंने प्रवचन में किया

है। बोलीविया में वैज्ञानिक एक स्त्री का निरीक्षण कर रहे हैं, ध्यान करते हुए वह जमीन से चार फिट ऊपर उठ जाती है। अब तो यह वैज्ञानिक निरीक्षण की बात बन गई है। उसके अनेकों फोटोग्राफ और फिल्म लिए जा चुके हैं, हजारों दर्शकों के सामने वह स्त्री अचानक ऊपर उठ जाती है। उसके लिए गुरुत्वाकर्षण जैसे व्यर्थ हो गया हो। अब तक यह बात व्याख्या नहीं की जा सकी कि क्या होता है? लेकिन वह स्त्री गैर ध्यान की अवस्था में ऊपर नहीं उठ पाती या ऊपर उठने के बाद उसके ध्यान में बाधा उत्पन्न हो जाए तो वह झट से नीची हो जाती है। जब एक स्त्री चार फुट ऊपर उठ सकती है तो फिर सैद्धांतिक रूप से तो संभव है, फिर हजार फुट ऊपर भी उठा जा सकता है, फिर तो अंतरिक्ष में भी जाया जा सकता है। सैद्धांतिक रूप से फिर कोई समस्या न रही, फिर चाहे चार फुट ऊपर उठो कि चालीस फुट कि चार सौ कि चार हजार फुट इससे क्या फर्क पड़ता है?

भगवान राम के बारे में और अन्य कई संतों के बारे में कथाएं हैं कि वे सशरीर धरती से विलीन हो गए। उनकी मृत देह इस धरती पर कहीं भी नहीं पाई गई। हजरत मोहम्मद अचानक गायब हो गए। केवल अपने शरीर सहित ही नहीं, अपने घोड़े के साथ। ये कहानियां असंभव सी मालूम पड़ती हैं, पौराणिक जान पड़ती हैं। लेकिन जरूरी नहीं कि ये मिथक ही हों। एक बार तुम वजन शून्य शक्ति को जान जाओ, तब तुम गुरुत्वाकर्षण के मालिक हो गए। तुम उसका उपयोग कर सकते हो, यह तुम पर निर्भर है। तुम सशरीर अंतरिक्ष में विलीन हो सकते हो। ओशो ने इस बात को समझाते हुए आगे कहा है कि सिद्धासन की या खड़े होने के आसन की स्थिती इसके लिए बड़ी उपयोगी होगी। सिद्धासन में गुरुत्वाकर्षण कम से कम काम करता है। गौतम बुद्ध ने उसी में ध्यान प्रयोग किए। भगवान महावीर ने खड़े होके साधना की। जमीन से कम से कम संपर्क, सिर्फ पैर के पंजों का। अपने को भारहीनता का अहसास बड़ी आसानी से होता है।

तो याद रखना ये बातें जुड़ी हुई हैं। चेतना भारहीन है, शरीर का स्थूल भार है, मन का भी सूक्ष्म वजन है, चेतना का कोई वजन नहीं है। कई वैज्ञानिक और नास्तिक इस बात की जिद करते हैं कि जब किसी के शरीर की मृत्यु होती है, तो उसके शरीर के वजन में कोई फर्क नहीं पड़ता। वे कहते हैं कि इससे सिद्ध होता है कि आत्मा जैसी कोई चीज नहीं। अगर कोई चीज शरीर से निकलकर बाहर गई है तो भार में फर्क पड़ना चाहिए। लेकिन भार में कोई फर्क नहीं पड़ता, क्यों? क्योंकि चेतना का कोई भार है ही नहीं। उनकी भौतिक धारणा ही गलत है। शरीर का वजन है, मन का वजन है, आत्मा का कोई वजन नहीं। इस प्रयोग को करके देखना। बहुत आसान है, बहुत सरल है।

तो अभी हम इस प्रयोग को करेंगे। चार-पांच चरणों में इस प्रयोग को करेंगे। आसानी होगी, जब आप भस्त्रिका प्राणायाम करते हैं, आपके भीतर ऑक्सीजन का तल बढ़ जाता है,

उसके साथ ही, शरीर के साथ जो आपका तादात्म्य है वह टूट जाता है। यहां सुरति समाधि कार्यक्रम में, ओशोधारा के दूसरे तल के कार्यक्रम में, हम सभी साधकों से यह प्रयोग करवाते हैं और अब तक पांच हजार से ज्यादा मित्र इस प्रयोग को कर चुके हैं। आपने उसकी फिल्म भी देखी होगी। एक कुर्सी पर एक आदमी बैठ जाता है और चार लोग अपनी एक-एक अंगुली लगाकर उस व्यक्ति को ऊपर हवा में उठा लेते हैं। 70-80 किलो का व्यक्ति ऐसे ऊपर उठ जाता है, जैसे उसका वजन 7-8 किलो हो, छोटे बच्चे के जैसे। अभी तक सबसे भारी आदमी जो आया था, वो 112 किलो का था और चार दुबली-पतली महिलाओं ने एक-एक अंगुली लगाकर उसे ऊपर हवा में उठा लिया। आश्चर्य! लेकिन आश्चर्य कुछ भी नहीं क्योंकि अगर इसको ठीक ढंग से प्रयोग किया जाए तो सभी लोग इसको कर पाने में सफल हो पाते हैं। विशेषकर जिन्हें ध्यान की थोड़ी भी गहराई मिल गई। इसलिए सुरति समाधि में हमने इस प्रयोग को रखा है। आज तक एक भी व्यक्ति असफल नहीं हुआ इसे करने में। तो भस्त्रिका प्राणायाम का हम प्रयोग करेंगे। इसके बाद चीन के संत लाओत्सु की संतुलन विधि को करेंगे। उसके बाद बैठकर और लेटकर विज्ञान भैरव तंत्र की इस विधि को करेंगे।

सभी मित्र खड़े हो जाएं। लगभग डेढ़ दो फिट दूर अपने पंजों को फैलाकर खड़े हों। जितने चौड़े आपके कंधे हैं, उतने ही दूर आपके पैर हों। बिल्कुल सीधे खड़े हों। अपने दोनों हाथों को, बाजुओं को फैला लें बगल में। अब आहिस्ता-आहिस्ता बाईं तरफ झुकें। बाएं पैर पर बढ़ते हुए वजन को महसूस करें। फिर बीच में आएं, फिर दाहिने तरफ झुकें। दाएं पंजे पर पड़ रहे वजन को महसूस करें, फिर मध्य में आएं। इसी प्रकार पांच-सात बार प्रयोग करें। बदलते हुए भार को बाएं और दाएं पैर पर महसूस करें। अब बिल्कुल मध्य में स्थिर हो जाएं। चीन के संत लाओत्सु की विधि है। न आगे झुकें, न बाएं, न पीछे, न दाएं। ठीक बीचों-बीच बिजली के खंभे की भांति, बिल्कुल सीधे और स्थिर। देह से तादात्म्य टूटना शुरू हुआ। निर्भारता का अहसास हो रहा है। भगवान महावीर ने इसी आसन में 12 साल साधना की।

अब आराम से बैठ जाएं, रीढ़, गर्दन और सिर सम रेखा में हों, सीधे हो। श्वास धीमी और गहरी हो। शरीर के भार को महसूस करें और आश्चर्य! भार का एहसास करते-करते निर्भारता में प्रवेश हो जाएगा। अब विश्रामपूर्ण मुद्रा में लेट जाएं। भगवान शिव का वचन याद करें, हे भवानी! जब किसी बिस्तर या आसन पर हो, तो अपने को वजन शून्य हो जाने दो, मन के पार। इस क्षण तन और मन के पार, आप अपने चेतन में मौजूद हैं, शरीर जैसे गौण हो गया, मन का अतिक्रमण हो गया। चेतन में विश्राम, विश्राम, परमविश्राम। देह का स्थूल भार है, मन का भी सूक्ष्म भार है, आत्मा का कोई वजन नहीं, अद्भुत है यह विधि। वजनशून्यता में प्रवेश करें और तन-मन के पार हो जाएं। यह निर्भार चैतन्य ही आपका वास्तविक स्वरूप है। ओम् नमः शिवाय!

भीतर सौंदर्य घुलने दो–13

भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– कल्पना करो कि मोर की पूंछ के पंचरंगे वर्तुल निस्सीम अंतरिक्ष में तुम्हारी पांच इंद्रियां हैं। अब उनके सौंदर्य को भीतर ही घुलने दो। उसी प्रकार शून्य में या दीवार पर किसी बिन्दु की कल्पना करो जब तक कि वह बिन्दु विलीन न हो जाए। तब दूसरे के लिए तुम्हारी कामना सच हो जाती है।

महर्षि पतंजलि ने पांच चित्तवृत्तियों की चर्चा की है, उसमें से एक है 'कल्पना की शक्ति'। मनुष्य के पास अद्भुत कल्पनाशक्ति है। आज के सूत्र में भगवान शिव इसी कल्पनाशक्ति का प्रयोग करने के लिए देवी पार्वती से कहते हैं। 13वां सूत्र विज्ञान भैरव तंत्र का, कल्पना करो की मोर की पूंछ के पांचों रंग वर्तुलों के रूप में निस्सीम आकाश में फैले हुए हैं, वे तुम्हारी पांच इंद्रियां हैं। अब इस सौंदर्य को अपने भीतर किसी केन्द्र पर मिल जाने दो अथवा शून्य में या दीवार पर किसी बिंदु की कल्पना करो और भाव करो, कल्पना करो उस बिंदु की जब तक कि वह बिंदु विलीन ही न हो जाए। तब दूसरे के लिए तुम्हारी कामना सच हो जाती है।

दो प्रकार की विधियां आज के सूत्र में सम्मिलित हैं, क्योंकि दो प्रकार के लोग हैं। कुछ लोग हैं विचारशील, गणितज्ञ प्रवृत्ति के, वैज्ञानिक प्रवृत्ति के और कुछ लोग हैं कल्पनाशील, भावुक प्रवृत्ति के। विचारकों के लिए भावुक विधि काम न करेगी। तो शुरुआत में आधी विधि भावुक लोगों के लिए है, पांच रंगों की कल्पना। स्त्रियां पुरुषों की तुलना में ज्यादा कल्पनाशील होती हैं, पुरुष स्त्रियों की तुलना में ज्यादा विचारक किस्म के होते हैं। आधुनिक शिक्षित आदमी पुराने जमाने के व्यक्ति की तुलना में ज्यादा विचारक है। पुराने जमाने के लोग या आज के जमाने में गांव में रहने वाले अशिक्षित लोग, वे ज्यादा कल्पनाशील हैं। तो याद रखना वही विधि काम कर सकेगी कल्पना की, केवल उन्हीं लोगों के लिए जो कल्पनाशील हैं, पांच रंगों की कल्पना वही व्यक्ति कर सकता है। एक क्राइटेरिया आपको देता हूं, जिसके स्वप्न रंगीन होते हैं। लगभग पांच प्रतिशत लोग दुनिया में रंगीन सपने देखते हैं। 95 प्रतिशत लोग ब्लैक ऐण्ड व्हाइट, श्वेत–श्याम स्वप्न देखते हैं। तुम जरा गौर करना, क्या तुम्हें रंगीन सपने दिखाई देते हैं? यदि दिखाई देते हैं, तब कल्पना की यह तांत्रिक विधि तुम्हारे बड़े काम की साबित होगी। ये विधि कैसे काम करती है, इसकी प्रक्रिया क्या है?

इसको समझाते हुए ओशो कहते हैं विज्ञान भैरव तंत्र में, तुम अगर बाहर कहीं भी मन में, हृदय में या किसी दीवार पर एक केन्द्र बना सको और उस पर समग्रता से अपने अवधान को केन्द्रित कर सको और उस बीच समूचे संसार को भूल सको, फिर वही एक बिंदु तुम्हारी चेतना में रह जाए, तो तुम अचानक अपने आंतरिक केन्द्र पर फेंक दिए जाओगे। यह कैसे काम करता है, इसे समझो। तुम्हारा मन एक भगोड़ा है, वह निरंतर भाग–दौड़ ही करता रहता है, वह कभी एक बिंदु पर नहीं टिकता। वह निरंतर कहीं जा रहा है, गति कर रहा है, पहुंच रहा है, लेकिन वह कभी एक बिन्दु पर नहीं टिकता। वह एक विचार से दूसरे विचार की ओर, अ से ब की ओर, ब से स की ओर यात्रा करता है। किसी बिन्दु पर टिकता नहीं, वह निरंतर गतिमान है। चेतना पैर जैसी है, वह तुम्हारा स्वभाव है। मन चलने जैसा है, वह एक प्रक्रिया है। जब चेतना एक जगह से दूसरी जगह जाती है, तब वही प्रक्रिया मन कहलाती है। जब चेतना अ से ब और ब से स की ओर जाती है, तब यह चित्त है। अगर तुम गति को बंद कर दो तो चित्त नहीं रहेगा। तुम चेतन हो, लेकिन फिर मन नहीं रहेगा। जैसे पैर तो हैं किंतु चलना खो गया। चलना क्रिया है, कर्म है। मन भी एक क्रिया है और कर्म है।

भाव करो कि सारा जगत रंग ही रंग हो गया है और वे रंग तुम्हारे नाभि केंद्र पर, तुम्हारे हारा के बिन्दु पर मिल रहे हैं। उस बिंदु को देखो, उस बिंदु पर अवधान को एकाग्र करो और तब तक एकाग्र करो जब तक कि वह बिंदु विलीन नहीं हो जाए। वह विलीन हो जाता है, क्योंकि वह स्वयं ही एक कल्पना है। याद रहे जो कुछ भी हमने किया है मन के द्वारा, वह कल्पना ही है। अगर तुम उस पर पूर्णतः एकाग्र हो जाओ तो तुम अपने केन्द्र पर केन्द्रित हो

जाओगे, तब सारा संसार विलीन हो जाएगा, तुम्हारे लिए संसार रहा ही नहीं। संसार पहले ही विलीन हो चुका, सिर्फ रंग रह गए थे। वे रंग तुम्हारी कल्पना थे और वे काल्पनिक रंग एक बिंदु पर मिल रहे थे, वह बिंदु भी काल्पनिक था। अब गहरी एकाग्रता से वह बिन्दु भी विलीन हो गया। अब तुम कहां होओगे, अब तुम कहां रहोगे? तुम अपने केन्द्र में स्थित हो जाओगे। विषय कल्पना के द्वारा विलीन हुए हैं और अब कल्पना एकाग्रता के द्वारा विलीन होगी और विषयी की तरह केवल तुम बचोगे अपने केंद्र में। विषय खो गए, मनोमय जगत भी विलीन हो गया, तब शुद्ध चेतना की भांति तुम बचोगे।

इसलिए शिव कहते हैं, शून्य में या दीवार में, किसी बिंदु पर कल्पना करो, यह भी सहयोगी होगा। अगर तुम रंगों की कल्पना नहीं कर सकते तो दीवार पर किसी बिंदु से काम चलेगा। कोई भी चीज एकाग्रता के विषय के रूप में ले लो। अगर वह आंतरिक हो तो ठीक, अंतस का हो तो बेहतर, क्योंकि दो तरह के व्यक्तित्व हैं। जो लोग अंतर्मुखी हैं, उनके लिए भीतर ही सब रंगों के मिलने की धारणा करना आसान है, लेकिन जो बहिर्मुखी लोग हैं, वे भीतर की धारणा नहीं बना सकते, वे बाहर दीवार में कल्पना कर सकते हैं। शिव दोनों के लिए एक-एक प्रकार की विधियां दे रहे हैं। कुछ लोग हैं स्वप्न जाल फैलाने में अतिकुशल। शिव कहते हैं, मन की इस शक्ति का उपयोग कर लो, कल्पना से लड़ने की जरूरत नहीं। यही योग में और तंत्र में बुनियादी भेद है। योग में कहेंगे कि चित्तवृत्तियों का निरोध करना होगा, इन कल्पनाओं से, स्मृतियों से जागना होगा और तंत्र में कहेंगे कि मन की अपनी प्रवृत्तियों का भी उपयोग कर लो। लड़ने की जरूरत नहीं है। जैसे कांटे से कांटा हम निकाल देते और फिर दोनों कांटे हम फेंक देते, ठीक उसी प्रकार एक कल्पना से, इस कल्पनाशील मन को निकाल दो और फिर अपनी चेतना में स्थित हो जाओ।

पांचों रंगों का फैलाव आकाश में महसूस करो, अनंत-अनंत दूर तक। समझो यही तुम्हारी पांच इंद्रियां हैं और समझो तुम्हारी नाभि केंद्र पर ये खूबसूरत रंग मिल रहे हैं। जब इस एकाग्रता को साधोगे, इसकी वजह से सारे संसार को भूल जाओगे। संसार से मुक्त हुए और अंततः यह कल्पना भी खो जाएगी, क्योंकि यह तो सिर्फ कल्पना ही है। तब केवल तुम्हारी चेतना ही बची, वह काल्पनिक बिंदु भी खो जाएगा। तो चित्रकारों के लिए, कवियों के लिए, कल्पनाशील स्त्रियों के लिए यह विधि बड़े काम की है। किन्तु जो लोग बहिर्मुखी हैं, शिव उनको भूले नहीं हैं। उनके लिए भी कहते हैं दूसरा सूत्र- कि शून्य में या दीवार पर किसी बिंदु की कल्पना करो अथवा किसी बिंदु को बनाकर देखो, उस पर ध्यान को एकाग्र करो। देखते जाओ, देखते जाओ जब तक कि वह विलीन ही न हो जाए। आपके मन में सवाल उठेगा कि दीवाल पर बना हुआ वास्तविक बिन्दु क्यों विलीन होगा? इसकी क्रियाविधि भी समझ लें। वास्तव में हम मन के द्वारा संसार से जुड़े हुए हैं। बाहर कोई दृश्य हमें तभी दिखाई देता है जब

भीतर हमारी चेतना मन के माध्यम से उस दृश्य से संयुक्त होती है। यदि हमारा मन खो जाए, हमारी चेतना भीतर की ओर मुड़ जाए, तब बाहर का वह दृश्य हमें दिखाई पड़ना बंद हो जाएगा। ठीक इसी प्रकार दीवार पर बना वह बिन्दु भी विलीन हो जाएगा, क्योंकि आपकी चेतना भीतर की ओर, स्वयं में स्थित होने के तरफ मुड़ जाएगी।

ध्यान की ये विधियां बड़ी सरल हैं और बहुत उपयोग की गई हैं। बोधिधर्म के बारे में कहानी सुनी होगी, चीन के 'टा' नामक पर्वत पर बैठकर निरंतर एकाग्रता साधता था। पलकें झपक जाती थीं, तो कहानी कहती है उसने अपनी पलकें उखाड़कर फेंक दीं। जहां उसकी पलकें गिरी वहां पर एक चाय का पेड़ उग आया। इसलिए टा पर्वत के नाम पर चाय का नाम टी पड़ा। जागरण में सहयोगी है वह। बोधिधर्म जागरण की एकाग्रता की साधना कर रहा था। उसी के नाम पर यह कहानी प्रचलित हुई कि इसलिए चाय जगाती है। चीन में और जापान में बौद्ध फकीर 'चायोत्सव' करते हैं, 'टी सेरेमनी'। बड़े धार्मिक ढंग से वे चाय को पीते हैं और बड़े गहरे ध्यान में उतर जाते हैं।

इन दो विधियों के अलावा एक और तीसरी विधि मैं आपको सुझाता हूं। कुछ लोग हैं जो न तो अंतर्मुखी हैं न बहिर्मुखी हैं। उनके लिए एक तीसरी विधि का हम प्रयोग करेंगे। ओशो के द्वारा बतायी 'शिवनेत्र ध्यान' की विधि। किसी बल्ब पर एकाग्रता को करो। फिर बल्ब को बुझा दो। यह विधि रात को करने की है। पूरे कमरे में अंधेरा हो जाए और तब खुली आंख तुम्हें बल्ब का प्रतिबिंब दीवाल पर बनता हुआ तुम्हें दिखाई देगा। न तो यह सत्य है और न यह असत्य है। न तो तुमने कल्पना की है और न तो वास्तव में भी कोई बल्ब वहां पर है, लेकिन फिर भी दिखाई देगा। करीब दो ढाई मिनट में धीरे-धीरे यह बल्ब का प्रतिबिंब खो जाएगा। और तब तुम अपने भीतर डूब जाओ, ध्यान में स्थित हो जाओ। तो आओ इन तीनों विधियों को आज हम करते हैं।

सबसे पहले अपनी दोनो भुजाएं फैलाकर धीमे-धीमे ऊपर और नीचे गति करें और कल्पना करें कि जैसे आप मोर हैं और ये मोर के पंख फैल रहे हैं। आप नाच रहे हैं, झूम रहे हैं, काले बादल घिर आए हैं आकाश में, मोर की तरह आप नाच रहे हैं। आपके रंग-बिरंगे पंख आकाश में दूर-दूर तक फैल गए, इस कल्पना में डूबें। सौंदर्य की कल्पना में तल्लीन होकर नाचें। नाचो, खूब मस्ती में झूमो। पांचों रंग के सौंदर्य को नाभि केन्द्र पर मिलता हुआ महसूस करो। अब आराम से बैठ जाएं। आंतरिक सौंदर्य में डूबें। कल्पना से कल्पना को निकाल फेंका। शिथिल हो जाएं, अब कोई कल्पना न करें। आत्मरमण; ...स्वयं में स्थित। मन की एक वृत्ति का उपयोग कर लिया, स्वयं में डूबने के लिए।

दूसरी विधि का प्रयोग करते हैं। यहां सामने मंच पर सफेद बोर्ड पर बना हुआ एक काला गोला रखा हुआ है। इस गोले के केन्द्र बिंदु की ओर देखें, एकटक, अपलक, आंख की

पुतली न हिले। अब आंखे बंद कर लें। बंद आंखों से काले गोले की जगह उसकी काल्पनिक छबि दिखाई देगी, एक चांद जैसा गोला दिखाई दे रहा होगा, उसे देखते जाएं। धीरे–धीरे वह चांद की आकृति धुंधली पड़ने लगी, खोने लगी, उसके साथ मन भी खोने लगा, रह गई केवल शुद्ध चेतना।

तीसरा प्रयोग शिवनेत्र ध्यान का है। प्रकाशित बल्ब की ओर एकटक तीस सेकण्ड तक देखें। यदि सौ वाट का बल्ब है तो दस फुट दूर बैठकर इस प्रयोग को करें। बिना पलक झपकाए, बिना पुतली हिलाए, एकटक देखते जाएं। अब आंख बंद कर लें, प्रकाश को बुझा दें। दोनो आंखों के बीच में आज्ञाचक्र पर जिसे शिवनेत्र कहते हैं, तीसरी आंख पर बल्ब का बिंब दिखाई दे रहा है। उसके रंग परिवर्तित हो रहे हैं, बड़े खूबसूरत रंग। यह तीसरी विधि सभी के काम की है चाहे अंतर्मुखी हों, चाहे बहिर्मुखी हों। न तो यह वास्तविक है और न ही काल्पनिक। बल्ब का प्रतिबिंब खोने लगा। आहिस्ता–अहिस्ता बल्ब का प्रतिबिंब खोने लगा, उसके साथ विचार भी खोने लगे, मन भी खो गया। अपने भीतर तल्लीन हो जाएं, स्वयं में स्थित।

बहुत बहुत धन्यवाद! ओशो शरणं गच्छामि!

मेरुदंड के कोमल स्नायु में–14

अपने पूरे अवधान को अपने मेरुदंड के मध्य में स्थित कमल–तंतु सी कोमल स्नायु में स्थित करो; और इसमें रूपांतरित हो जाओ।

किसी शायर ने कहा है–

जब बहार आई तो सहरा की तरफ चल निकला,
सहने–गुल छोड़ गया दिल मेरा पागल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।
जब उसे ढूंढ़ने निकले तो निशां तक न मिला,
दिल में मौजूद रहा आंख से ओझल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।
इक मुलाकात भी जो दिल को सदा याद रही,

हम जिसे उम्र समझते थे वो इक पल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।
वो जो अफसाना–ए–गम सुनके हंसा करते थे,
इतना रोये हैं कि अब आंख का काजल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।
हम तो तुम्हें ढूंढ़ने निकले थे परेशान रहे,
जंगल तो जंगल है, शहर भी जंगल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।
जब उसे ढूंढ़ने निकले तो निशां तक न मिला,
दिल में मौजूद रहा, आंख से ओझल निकला।
दिल मेरा पागल निकला।

हमारा सारा पागलपन, हमारा सारा जीवन का दुख, हमारी सारी विक्षिप्तता का एक ही आधार है, जो हमारे भीतर है हम उसे बाहर ढूंढ़ रहे हैं। वह बाहर मिल नहीं सकता, क्योंकि वह बाहर है नहीं। जो शान्ति, जो आनंद, जो प्रेम हम चाहते हैं बाहर से मिले, उसके स्रोत हम स्वयं ही हैं। जब उसे ढूंढ़ने निकले तो निशां तक न मिला, दिल में मौजूद रहा आंख से ओझल निकला। बाहर ढूंढ़ोगे तो वह नहीं मिलेगा। जंगल तो जंगल है, शहर भी जंगल निकला। बाहर भटक जाओगे, खो जाओगे, अपने भीतर लौटो। लेकिन हम अजीब लोग हैं, हम अपने भीतर जाते ही नहीं। यहां तक कि अपने देह से भी हम परिचित नहीं हैं। हम अपने शरीर को भी वैसा ही जानते हैं, जैसा कि दूसरे हमें देखते हैं। हम अपनी देह को भी वैसा ही पहचानते हैं, जैसा कि आइने में वह दिखाई देती। अपने शरीर को भीतर से महसूस करो, अपने मन को भीतर से महसूस करो।

आज भगवान शिव पार्वती को जो सूत्र दे रहे हैं, वह है अपनी रीढ़ की हड्डी पर केंद्रित होने का। वे कहते हैं, हे देवी! अपने पूरे अवधान को अपने मेरुदण्ड के मध्य में स्थित कमलतंतु जैसी कोमल स्नायु में स्थित करो और इसमें रूपान्तरित हो जाओ। अस्थियों से निर्मित है मेरुदण्ड, उसके बीच में एक खाली जगह है, वहां पर स्पाइनल कॉर्ड है। उस स्पाइनल कॉर्ड के

केन्द्र में एक खोखली ट्यूब है। चिकित्सक और वैज्ञानिक समझ नहीं पाते कि इसका उद्देश्य क्या है, यह क्यों है? यह शून्यता, यह खालीपन किस लिए? इस शून्यता में ही पूर्णता छिपी है। काश, हम मेरुदण्ड के भीतर स्थित इस केन्द्र में पहुंच जाएं, इस शून्यता में तो सारे ब्रम्हाण्ड से जुड़ जाएं। लेकिन अपने भीतर झांकना होगा। यह जो बाहर दौड़ने वाली नजर है सदा बहिर्मुखी, उसे भीतर लौटाना होगा। 13वें सूत्र में हमने दो प्रकार की विधियों की चर्चा की थी। एक अंतर्मुखी काल्पनिक लोगों के लिए, दूसरा बहिर्मुखी वैचारिक लोगों के लिए।

आज विज्ञान भैरव तंत्र की चौदहवीं विधि उन लोगों के भी काम की है, जो नास्तिक किस्म के हैं। जो ईश्वर को भी नहीं मानते, आत्मा को भी नहीं मानते। चलो शरीर को तो मानते हैं, इस शरीर पर ही ध्यान केंद्रित करो। मेरुदण्ड पर अपने ध्यान को ले चलो। लेकिन हमारी बहिर्मुखी नजर बाहर से हटनी चाहिए, तभी यह संभव हो पाएगा। मैंने सुना है कि मुल्ला नसरुद्दीन का बेटा फजलू, स्कूल से अपना रिपोर्ट कार्ड लेकर आया, गणित में सौ में से शून्य नंबर मिले थे, नसरुद्दीन बहुत नाराज हुआ। उसने कहा कि इतने कम नंबर गणित में, दिल होता है कि नालायक को दो चाटे मारूं। फजलू ने कहा, हां पापा, दो क्यों, चार चांटे मारिए, मैंने उस नालायक मास्टरजी का घर भी देख रखा है, चलिए। हमें अपनी भूल का तो ख्याल आता ही नहीं, हमेशा दूसरे पर ही हमारी नजर है।

मैंने सुना है मुल्ला नसीरूद्दीन ने एक कुत्ता खरीदा। दो दिन बाद नसीरूद्दीन के पड़ोसी चंदूलाल ने शिकायत की कि मुल्ला आप अपना कुत्ता बेच डालो, क्योंकि इससे मेरी पत्नी को बड़ी परेशानी होती है। जब भी वह शास्त्रीय संगीत का रियाज करने बैठती है, अलाप लेती है, तराने भरती है, आपका कुत्ता बहुत जोर–जोर से भौंकता है और उसे अपना रियाज बंद करना पड़ता है। नसीरूद्दीन ने कहा क्षमा करें, कुत्ता मैं नहीं बेचूंगा, आप ही अपनी पत्नी बेच डालो। क्योंकि उपद्रव की शुरुआत सदा आपकी पत्नी करती है, मेरा कुत्ता नहीं। दूसरे पर हमारी नजर, हमेशा दूसरे की गलतियां खोजते रहते हैं। अपने भीतर झांकने का तो मौका ही नहीं आता। एक और घटना सुनी है मैंने– मुल्ला नसीरूद्दीन और विचित्तर सिंह दोनों शराब पीकर नशे में धुत्त, रात 12 बजे शराबघर से अपने घर लौट रहे हैं, बीच नाली में मुल्ला नसीरूद्दीन गिर पड़ा। विचित्तर सिंह ने उसको उठाया, सहारा दिया और कहा कि यार तेरा कसूर नहीं है, मेरे भाई इसमें तेरा दोष नहीं है, ये साले नगरपालिका वाले, म्यून्सिपलिटी वाले, रात को नालियां उठाकर सड़क के बीच में रख देते हैं। हमारी बहिर्मुखी नजर सदा दूसरों में दोष खोजने वाली होती हैं, अपने भीतर नहीं जा सकेगी।

तो आज की विधि के लिए यह शर्त है कि हम बाहर से मुक्त हों, आस्तिकता की अनिवार्यता नहीं है। परमात्मा में भरोसे की जरूरत नहीं है। बिल्कुल देहवादी नास्तिक के लिए

भी यह विधि काम करेगी, लेकिन एक अनिवार्यता है, अपने भीतर वापस लौटो। इस विधि को समझाते हुए ओशो तंत्र–सूत्र में कहते हैं– मेरुदण्ड तुम्हारी समूची शरीर संरचना का आधार है। सबकुछ उससे संयुक्त है, जुड़ा हुआ है। सच तो यह है कि तुम्हारा मस्तिष्क भी इस मेरुदण्ड का ऊपरी छोर है। शरीरशास्त्री कहते हैं, मस्तिष्क मेरुदण्ड का ही विस्तार है। तुम्हारा मस्तिष्क मेरुदण्ड का ही विकास है और तुम्हारी रीढ़ तुम्हारे सारे शरीर से संबंधित है, सबकुछ उससे जुड़ा हुआ है। यही कारण है कि उसे रीढ़ कहते हैं, आधार कहते हैं।

तंत्र या योग की पुरानी परंपराओं में साधक अनेक तरह की हड्डियों का उपयोग करते थे। अभी भी तांत्रिक अपने पास कोई न कोई हड्डी या खोपड़ी रखता है। दरअसल वह भीतर से एकाग्रता साधने का उपाय है। पहले वह उस खोपड़ी पर एकाग्रता साधता है, फिर आंखें बंद करता है और अपनी खोपड़ी का ध्यान करता है। वह बाहर की खोपड़ी की कल्पना, उसे देखना, उसे भीतर जाने में सहयोगी होती है। अपनी खोपड़ी की प्रतीति उसे होने लगती है। उसकी चेतना स्वयं पर केंद्रित होने लगती है। वह बाहरी खोपड़ी, फिर उसका मनोदर्शन, उस पर ध्यान, ये सब उपाय हैं स्वयं में केन्द्रित होने के। एक बार तुम अपने भीतर केन्द्रीभूत हो गए तो तुम अपने अंगूठे से लेकर सिर तक यात्रा कर सकते हो। तुम भीतर चलो, वहां एक बड़ा ब्रम्हाण्ड छिपा है। तुम्हारी छोटी सी देह में सारा ब्रम्हाण्ड समाया हुआ है।

यह सूत्र मेरुदण्ड का उपयोग करता है। क्योंकि मेरुदण्ड के भीतर ही जीवनरज्जु छिपा है। यही कारण है कि सीधी रीढ़ रखने पर इतना जोर दिया जाता है। अगर रीढ़ सीधी न रही तो तुम भीतरी रज्जु को न देख पाओगे। वह बहुत नाजुक, अति सूक्ष्म है। वह ऊर्जा का प्रवाह मात्र है, पदार्थ नहीं। इसलिए अगर तुम्हारी रीढ़ सीधी है, तभी तुम्हें उस जीवनरज्जु की झलक मिल सकेगी। लेकिन सामान्यतः हमारे मेरुदण्ड सीधे नहीं है। हिन्दुओं ने बचपन से ही मेरुदण्ड को सीधे रखने के उपाय किए हैं, उठने–बैठने–चलने और यहां तक कि सोने तक के ढंग में सीधी रीढ़ रखने पर जोर है और अगर रीढ़ सीधी नहीं है तो उसके भीतरी तत्वों को देखना बहुत कठिन होगा। वह नाजुक मामला है, बड़ा सूक्ष्म है। वास्तव में पोद्गलित नहीं, वह मात्र शक्ति है। इसलिए जब मेरुदण्ड बिल्कुल सीधा होता है तो वह रज्जुवत शक्ति देखने में आती है। शिव कहते हैं, इसमें डूबकर रूपान्तरित हो जाओ। अगर तुम इस रज्जु पर एकाग्र हुए, तुमने उसकी अनुभूति की, तब तुम एक नए प्रकाश से भर जाओगे। वह प्रकाश तुम्हारे मेरुदण्ड से आता होगा, वह तुम्हारे पूरे शरीर पर फैल जाएगा और यहां तक कि तुम्हारे शरीर के भी पार चला जाएगा। जब वह प्रकाश शरीर के पार जाने लगता है, तब प्रभामण्डल दिखाई देते हैं।

हर व्यक्ति का अपना आभामण्डल होता है। जब कोई रज्जुविकास पर ध्यान करता है तब उसका आभामण्डल फैलने लगता है, विस्तीर्ण होने लगता है। साधक की साधना की

गहराई उस आभामण्डल से जानी जा सकती है। इस आभामण्डल पर पहुंचने के लिए मेरुदण्ड के भीतर स्थित कोमल स्नायु पर ध्यान करना बहुत हीं अच्छा होगा। ना मिल सके खोपड़ी कोई बात नहीं। ओशो सुझाव देते हैं कि तुम किसी मेडिकल कॉलेज के स्टूडेण्ट से जाकर अस्थियों का ढांचा प्राप्त कर लो। यह कंकाल मेडिकल कॉलेज के विद्यार्थी अध्ययन करते हैं उनके पास रहता है। एक बार जाकर किसी विद्यार्थी के पास नर कंकाल को देखो। या उससे भी आसान होगा अपनी खोपड़ी का या मेरुदण्ड का एक्सरे उतरवा लो। आजकल एक्सरे से भी अच्छा एम.आर. आई. इमेज होतीं हैं। एक चित्र अपने मेरुदण्ड का अपने पास रखो, अपनी खोपड़ी का अपने पास रखो। उसे देखकर फिर अपने भीतर डूबना बहुत आसान होगा। यद्यपि भीतर से जो दिखाई देगा वह एकदम उस चित्र जैसा नहीं होगा, उससे थोड़ा भिन्न होगा।

भारत में आयुर्वेद का इतना विकास हुआ। कैसे हुआ? आश्चर्य की बात है क्योंकि भारत में लाशें तो गड़ाई नहीं जातीं, जला दिए जाते हैं मुर्दे। तो लाशों के चीर–फाड़ करने का तो कोई उपाय नहीं था। ये सर्जरी कहां से विकसित हुई, शरीर शास्त्र कहां से जन्मा? योगियों ने ध्यान के द्वारा अपने भीतर जाकर सब चीजों को देखा, हड्डियों को, नाड़ियों को, मांसपेशियों को, शरीर के विविध अंगों को। चीर–फाड़ के द्वारा, पोस्टमार्टम के द्वारा इसका पता नहीं चला है। ध्यान के द्वारा, योग के द्वारा पता चला है। तांत्रिकों ने शरीर के बहुत से रहस्य खोजे। धीरे–धीरे आयुर्वेद की पूरी पद्धति विकसित हुई। ज्यादा आसान होगा एम. आर.आई. इमेज को देखकर फिर अपने भीतर ध्यान करने डूबो। तो आज जो हम ध्यान विधि करने जा रहे हैं इसमें हम शुरुआत में रीढ़ की हड्डी की कुछ एक्जरसाइज करेंगे, ताकि उस एक्जरसाइज के साथ आप रीढ़ के प्रति जागरूक हो जाएं। वहां आपका ध्यान चला जाए। तो जैसा–जैसा मैं निर्देश देता चलूं, कृपया वैसा–वैसा करते चलिए।

सबसे पहले खड़े हो जाएं। सामने की तरफ झुकें। सीधे खड़े हों, पीछे की तरफ झुकें, पुनः बीच में आएं, सामने की तरफ झुकें। सामने झुकते हुए श्वास को छोड़ें, वापस सीधे हों, पीछे की तर जाते हुए श्वास को लें। अब आंख बंद करके इस प्रक्रिया को पांच–सात बार चलने दें।

दूसरा एक्जरसाइज, श्वास छोड़ते हुए बाईं तरफ झुकें, दोनो हाथ फैलाकर श्वास लेते हुए मध्य में आएं। पुनः श्वास छोड़ते हुए दाहिनी तरफ झुकें। अब आंख बंद करके इस प्रक्रिया को छः–सात बार दुहराएं।

तीसरा एक्जरसाइज, दोनो हाथों को फैलाए हुए, बारी–बारी से बाईं और दाइं तरफ ऊपर के धड़ को रोटेट करें। पीछे जाते हुए श्वास छोड़ेंगे, सामने आते हुए श्वास लेंगे। भाव

करेंगे श्वास मेरुदण्ड के माध्यम से आ–जा रही है। आंख बंद करके बार–बार पुनरावृत्ति करें। अब बिल्कुल सीधे खड़े हो जाएं। आंख बंद रखें, धीमी गहरी श्वास लें। कल्पना करें यह श्वास मेरुदण्ड से होकर आ–जा रही है। अब आराम से बैठ जाएं। मेरुदण्ड के प्रति होश, आती–जाती श्वास को मेरुदण्ड के मध्य से आता–जाता महसूस करें।

अंतिम चरण, विश्रामपूर्वक लेट जाएं, शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दें, श्वास पर भी नियंत्रण न करें। सहज रूप से जैसी श्वास आ–जा रही है, उसे मेरुदण्ड से आता–जाता महसूस करें। सारा ध्यान मेरुदण्ड पर, अब श्वास पर से ध्यान हटा लें, मेरुदण्ड के भीतर स्थित कोमल स्नायु में केन्द्रित हो जाएं। प्रकाश ही प्रकाश, अद्भुत प्रकाश मेरुदण्ड से फैल रहा है। शरीर के आर–पार भी जा रहा है। यही आपका वास्तविक स्वरूप है।

ओम् नमः शिवाय!

सिर के सभी द्वार बंद करो–15

सिर के सातों द्वारों को अपने हाथों से बंद करने पर आंखों के बीच का स्थान सर्वग्राही हो जाता है।

मनुष्य का जीवन ऐसे है जैसे कोई बिना केन्द्र की परिधि। जब हम कहते हैं ध्यान में भीतर डूबो, अंतर्यात्रा पर चलो तो ख्याल ही नहीं आता कि भीतर यानी क्या? हम बस बाहर ही बाहर अपनी परिधि पर ही जीना जानते हैं और भीतर जाते हैं तो वहां मिलते हैं विचार, कामनाएं और स्वप्न। वे बाहर के जगत ही की छायाएं हैं। वे भी वास्तव में भीतर नहीं, बाहर के ही प्रतिबिंब हैं, जो हमारी स्मृति पर अंकित हो गए। गहरी नींद में हम स्वयं के केन्द्र के निकट पहुंचते हैं किन्तु वह पहुंचना बेहोशी में होता है और हमें कभी पता नहीं चल पाता कि हमारे मन का केन्द्र कहां है, वह केन्द्र ही वास्तव में जीवन्त केन्द्र है, वही जीवन का स्रोत है। चूंकि हम उससे ही अपरिचित हैं, इसलिए हमारा जीवन एक मुर्दे के समान है, केवल शरीर और मन का ही जीवन है। वास्तविक जीवन का, अमृत तत्व का हमें ज्ञान ही नहीं। स्वयं को हम जानते भी हैं तो ऐसे, जैसे कोई अपने वस्त्रों से परिचित हो और वस्त्रों को ही स्वयं का होना उसने समझ लिया हो।

मैंने सुना है, सरदार विचित्तर सिंह कनाडा गए हुए थे। वहां उन्होंने नए जूते खरीदे, एक बहुत मंहगा नया जैकेट खरीदा। शराब पीकर रात अपने घर वापस आ रहे थे, सड़क पर बेहोश होकर गिर पड़े। कोई चोर उचक्के आए, उन्होंने देखा अरे! नए जूते, नया जैकेट। उन्होंने जूता निकाल लिया, जैकेट उतार लिया और उसकी जगह अपने पुराने जैकेट और पुराने जूते पहना दिए। घंटे भर बाद एक कार वहां से गुजरी। कार वाला जोर–जोर से हार्न बजाए जा रहा, पों–पों–पों कर रहा। सरदार विचित्तर सिंह की बेहोशी टूटी। कार ड्राइवर ने गुस्से में चिल्लाकर कहा कि हटो सड़क से वरना मैं तुम्हारे टांगों पर से, तुम्हारी छाती पर से कार को निकाल दूंगा, तुम्हारी हड्डी, पसलियां टूट जाएंगी। सरदार विचित्तर सिंह ने आंख खोली। अपने पैरों की तरफ देखा, फटे पुराने जूते, अपने सीने की तरफ देखा, एक पुरानी मैली–कुचैली जैकेट! उन्होंने कहा, चढ़ा दे, चढ़ा दे गाड़ी मेरे ऊपर से, ये टांगे और छाती मेरी हैं ही नहीं, ये तो किसी और की हैं। वस्त्रों को ही हमने स्वयं का होना समझ लिया है। देह वस्त्र से ज्यादा नहीं है और मन भी वस्त्र से ज्यादा नहीं है। और गहरे जाना होगा, स्वयं के केन्द्र को खोजना होगा।

शिव पार्वती को ये जो विधियां कह रहे हैं ये केन्द्रित होने की हैं। पिछली विधि में उन्होंने कहा था कि मेरुदण्ड में स्थित, कोमल स्नायु में स्थित हो जाओ, आज की विधि में वे कहते हैं कि हे देवी! सिर के सातों द्वारों को अपने हाथों से बंद करने पर आंखों के बीच का स्थान सर्वग्राही हो जाता है। ओशो इस विधि को समझाते हुए टिप्पणी करते हैं, यह एक बहुत पुरानी विधि है, पुरानी से पुरानी विधि और इसका प्रयोग भी बहुत हुआ है। यह सरलतम विधियों में से एक है। सिर के सभी द्वारों को आंख, कान, नाक, मुंह सब को बंद कर दो। जब सिर के सब द्वार, दरवाजे बंद हो जाते हैं, तो तुम्हारी चेतना जो सतत बाहर जा रही थी यकायक रुक जाती है, ठहर जाती है। अब वह बाहर नहीं जा सकती। तुमने ख्याल नहीं किया होगा कि अगर तुम क्षण भर के लिए भी श्वास लेना बंद कर दो तो तुम्हारा मन भी ठहर जाता है। क्यों? क्योंकि श्वास के साथ मन चलता है, वह मन का एक संस्कार बन गया है।

अगर सिर के सातों छिद्र, उसके सातों द्वार बंद कर दिए जाएं तो तुम्हारी चेतना अचानक गति करना बंद कर देगी। तब चेतना भीतर स्थिर हो जाएगी और उसका यह स्थिर होना तुम्हारे आंखों के बीच खाली स्थान बना देगा। वह स्थान ही त्रिनेत्र या तीसरी आंख या शिवनेत्र कहलाता है। अगर सिर के सभी द्वार बंद कर दिए जाएं तो तुम बहिर्गमन नहीं कर सकते, क्योंकि तुम सदा इन्हीं द्वारों के द्वारा बाहर संसार की ओर जाते हो, तब तुम अपने भीतर थिर हो जाते हो और वह थिर होना, एकाग्र होना इन दो आंखों, साधारण आंखों के बीच घटित होता है। चेतना इन दो आंखों के मध्य के स्थान पर केन्द्रित हो जाती, उस स्थान

को ही तीसरी आंख कहा जाता है। यह स्थान सर्वग्राही, सर्वव्यापक हो जाता है।

यह सूत्र कहता है कि इस स्थान में सब सम्मिलित है, सारा अस्तित्व समाया है। अगर तुम इस स्थान को अनुभव कर लो तो तुमने सबको अनुभव कर लिया। एक बार तुम्हें इन दो आंखों के बीच के आकाश की प्रतीति हो गई, इस अंतर्आकाश में तुमने सारे अस्तित्व को जान लिया, उसकी समग्रता को जान लिया क्योंकि यह आंतरिक आकाश सर्वग्राही है, सर्वग्राहक है, सर्वव्यापक है, कुछ भी उसके बाहर नहीं है। उपनिषद् कहते हैं, उस एक को जानकर सब जान लिया जाता है। ये दो आंखें, ये चर्मचक्षु तो सीमित को ही देख पाते हैं, तीसरी आंख असीम को देखती है। ये दो आंखें तो पदार्थ को ही देख सकती हैं, तीसरी आंख अपदार्थ को, अध्यात्म को, परमात्मा को देखती है। यह भी जरूरी नहीं कि सिर के इन द्वारों को हाथों से बंद करो, बंद करना भर जरूरी है। इसलिए चाहो तो कानों के लिए डॉट (ईयर प्लग्स) और आंखों के लिए पट्टी (ब्लाइन्ड फोल्ड्स) का उपयोग कर सकते हो। असली बात यह है कि कुछ क्षणों के लिए सिर के सारे द्वार बंद हो जाएं। इसका प्रयोग करो किंतु अभ्यास मत करना। अचानक करने से ही यह विधि कारगर है। अचानक में ही सारा रहस्य छिपा है। बिस्तर में पड़े–पड़े अचानक सभी द्वारों को कुछ सेकेण्ड के लिए बंद कर दो और भीतर देखो कि क्या हो रहा है? बस एक शर्त है इस विधि को करने के लिए, अपने भीतर जाने का भाव और वह तभी संभव है जब बाहर की दुनिया से तुम्हारा रस समाप्त हो गया है। अगर तुम्हारा इंटरेस्ट, तुम्हारी उत्सुकता बाहर की जगत में है तो अपने भीतर न जा सकोगे।

यह महलों, यह तख्तों, यह ताजों की दुनिया, यह इन्सां के दुश्मन समाजों की दुनिया
यह दौलत के भूखे रिवाजों की दुनिया, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!
हर एक जिस्म घायल, हर इक रूह प्यासी, निगाहों में उलझन, दिलों में उदासी
यह दुनिया है या आलमे–बदहवासी, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!
यहां इक खिलौना है इन्सां की हस्ती, यह बस्ती है मुर्दा–परस्तों की बस्ती
यहां पर तो जीवन से है मौत सस्ती, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!
जवानी भटकती है बदकार बनकर, जवां जिस्म सजते हैं बाजार बनकर
यहां प्यार होता है व्यापार बनकर, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!
यह दुनिया जहां आदमी कुछ नहीं है, वफा कुछ नहीं, दोस्ती कुछ नहीं है
जहां प्यार की कद्र ही कुछ नहीं है, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!

जला दो उसे फूंक डालो यह दुनिया, मेरे सामने से हटा लो यह दुनिया तुम्हारी है तुम ही संभालो यह दुनिया, यह दुनिया अगर मिल भी जाए तो क्या है!

इस दुनिया में जिसकी उत्सुकता समाप्त हो गई, केवल वही अंतर्मुखी हो सकता है। ये सातों द्वारों को बंद करने वाली विधि बहुत आसान विधि है। बड़ी प्राचीन और सरलतम विधि है। अचानक करना है तो हम ऐसा करेंगे, संगीत के साथ नृत्य करेंगे। अचानक मैं बीच में कहूंगा हरि ओम्, संगीत बंद हो जाएगा। उस समय आप अपने दोनो हाथों से सिर के सातों द्वार अर्थात दोनों आंखें, दोनों कान, दोनों नथुने और मुंह बंद कर दें। दुबारा जब मैं कहूं कि हरि ओम्, तब अचानक फिर हाथ हटाकर आप नृत्य में मगन हो जाएं। अचानक करने से ही यह विधि कारगर होती है।

तो चलें शुरू करते हैं। संगीत के साथ नाचें, भक्ति में झूमें, डोलें उत्सव मनाएं। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। हरिओम--। अब आराम से लेट जाएं। दोनो आंखों के मध्य भृकुटियों के बीच में लगभग एक डेढ़ इंच भीतर अंतर्आकाश को महसूस करें। इसमें सारा ब्रम्हाण्ड समाया है। इसी को जानकर स्वामी राम कहा करते थे- चांद, सूरज, तारे मेरे भीतर चलते हैं। इसी को जानकर मंसूर ने कहा अनलहक। इसी को जानकर उपनिषद् के ऋषि कहते हैं, अहम् ब्रम्हास्मि। यह तीसरा नेत्र द्वार है। जहां घर के भीतर का आकाश घर के बाहर के आकाश से मिलता है। आकाश विभाजित नहीं है। तुम सर्वव्यापी चैतन्य हो।

ओम् नमः शिवाय!

कमल के केन्द्र में पहुंचो–16

हे भगवती, जब इंद्रियां हृदय में विलीन हों, कमल के केन्द्र में पहुंचो।

जानते हो? कैवल्य उपनिषद् का ऋषि शुरुआत करता है उपनिषद् को इसी प्रार्थना से कि हे प्रभु! मेरी इंद्रियां ज्यादा सबल हों, ज्यादा मजबूत हों। मैं ज्यादा संवेदनशील, सेंसिटिव बनूं। जितनी तुम्हारी संवेदनशीलता होगी, उतना ही होश होगा, उतना ही ध्यान होगा, उतने ही तुम ज्यादा जीवन्त होओगे और जीवन के केन्द्र, परमात्मा को पहचान सकोगे। आज की विधि, शिव कहते हैं पार्वती से, हे भगवती! जब इंद्रियां हृदय में विलीन हों, कमल के केन्द्र में पहुंचो। यह भावप्रवण लोगों के लिए है। किसी घटना के घटने पर जरा अपने भीतर निरीक्षण करना, तुम्हारा हृदय उद्वेलित होता है या कि तुम्हारा मस्तिष्क। अगर तुम मस्तिष्क प्रधान व्यक्ति हो, विचारो में कुशल हो और संवेदनाएं तुम्हारे भीतर नहीं हैं, यह विधि ही तुम्हारे लिए कारगर न होगी। याद रखना, जिन 112 तांत्रिक विधियों की हम चर्चा कर रहे हैं, भिन्न–भिन्न प्रकार के लोगों के लिए भिन्न–भिन्न विधियां हैं। उदाहरण के लिए पिछली विधि पंद्रह नंबर की वह देह प्रधान लोगों के लिए है, देह केन्द्रित लोग और आज की विधि भावप्रवण लोगों के लिए है।

अपने व्यक्तित्व का टाइप देखना, तभी तुम्हें समझ में आएगा कि कौन सी विधि तुम्हारे लिए काम करेगी। जैसे केमिस्ट की दुकान में बहुत सी दवाइयां होती हैं, तुम्हारी बीमारी क्या, तुम्हारा निदान क्या, वही तुम्हारे लिए काम की दवा होगी। हर कोई दवा मत उठा लेना, दवा नुकसान भी कर सकती है अगर वह तुम्हारी जरूरत नहीं है। तो सबसे पहले तो अपनी इंद्रियों

को ज्यादा संवेदनशील बनाना। जब किसी चीज को छूते हो तो उस स्पर्श की संवेदना को खूब सघन होने दो, मानो तुम्हारा पूरा हृदय ही तुमने उलीच दिया है। तब तुम्हारी हथेलियां बस यूं हीं न छुएं ठण्डे हाथों से, मुर्दे की भांति, तुम्हारे पूरे प्राण हथेलियों पर आ जाएं। किसी वृक्ष के किनारे बैठे हो या टिककर बैठे हो या वृक्ष को कभी गले लगाओ, लिपट जाओ उससे और पूरे शरीर से वृक्ष के स्पर्श को महसूस करो, उसके साथ एकात्म हो जाओ। किसी फूल की जब सुगंध लो, इतनी गहराई से सुगंध लो कि तुम्हारे पूरे प्राण आन्दोलित हो जाएं, तुम्हारा हृदय कमल खिलने लगे। बगैर विचार के भोजन का स्वाद लो।

मैं देखता हूं लोगों को, भोजन की टेबल पर बैठे खाना खा रहे हैं और राजनीति की चर्चाएं चल रहीं हैं, नहीं, विचार की कोई जरूरत नहीं, जब भोजन कर रहे हो, स्वाद ही हो जाओ, पूरे के पूरे स्वाद में निमज्जित हो जाओ। इस प्रकार धीरे–धीरे तुम्हारी संवेदनशीलता बढ़ेगी। ठण्ड की सुबह है, कुनकुनी धूप चेहरे पर पड़ रही है, अपने लॉन में बैठे हो आराम–कुर्सी पर, धूप की किरणों को महसूस यूँ करो जैसे इन किरणों के माध्यम से सूरज ने अपने हाथ तुम तक फैला दिए हैं, जैसे की सूरज तुम्हें स्पर्श कर रहा है। तुम्हारे चेहरे पर पड़ती ये गुनगुनी धूप तुम्हारे हृदय को आन्दोलित करे। भाव से भरो। केवल इसी प्रकार के व्यक्ति के लिए शिव की यह विधि काम आएगी। शिव जब कहते हैं कमल, तो याद रखना, उनका तात्पर्य कमल से हृदय ही है। पुराने जमाने में कमल की उपमा सहस्रार के लिए और हृदय के लिए विशेष रूप से दी जाती थी। हमारे देश में एक खूबी है, कोई एक उपमा अगर प्रसिद्ध हो जाती है फिर सभी के लिए हम उसी का उपयोग करने लगते हैं। हाथों के लिए भी हम कहने लगते हैं कमल, चरणकमल कहने लगते हैं पैरों के लिए।

इस विधि में जब शिव कह रहे हैं कि इंद्रियों को हृदय में विलीन होने दो और कमल के केन्द्र पर पहुंचो। ऐसे समझो जैसे किसी फूल की पांच पंखुड़ियां होती हैं ऐसे ही हमारी पांच इंद्रियां हैं। जिस बिंदु पर वे मिलती हैं अगर वह बिंदु हृदय है तब बड़ी आसानी से किसी भी संवेदना के माध्यम से तुम अपने हृदय में प्रवेश कर जाओगे और हृदय से फिर नाभि केन्द्र पर पहुंचना बहुत आसान है। एक साधारण प्रेमपात्र भी बड़ा दिव्य और भगवत्ता से ओतप्रोत दिखने लगता है जब तुम हृदयपूर्वक उसे देखते हो, प्रेमपूर्वक उसे देखते हो। किन्तु बाद में बुद्धि हस्तक्षेप करने लगती है, तर्क करने लगती है, विचार बीच में आ जाते हैं, कल्पना, स्मृतियां और तुलनाएं बीच में आ जाती हैं और तब भाव नष्ट हो जाता। अपने भाव को बचाना, विचारों को छोड़ो। कोई मुझसे पूछ रहा था कल कमल के बारे में कि हृदय को कमल क्यों कहा गया? यह एक काव्यात्मक उपमा है। शब्दों को मत पकड़ना, दार्शनिक इसी पर बहस करने लगते हैं कि कमल का क्या अर्थ है? कमल की जगह कुछ और क्यों नहीं कहा? नहीं, शब्दों को मत पकड़ना, शब्द के पीछे छिपे भाव को देखना, लेकिन अजीब लोग हैं हम, शब्दों को बुरी तरह

पकड़ते हैं।

मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन किसी सेठजी के यहां नौकरी कर रहा था। एक बार सेठजी ने कहा, जाकर तीन पैकेट सिगरेट के खरीद लाओ। मुल्ला गया, लगभग पंद्रह मिनट दूर दुकान थी। पंद्रह मिनट जाने में, पंद्रह मिनट आने में लगे, आधे घंटे बाद सिगरेट का एक पैकेट लेकर आया, फिर दुबारा गया, आधे घंटे में दूसरा पैकेट लेकर आया, फिर तीसरे आधे घंटे में तीसरा पैकेट लेके आया। उसके मालिक ने कहा कि हद कर दी, तीनों सिगरेट के पैकेट एक साथ ला सकते थे, ये अलग-अलग तीन बार जाने की क्या जरूरत थी? मुल्ला ने कहा ठीक, मैं आपकी बात समझ गया, आगे से ऐसा ही करूंगा, सब चीजें एक साथ ले आऊंगा जो लाई जा सकती हैं। हफ्ते भर बाद मालिक बीमार पड़ा और उसने कहा किसी डॉक्टर को, चिकित्सक को बुला लाओ इलाज के लिए। मुल्ला गया, घंटे भर बाद लौटा, कोई 10-12 लोग उसके साथ थे। मालिक ने पूछा, मैंने डॉक्टर को बुलाने भेजा था, ये 10-12 लोग किस लिए? मुल्ला ने कहा कि डॉक्टर को तो ले आया मैं, फिर मैंने सोचा, डॉक्टर कोई दवाई लिखेगा तो मैं केमिस्ट को भी ले आया हूं, फिर दवाई के बाद हो सकता है इंजेक्शन लगाना पड़े तो मैं कंपाउंडर, नर्स को भी बुला लाया हूं, हो सकता है इलाज के बाद आप बचें न तो मैं अर्थी वाले को, कफन वाले को, लकड़ी बेचने वाले को, मरघट पर दाह संस्कार का क्रियाकाण्ड करने वाले को, सबको बुला लाया हूँ, पता नहीं किसकी जरूरत पड़े। अब उसने एक शब्द को पकड़ लिया, तीन सिगरेट के पैकेट एक साथ लाने वाली बात को।

शब्दों को मत पकड़ना, भीतर के भाव को पकड़ना। ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, आंख बंद करो और किसी चीज को स्पर्श करो। अपने प्रेमी या प्रेमिका को छुओ, अपनी माँ को या बच्चे को छुओ या मित्र को या वृक्ष को, फूल को या महज धरती को स्पर्श करो। आंखे बंद करो और अपने और धरती के बीच, प्रेमिका और अपने बीच होते आंतरिक संवाद को महसूस करो। भाव करो कि तुम्हारा हाथ ही तुम्हारा हृदय है जो धरती को स्पर्श करने आगे बढ़ा है। स्पर्श की अनुभूति को हृदय से जुड़ जाने दो। अगर संगीत सुन रहे हो उसे दिमाग से मत सुनो, भूल जाओ मस्तिष्क को और समझो कि मैं बिना सिर के हूं, मेरा कोई मस्तिष्क ही नहीं है। अच्छा हो कि अपने सोने के कमरे में अपना एक चित्र रख लो, जिसमें तुम्हारा सिर न हो। फोटोग्राफर से ऐसा एक चित्र बनवा लो, उस पर ध्यान को एकाग्र करो और भाव करो कि तुम बिना सिर के हो। सिर को बीच में आने ही मत दो। संगीत को सीधा-सीधा हृदय से सुनो। भाव करो की संगीत तुम्हारे हृदय में जा रहा है। हृदय को संगीत के साथ उद्वेलित होने दो, हमारी इंन्द्रियों को भी हृदय से जुड़ने दो, मस्तिष्क से नहीं। यह प्रयोग सभी इंद्रियों के साथ करो और अधिकाधिक भाव करो कि प्रत्येक ऐंद्रिक अनुभव हृदय में जाता है और उसमें विलीन हो जाता है।

हे भगवती! जब इंद्रियां हृदय में विलीन हों, कमल के केन्द्र पर पहुंचो। शिव कह रहे हैं, हृदय ही कमल है और इंद्रियां कमल की पंखुड़ियां हैं। पहली बात अपनी इंद्रियों को हृदय के साथ जुड़ने दो और दूसरी बात सदा भाव करो की इंद्रियां सीधे हृदय में गहरी उतरती हैं और उसमें घुल–मिल जाती हैं। जब ये दो काम हो जाएंगे तभी तुम्हारी इंद्रियां तुम्हारी सहायता करेंगी, तब वे तुम्हें तुम्हारे हृदय तक पहुंचा देंगी और तुम्हारा हृदय कमल बन जाएगा। यह हृदय कमल तुम्हारा केन्द्र होगा और जब तुम अपने हृदय के केन्द्र को जान लोगे तब नाभि केन्द्र को पाना बहुत आसान हो जाएगा। यह बड़ा सरल है, यह सूत्र उसकी चर्चा भी नहीं करता, उसकी आवश्यकता भी नहीं। अगर तुम सच में ही समग्रता से हृदय में विलय हो गए और बुद्धि ने काम करना छोड़ दिया तो तुम नाभि केन्द्र में पहुंच जाओगे। हृदय से नाभि की ओर द्वार खुलता है, सिर से नाभि की ओर जाना बहुत कठिन है।

तो आज हम जो विधि करेंगे, अपनी संवेदनशीलता को और जागरूकता को बढ़ाने की विधि है। इसके पहले एक बात और समझ लें, पुराने जितने धर्म हैं, हिन्दू धर्म, यहूदी धर्म, ईसाई धर्म और मुसलमान धर्म, वे सब भावप्रधान विधियों पर, प्रार्थनाओं पर जोर देते हैं। पुराने जमाने में जब इतनी शिक्षा नहीं थी, विज्ञान नहीं था, लोग ज्यादा भावप्रधान थे। आज के युग के लिए बुद्ध और महावीर की विधियां ज्यादा कारगर होंगी क्योंकि लोग हृदय से नहीं मस्तिष्क से जीने लगे हैं और विशेषकर आधुनिक शिक्षित मनुष्य उसके लिए ओशो की विधियां ही कारगर होंगी। वे बुद्ध और महावीर की विधियों के भी नए संस्करण हैं, तो याद रखना शिव की यह विधि अति संवेदनशील लोगों के काम की है।

तो सबसे पहले बैठ जाएं, हृदय पर अपने दोनों हाथ रख लें। भक्तिभाव से भरें, महसूस करें कानों से आ रही संगीत की तरंगे, ध्वनियां सीधे हृदय में जा रही हैं। बंद आंखों में पलको के माध्यम से आ रही रोशनी सीधे हृदय में उतर रही है। नीचे जमीन या गद्दे का स्पर्श उससे हृदय आंदोलित हो रहा है, श्वास में आती–जाती हवा की सुगंध सीधे तुम्हारे हृदय को छू रही है। तुम्हारा हृदय पुलकित हो रहा है। इस भाव में बैठ कर चारों ओर की हवाओं में परमात्मा की दिव्य उपस्थिति को महसूस करो। धीमी गहरी श्वास लो, श्वास लेते हुए कोहनी को ऊपर उठाएं। तीन सेकंड श्वास को भीतर रोकें फिर अहिस्ता–आहिस्ता श्वास छोड़ते हुए कोहनियों को नीचे जाने दें। अंत में एक मिनट पूर्ण विश्राम! सारी इंद्रियां हृदय में विलीन हो गई। अतिसंवेदनशील होकर कमल के केन्द्र में पहुंच कर शिथिल हो जाएं, लेट जाएं, हृदय के केन्द्र में स्थित हो जाएं। जीवन के इस केन्द्र में विश्राम ही समाधि है। विश्राम, होशपूर्ण, प्रेमपूर्ण, पूरी तरह शिथिल हो जाएं। आनंदपूर्ण विश्राम में डूबें, हृदय ही आनंद को जानता है। परमानंद के भाव में विलीन हो जाएं। अब अपने दोनों हाथ जोड़ लें और पूरे हृदय से अहोभाव पूर्वक कहें– 'ओम् नमः शिवाय!'

मन को भूलो, मध्य में रहो–17

मन को भूलकर मध्य में रहो– जब तक।

जैसे भौतिक विज्ञान के जगत में अलबर्ट आइंस्टीन का फार्मूला है, ठीक वैसे ही ये 'विज्ञान भैरव तंत्र' में भगवान शिव के सूत्र हैं। आज तंत्र सूत्र की 17वीं विधि अति संक्षिप्त फार्मूला ही है। कहते हैं भगवान शिव, मन को भूलकर मध्य में रहो, जब तक। सुनने में लगेगा शायद वाक्य अधूरा है, 'जब तक' यहीं पर खत्म हो गया। पूरी बात इसमें आ गई। 'जब तक', क्या जब तक? वह परम रहस्य कहा नहीं जा सकता, वह अकथनीय अनुभव जाना तो जा सकता है, शब्दों में वह नहीं समाता। बस उसका सूत्र दे रहे हैं, विधि, उसकी टेकनीक, उसका तंत्र; मन को भूलकर मध्य में रहो। मन ऐसा है जैसे पुरानी घड़ी पेण्डुलम वाली होतीं थीं न, बाएं से दाएं, दाएं से बाएं पेण्डुलम चलता रहता, तभी घड़ी चलती है, ठीक इसी प्रकार हमारा मन है। सदा अतियों में डोलता, एक एक्सट्रीम से दूसरी एक्सट्रीम पर। पहले क्रोध करता है फिर थोड़ी देर बाद पश्चाताप् करता है, पश्चाताप् करने के बाद फिर क्रोध आएगा, फिर पश्चाताप् आएगा। पूरी जिंदगी बस यूं ही बीत जाती है। कभी लोभी हो जाता है यह चित्त, कभी दानी हो जाता है, दान देने के बाद फिर लोभ में पड़ जाता है, शोषण करने के बाद फिर दान की सोचने लगता है। जिससे हम मोहब्बत करते हैं, उसी से हम नफरत करते हैं। पहले प्रेम, फिर घृणा, फिर प्रेम, फिर घृणा। जैसे मौसम आते जात हैं, ठण्ड के दिन आ गए, फिर गर्मी आने वाली है, फिर बरसात आ जाएगी, फिर ठण्ड आ जाएगी। यह मन वर्तुलाकार घूमता रहता।

गौतम बुद्ध के समय की यह कहानी है, श्रोण के बारे में। एक राजकुमार था, श्रोण नामक, बहुत भोगी–विलासी। उससे ज्यादा विलासपूर्ण व्यक्ति शायद कोई न हुआ हो, फिर वह बुद्ध का संन्यासी हो गया। कोई सोच भी नहीं सकता था कि यह अतिभोगी व्यक्ति किसी दिन तपस्वी बनेगा। लेकिन मन ऐसा ही है, भोग की अति को छू लिया, अब त्याग की अति को छुएगा। पेण्डुलम अब दूसरी तरफ जाएगा। बुद्ध मुस्कुराए, जब उसने त्याग किया, तपस्या शुरू कर दी। फिर खबरें आने लगीं कि अन्य भिक्षु तो दिन में एक बार भोजन करते हैं, श्रोण दो दिन में, तीन दिन में एक बार भोजन लेता है। अन्य भिक्षु सड़क पर चलते हैं, श्रोण सड़क से उतर कर कंकड़ों–पत्थरों में, कांटों में चलता है। अन्य भिक्षु वस्त्र पहनते हैं, श्रोण ने वस्त्र पहनना भी छोड़ दिया। उसकी सुंदर काया सूखकर काली हो गई, छः महीने में हड्डी–हड्डी हो गया, प्यासा रहता, पानी भी न पीता। बुद्ध तक खबरें आती रहीं, बुद्ध मन ही मन मुस्कराते।

फिर छः महीने बाद श्रोण को अपने पास बुलाया और उससे कहा कि श्रोण, मैंने सुना है कि जब तुम राजकुमार थे, तुम संगीत के बड़े शौकीन थे, बड़ी अद्भुत वीणा बजाते थे। एक बात तुमसे पूछना चाहता हूं, यदि वीणा के तार बहुत कसे हों, क्या तब संगीत पैदा हो सकता है? श्रोण ने कहा, नहीं भगवन्! अगर तार बहुत कसे हों तो उनको छूने से ही वे टूट जाएंगे, संगीत उत्पन्न न होगा। बुद्ध ने पूछा, यदि वीणा के तार बिल्कुल ढीले हों, क्या तब संगीत पैदा होगा? श्रोण ने कहा, नहीं भंते! यदि तार बिल्कुल ढीले हों तो उन पर चोट पहुंचाने से आवाज उत्पन्न ही न होगी। बुद्ध कहने लगे, फिर बताओ तार कैसे होने चाहिए? श्रोण ने कहा कि वीणा के तार न तो बहुत कसे होने चाहिए, न बहुत ढीले, मध्य की एक अवस्था होती है, उसमें ठीक–ठीक संगीत के सुर पैदा होते हैं। बुद्ध हंसने लगे और कहा कि श्रोण, जैसे तुम वीणा बजाने में कुशल हो, मैं भी जीवन की वीणा बजाने में कुशल हूं। एक अंतर्संगीत मैंने अपने भीतर पैदा किया है और उसकी कला भी वही है, जो बाहर के संगीत की कला है। हृदय की वीणा के तार न तो बहुत कसे हों, न ढीले हों, तब जाकर वह अंतर्संगीत, अनाहत नाद पैदा होता है। श्रोण पहले तुम महाभोगी थे, अब तुम महात्यागी हो गए। तुम एक अति से दूसरी अति पर चले गए, दोनों के मध्य में है मार्ग।

इसलिए गौतम बुद्ध का मार्ग, मध्यम मार्ग या पाली भाषा में 'मज्झिम निकाय' कहलाता है, 'सदा मध्य में रहो', सदा बीच में रहो। सर्कस में रस्सी पर चलते हुए नट को देखा न, हाथ में एक डण्डा लिए चलता है। जब बाएं गिरने का खतरा पैदा हो जाता है तो डण्डे को थोड़ा सा दाहिने को झुका लेता, अगर भय लगे कि दाहिने न गिर जाऊं, तो थोड़ा सा बाएं वजन को झुका लेता और इस प्रकार संभलकर, संतुलन की अवस्था में वह चलता है। जिंदगी भी एक ऐसा ही खेल है। यहां जो मध्य में चलता है, वही अपनी मंजिल तक पहुंच पाता है, अतियों से बचना। संस्कृत में एक कहावत है, 'अति सर्वत्र वर्जयेत'। उसकी वर्जना करना और तब तुम पाओगे, तुमने जीवन का संगीत पा लिया। विपरीत ध्रुवों से सदा बचना, ये प्रेम और घृणा का

द्वंद, भोग और त्याग का द्वंद्व, संसार और संन्यास का द्वंद्व, क्रोध और पश्चाताप का द्वंद्व, इन सबसे बचना। इसलिए ओशो की शिक्षा 'जोरबा दी बुद्धा' बन जाती है। न तो तुम भौतिकवादी बन जाना और न ही अध्यात्मवादी बन जाना। दोनों के ठीक मध्य में रहना और तब तुम संतुलन को पा लोगे। लेकिन सामान्यतः हम बस प्रेम और घृणा के बीच, क्रोध और पश्चाताप के बीच डोलते रहते हैं। इस डोलने में अपने जीवन को नष्ट करते हैं।

मैंने सुना है, सेठ चंदूलाल के घर डकैतों ने धावा बोला। एक–एक सामान टीवी और फ्रिज और आल्मारियां उठा–उठाकर वे ले जाने लगे और ट्रक में लादने लगे। अंत में चंदूलाल ने कहा कि भईया एक कृपा करो, यह जो संदूक रखा है, इसको भी उठाकर ले जाओ। एक डकैत ने मजाक में पूछा, क्या इस संदूक में तेरी बीबी छिपकर बैठी है? चंदूलाल ने कहा, नहीं भईया, बीबी तो गोदरेज की आल्मारी में थी, वो चली गई ट्रक में, इसमें मेरी सास छिपी बैठी है। हम जिन्हें अपना कहते हैं, जिनसे हम प्रेम करते हैं, उनसे ही हम घृणा भी करते हैं। प्रेम और घृणा का द्वंद्व चलता रहता है। मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन शादी के पहले अपनी प्रेमिका से कहा करता था कि तेरे बिना मैं जी न सकूंगा, तुझको जरा सी कोई तकलीफ होती है तो मेरे प्राण निकलने को होते हैं। ये शादी के पहले कि बात है, तीन साल बाद की घटना सुनो। एक दिन नसरुद्दीन पहुंचा डॉक्टर के पास और कहा कि डॉक्टर साहब, मैं बहुत जल्दी में हूं, समय मेरे पास है नहीं, फटाफट दांत उखाड़ दीजिए। डॉक्टर ने कहा, भाई मसूड़ों को सुन्न करने में, एनेस्थीसिया लगाने में थोड़ा सा समय तो लगेगा। नसरुद्दीन ने कहा, एनेस्थेसिया वगैरह की कोई जरूरत नहीं, आप चिंता न करें, आप तो बस फटाफट दांत उखाड़ दें, मुझे जल्दी जाना है। नसरुद्दीन की बहादुरी और साहस से डॉक्टर बहुत प्रभावित हुआ। उसने कहा, बड़े वीर जान पड़ते हो, बड़े हिम्मतवर हो, बिना एनेस्थीसिया के दांत उखड़वाना है। कौन सा दांत खराब है? आओ, दिखाओ। नसरुद्दीन पीछे पलटा, अपनी पत्नी को आवाज लगाई कि गुलजान आओ, बताओ कौन सा दांत है? तीन साल पहले जिससे कहा करते थे कि तुम्हें जरा सी तकलीफ होती है तो मेरे प्राण निकलते हैं। आज उसके प्राण भी निकल जाएं तो उनको तकलीफ न होगी, शायद खुशी ही होगी।

प्रेम घृणा में बदल जाता है। मैंने सुना है, एक कंप्यूटर एक्सपर्ट अपने मित्र को मोबाइल पर बता रहा था कि प्रेमिका एक नेट वायरस के समान है, जो आपके लाईफ के सिमकार्ड में इंटर करके, पॉकेट को स्कैन करके, पैसा अपने पॉकेट में ट्रांसफर कर लेती है। आपके माइंड को एडिट कर प्रॉब्लम को डाउनलोड कर देती है और आपकी स्माइल को डिलीट कर आपको हमेशा के लिए हैंग कर देती है। द्वंद्व से बचना, न तो प्रेम की अति पर जाना, न घृणा की अति पर जाना। वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जैसे सूर्योदय होता है तो फिर सूर्यास्त होता है। अगर सूर्य उदय हो गया है, अब सूर्यास्त से न बच सकोगे। यदि दिन हो गया है, तो बस रात आने ही वाली है। ठीक ऐसा ही हमारा मन सदा अतियों पर जीता है। शिव एक अद्भुत सूत्र दे

रहे हैं, अति संक्षिप्त। कह रहे हैं, मन को भूलकर मध्य में रहो। ठीक बीच में रुक जाना और तुम पाओगे तुम मनातीत अवस्था को जान लिए। 'जब तक', जब तक क्या? जब तक तुम आत्मस्थित न हो जाओ, जब तक तुम परमात्मा को ना जान लो।

अद्भुत हैं भगवान शिव, परमात्मा का नाम भी बीच में नहीं लाते, आत्मा शब्द का उपयोग तक नहीं करते। वे तो विधि देते हैं, तरकीब देते हैं, उसे जानने की, चर्चा करने की जरूरत नहीं। चर्चा से दर्शनशास्त्र खड़ा होता है, प्रामाणिकता से जियो। निश्चित रूप से ऐसे व्यक्ति भी प्रेम से भरे होते हैं, किन्तु उनका प्रेम अन्य प्रकार का होता है। वो हमारे प्रेम की तरह उत्तप्त, गर्म नहीं होता, बड़ा शीतल और शांत होता है। अधिकांश लोग तो उस प्रेम को पहचान भी न पाएंगे। बुद्ध की पत्नी यशोधरा बुद्ध के प्रेम को न पहचान सकी। 12 साल बाद जब वे लौटकर घर आए, वे तो बड़े प्रेम से भरे थे किन्तु यशोधरा उस प्रेम को पहचान न सकी। ठीक ऐसी ही घटना मेरी और जीसस के बारे में है। मेरी जीसस के प्रेम को नहीं पहचान पाती, जीसस का प्रेम इतना शांत और शीतल है। संसार में वैसा प्रेम हमने कभी जाना नहीं। इसीलिए एक नया नाम रखना पड़ता है उस प्रेम का, कहना पड़ता है करुणा। प्रेम कहने में मुश्किल होता है, हमारे जैसा प्रेम तो नहीं जो जरा में घृणा में बदल जाता है। नहीं, वैसा प्रेम नहीं, अति वाला प्रेम नहीं, मध्य वाला प्रेम। तो आज इस मध्य में ठहरने के लिए हम एक छोटी सी विधि करेंगे। खुशी और उदासी के बीच, हंसी और रूदन के बीच मध्य को खोजेंगे। तो पहले अपने मन के पेण्डुलम को अति पर जाने देंगे और फिर मध्य में ठहर जाएंगे।

तो सभी लोग आराम से बैठ जाएं। आंख बंद कर लें और अपने चेहरे पर खुशी का भाव लाएं, भीतर से प्रसन्न हों, चेहरे पर आपके मुस्कान हो। एक मिनट इस खुशी के भाव में डूबें। चलो, अब दूसरी अति पर चलते हैं। बिल्कुल उदास हो जाएं, एकदम गंभीरता, लटका हुआ मुंह। तीसरा चरण– हंसी, अकारण हंसें, खूब प्रसन्न हों, खिलखिलाकर छोटे बच्चों की भांति, लोट–पोट हो जाएं, हंसते–हंसते। चौथा चरण– 'रुदन', जितना हंसे अब उतना ही रो लें, अकारण रोएं, बह जाने दें आंसुओं को, छाती पीट–पीटकर रोएं। पांचवां अंतिम चरण– विश्राम में लेट जाएं, न खुशी, न उदासी, न हंसी, न आंसू, न क्रोध, न पश्चाताप, सब द्वंद्वों के पार। न प्रेम, न घृणा, न कठोरता, न करुणा, सब ध्रुवीय विपरीतताओं के पार तुम्हारा स्वयं का होना। जैसे घड़ी का पेण्डुलम बीच में रुक गया हो, ऐसे थिर हो गए। कृष्ण इसे कहते हैं स्थितप्रज्ञ की अवस्था। जैसे किसी कमरे के खिड़की दरवाजे बंद हों, किसी वातायन से कोई हवा का झोंका न आता हो और उस कमरे में एक दीपक जल रहा हो, उसकी ज्योति जैसी निष्कंप जलेगी, बिल्कुल थिर, डगमगाती लौ नहीं, वैसी तुम्हारी स्थिति हो गई। न बाएं, न दाएं, न आगे, न पीछे, स्वयं में स्थित। सभी अशांतियां अतियों पर होती हैं, मध्य में हैं शांति और आंनद।

ओम् नमः शिवाय!

प्रेमपूर्वक देखो–18

किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो; दूसरे विषय पर मत जाओ। यहीं विषय के मध्य में– आनंद।

आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं– किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो, दूसरे विषय पर मत जाओ, यहीं विषय के मध्य में आनंद। बड़ी अद्भुत विधि है। प्रेम की दृष्टि पर आधारित इस विधि को समझने के पहले भूल मत जाना, शिव अपनी प्रेमिका से, पार्वती से बात कर रहे हैं। शिव और पार्वती एक दूसरे के गहन प्रेम में हैं। अर्धनारीश्वर की प्रतिमा देखी न, वे केवल प्रेमी प्रेमिका ही नहीं जैसे मिलकर एक ही हो गए, आधे नर, आधे नारी। पार्वती सवाल पूछती, शिव उसका जवाब देते। यह भी प्रतीकात्मक है। शिष्य को स्त्रैणवत हो जाना पड़ता है, गुरु के गहन प्रेम में। तो ही गुरु का उत्तर शिष्य तक पहुंच पाएगा। यदि शिष्य खुले हुए हृदय का नहीं है, गहन प्रेम, श्रद्धा व समर्पण भाव से नहीं भरा है, तो गुरु की बातें सिर्फ बुद्धि तक पहुंचेगी और बुद्धि तक पहुंचने का कोई भी अर्थ नहीं। धर्म के गुह्य रहस्य गहन प्रेम में ही संप्रेषित किए जा सकते हैं। एक ग्रहणशीलता की भावदशा, जो कि स्त्रियों के पास होती है, वैसी होनी चाहिए। जब कोई पुरुष भी शिष्य बनता है तो

किसी गहरे रूप में वह स्त्रैण और कोमल और ग्रहणशील हो जाता है। पैसीविटी की जरूरत है, अपने भीतर कुछ समा लेना है, उसे अपने शरीर का हिस्सा बना लेना है।

गहन प्रेम की भावदशा में शिव ने पार्वती को ये सूत्र कहे हैं। जीसस कहते हैं, परमात्मा प्रेम है, बुद्ध कहते हैं करुणा, महावीर कहते हैं अहिंसा। केवल शब्दों का भेद है, बात वही और ओशो तो और भी आगे जाते हैं, वे कहते हैं 'प्रेम' ही परमात्मा है। इन दोनों बातों में छोटा सा फर्क है। जीसस का वचन कि परमात्मा प्रेम है, इससे ऐसा लगता है कि परमात्मा के कई गुण हैं, उनमें से एक गुण प्रेमपूर्ण होना भी है। ओशो प्रेम को और ज्यादा महत्वपूर्ण बना देते हैं। वे कहते हैं, प्रेम ही परमात्मा है, प्रेम ही सब कुछ है। परमात्मा को भूला भी जा सकता है। बुद्ध और महावीर ने तो इंकार ही कर दिया परमात्मा को, लेकिन प्रेम को इंकार न कर सके। प्रेम में ऐसी कौन सी खूबी है? प्रेम की एक खूबी है। सामान्यतः हमारा मन अहंकार केन्द्रित होता है, प्रेम में हम अहंकार को भूल जाते हैं, दूसरा हमारे जीवन का केन्द्र हो जाता है। इसलिए जिन्हें प्रेम नहीं आता, उन्हें योग, तंत्र, सांख्य, ज्ञान, भांति–भांति की विधियों से गुजरना होगा। जिसे प्रेम आता है उसे किसी विधि की जरूरत नहीं। प्रेम स्वयं अपने–आप में प्रकृति के द्वारा दिया गया एक सुंदर उपहार, ध्यान की एक अद्भुत विधि है। इसलिए प्रेम के क्षणों में जहां हमारा अहंकार भूल जाता है, दूसरा व्यक्ति हमारे जीवन का केन्द्र हो जाता है। वहां एक और अद्भुत घटना घटती है, जब मैं मिट गया, केवल तू ही तू रह गया, यह तू भी ज्यादा देर न टिकेगा। मैं के कंट्रास्ट में ही तू है, मैं की पृष्ठभूमि में तू का अस्तित्व है। जब मैं मिट गया तो तू भी खो जाएगा और रह जाएगा केवल वह 'परम आंनद', वह परम सत्य जो कि है और इसलिए प्रेम में इतना आंनद मिलता है।

हम भ्रम में पड़ जाते हैं कि यह आनंद दूसरे से मिल रहा है, तब हम दूसरे पे माल्कियत जमाने की कोशिश करने लगते हैं। वास्तव में यह आनंद दूसरे से नहीं मिला, स्वयं के मिट जाने से मिला। यह स्वयं का मिट जाना कहीं भी घट सकता है। एक बार बात समझ में आ जाए तो अचेतन रूप से तो प्रकृति ने इंतजाम किया है कि प्रेम के क्षण में अहंकार विस्मृत हो जाए, लेकिन समझदार व्यक्ति इस सूत्र को पकड़ ले तो कहीं भी अपने अहंकार को विलीन कर दे। गुरु के चरणों में समर्पित होना भी इस अहंकार से मुक्त होने का एक उपाय है। तो सारी कुंजी छिपी है प्रेमपूर्वक होने में, प्रेमपूर्वक का अर्थ कामनापूर्वक नहीं, वासनापूर्वक नहीं, क्योंकि वासना में मेरा सुख ही मेरा केन्द्र होता है। मैं अहंकार से मुक्त नहीं हो पाता। वासना का अर्थ है कि मैं कैसे ज्यादा सुखी हो जाऊं, मैं कैसे दूसरे का उपयोग कर लूं। दूसरा एक वस्तु की भांति, साधन के भांति मेरे काम आ जाए। और प्रेम का अर्थ होता है, जिसमें कामना नहीं, जिसमें वासना नहीं, मेरे सुख की चाहत नहीं, दूसरे के लिए मैं क्या कर सकता हूं? एक करुणा का भाव, मंगल का भाव, कल्याण का भाव कि मैं कैसे दूसरे के काम आ सकूं।

मीरा कहती हैं, श्याम मने चाकर राखो जी। हे प्रभू! मैं तेरी दासी कैसे हो जाऊं, मैं तेरे किसी काम कैसे आ सकूं। सामान्यतः भक्त प्रार्थना करते हैं मंदिरों में, मस्जिदों में जाकर देखना, चर्चों में जाकर सुनना, वे परमात्मा से भी काम निकालने की कोशिश कर रहे हैं। कोई कह रहा है मेरी पत्नी की तबियत ठीक कर दे, कोई कह रहा है बेटा पैदा कर दे, कोई कह रहा है लड़की की शादी का इंतजाम कर दे, कोई कह रहा है नौकरी में पदोन्नति हो जाए। हम ईश्वर से भी नौकरी करवाना चाह रहे हैं, वो हमारे काम में आ जाए। ये प्रार्थना न हुई, ये प्रेम न हुआ। सच्चे प्रेम में एक भाव होता है हृदय में कि कैसे मैं दूसरे के काम आ सकूं? आ पाऊंगा कि नहीं आ पाऊंगा, यह बात अप्रासंगिक है, लेकिन यह भाव बहुत महत्त्वपूर्ण है। अमीर खुसरो ने कहा है–

खुसरो पाती प्रेम की, विरला बांचे कोय।
वेद–पुराण पोथी पढ़े, बिना प्रेम का होय।
खुसरो सोई पीर है, जो जानत पर पीर।
जो पर पीर न जानई, सो का फिर बे पीर।
कागा काको धन हरे, कोयल किसको देय।
मीठे वचन सुनाई के, जग अपनो कर लेय।
खुसरो दरिया प्रेम का, सो उल्टी वा की धार।
जो उबरा सो डूब गया, जो डूबा सो पार।

प्रेम की कहानी बड़ी निराली है। यहां जो मिट जाते, पिघल जाते, समाप्त हो जाते, वे पार हो जाते, वे भवसागर तर जाते। इसलिए प्रेम से बड़ी और कोई किताब नहीं। कबीर साहब तो कहते हैं –

पोथी पढ़कर जगमुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।।

प्रेम एक प्राकृतिक ध्यान है, जिसे यह ध्यान आ गया उसे किसी और विधि की जरूरत नहीं। जब हम किसी वस्तु का या व्यक्ति का उपयोग करते हैं, उसे अपने सुख का साधन समझते हैं तो हम एक तरह से उसका अपमान कर रहे हैं, हम उसके प्रति प्रेमपूर्ण नहीं हैं, हमें उस व्यक्ति से कुछ लेना–देना नहीं, हमारी नजर अपने स्वार्थ पर, अपने सुख पर है। लेकिन जब हम दूसरे के प्रति प्रेमपूर्ण होते हैं, तब दूसरे का सुख बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। मैं मिट

भी जाऊं कोई हर्ज नहीं, मैं दूसरे के किसी काम आ सकूं, उसको थोड़ा सा आनंदित कर सकूं, यह बात ज्यादा महत्त्वपूर्ण हो जाती है। जब हम किसी वस्तु के भी प्रेम में पड़ते हैं, तब वह वस्तु हमारे लिए व्यक्तिवाची हो जाती है। आपकी अपनी पर्सनल कार अन्य हजारों कारों के समान नहीं है, उससे आपका व्यक्तिगत लगाव हो गया है। ओशो ने अपने आश्रम में पेड़ों के भी नाम रखे थे, चट्टानों के भी नाम रखे थे। रजनीशपुरम में पहाड़ियों के और नदियों के भी नाम रखे थे। नाम देने का अर्थ हुआ, हम उसे एक व्यक्तित्व दे रहे हैं, हम अपना प्रेम प्रदर्शित कर रहे हैं। जब हमें किसी से प्रेम नहीं होता, हम उसका नाम मिटा देते हैं। मिलिट्री में लाखों लोग हैं, उनका नाम नहीं, केवल नंबर है। उनका उपयोग है, एक नंबर की भांति। कल को नंबर '520' की मृत्यु हो जाएगी कोई बात नहीं, '520' का लेबल किसी और की छाती पर लग जाएगा। '520' कोई व्यक्ति नहीं है, एक सैनिक भर है, बस।

तो ये याद रखना, प्रेमपूर्ण अगर हो सको तभी ये सारी विधियां काम की हैं। प्रेम में एक गहन असहायता का बोध होता है। हम अपने प्रेमपात्र को सारा ब्रम्हाण्ड दे देना चाहेंगे और हम कितने असहाय हैं, कुछ भी नहीं कर पाते। इस 'असहायता' की अवस्था में हमारा मन ठिठक जाता है, ठहर जाता है। हम कुछ कर नहीं पा रहे, इसलिए अहंकार विलीन हो जाता है। हम अपने प्रेमपात्र के लिए क्या कर सकते हैं? कुछ भी तो नहीं। करना सबकुछ चाहते हैं, लेकिन कर कुछ नहीं पा रहे। हर प्रेमी को यही महसूस होता है कि मैं वह नहीं कर पा रहा जो मैं करना चाहता हूं। इसलिए कर्ताभाव और अहंकारभाव विलीन हो जाते हैं। इसलिए मैं कह रहा हूं, प्रेम एक प्राकृतिक ध्यान की विधि है, प्रेम से देखो।

ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, जब तुम आंखों से देखते हो तो आंखें नहीं देखतीं हैं, वे मात्र देखने के द्वार हैं। द्रष्टा तो आंखों के पीछे छिपा है, यही कारण है कि तुम आंख बंद कर सकते हो और तब भी सपने, दृश्य और चित्रों की छायाएं भीतर देख सकते हो। क्योंकि द्रष्टा तो इंद्रियों के पीछे छिपा है, वह इंद्रियों के माध्यम से संसार में गति करता है लेकिन यदि तुम अपनी इंद्रियों को बंद कर लो तो भी द्रष्टा भीतर बना ही रहता है। अगर यह द्रष्टा, यह चेतना स्वयं में केंद्रित हो जाए तो अचानक आत्मबोध होता है, चेतना स्वयं को जान लेती है। और जब तुम अपने को जान लेते हो तो तुम समग्र अस्तित्व को जान लेते हो क्योंकि तुम और अस्तित्व दो नहीं हो, किन्तु यह घटना घटती है प्रेम में। शिव कहते हैं, किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो, यह किसी विषय या व्यक्ति में कोई फर्क नहीं करता है। उसकी जरूरत भी नहीं, क्योंकि जब प्रेमपूर्वक देखते हो तो कोई भी चीज व्यक्ति बन जाती है। यह देखना ही तुम्हें बदलता है और रूपांतरित करता है। किसी विषय को प्रेमपूर्वक देखो। इसके लिए कोई क्या करे?

प्रेम से जब देखते हो तो क्या करना होता है?

पहली बात अपने को भूल जाओ, बिल्कुल भूल जाओ। एक फूल को देखो और अपने को बिल्कुल भूल जाओ। फूल तो हो लेकिन तुम अनुपस्थित हो जाओ। फूल को अनुभव करो और तुम्हारी चेतना से गहरा प्रेम फूल की ओर प्रवाहित हो और तब अपनी चेतना को एक ही विचार से भर जाने दो कि कैसे मैं इस फूल के ज्यादा खिलने में, ज्यादा सुंदर होने में, अधिक आनंदित होने में सहयोगी हो सकता हूं। मैं इसके लिए क्या कर सकता हूँ? यह महत्व की बात नहीं कि तुम कुछ कर सकते हो कि नहीं, वह प्रासांगिक नहीं है किन्तु तुम्हारी वह मंगल की भावना अति महत्वपूर्ण है। शिव कहते हैं, यही विषय मध्य में आनंद, अचानक तुम अपने को भूल गए, अब बस दूसरा ही है, तब वही क्षण आएगा जब कि तुम पूरे के पूरे अनुपस्थित हो जाओगे, तब अचानक दूसरा भी अनुपस्थित हो जाएगा और तब दोनो के बीच वह धन्यता घटती है।

प्रेमियों की यही अनुभूति है, यह आनंद अज्ञात और अचेतन ध्यान के कारण आता है। जहां दो प्रेमी हैं, वहां धीरे-धीरे दोनो अनुपस्थित हो जाते हैं और वहां एक शुद्ध अस्तित्व मात्र ही बचता है। जिसमें कोई अहंकार नहीं, कोई द्वंद्व नहीं, कोई संघर्ष नहीं, वहां गहन संवाद है, सहचरी है; सहभागिता है, उस संयोग में ही आनंद उतरता है। यह समझना गलत है कि यह आनंद तुम्हें किसी दूसरे से मिला। वह आनंद आया, क्योंकि तुम अंजाने ही एक गहरी ध्यान विधि में उतर गए। तुम इसे सचेतन रूप से भी कर सकते हो और तब सचेतन रूप से करने पर तुम और भी ज्यादा गहरे उतर पाओगे, तब तुम विषय से नहीं बंधे होओगे, प्रेमपात्र से नहीं बंधे होगे। बड़ी अद्भुत है यह विधि। बस एक ही रह जाए, फूल या प्रेमी या प्रेमिका या मित्र या कोई भी वस्तु। वह वृक्ष भी हो सकता है, दूर से दिखाई पड़ने वाला पर्वत भी हो सकता है। किसी भी विषय को चुन लो। आओ इस प्रयोग को हम धीरे-धीरे तीन-चार स्टेप में करते हैं।

सबसे पहले अपने हाथ में फूल को उठाकर उस फूल को प्रेमपूर्वक देखो। मैं इसके विकास के लिए, खिलावट के लिए क्या कर सकता हूँ? करुणा भाव से भरो। दूसरे किसी विषय पर न जाओ, तुम्हारी आंख की पुतलियां बिल्कुल थिर हो जाएं और हृदय में गहन प्रेम का भाव। फूल को अपने सीने से लगा लो, हृदय से जोड़ लो, आंखें बंद कर लो और मंगलभाव से भरो। धीरे से लेट जाओ, फूल को अपने हृदय पर रखकर, प्रेम से ओत-प्रोत, मंगलभावना से आपूरित, बस फूल ही रह गया, तुम मिट गए। अब न फूल बचा न तुम, बस एक जीवंत अस्तित्व धड़कता हुआ, प्रेमभाव से लबालब, न मैं न तू, बस एक दिव्यता एक प्रेमपूर्ण भगवत्ता।

ओम् नमः शिवाय। ओशो शरणं गच्छामि!

अचानक केन्द्रित हो जाओ–19

पावों या हाथों का सहारा दिए बिना सिर्फ नितंबों पर बैठो। अचानक केन्द्रित हो जाओ।

मेरा सौभाग्य है कि अब तक मैं जीवन में लक्ष्यहीन हूं।
मेरा न भूत, न भविष्य, न ही कोई वर्तमान है, मैं चिर नवीन हूं।
कोई निश्चित दिशा नहीं है, मेरी चंचल गति का बंधन
कहीं पहुंचने की न त्वरा में आकुल व्याकुल है मेरा मन,
खड़ा विश्व के चौराहे पर अपने में ही सहज लीन हूं।
मुक्त–दृष्टि, निरुपाधि, निरंजन मैं विमुग्ध भी उदासीन हूं।

सांख्ययोग मानने वाले इस बात से राजी होंगे। वे कहेंगे, मुक्तदृष्टि, निरूपाधि, निरंजन मैं, विमुक्त भी, उदासीन हूं, खड़ा विश्व के चौराहे पर अपने में ही सहजलीन हूं। कृष्णमूर्ति राजी होंगे इससे, अष्टावक्र और जनक राजी होंगे, कपिल और कणाद राजी होंगे, जापान के झेन फकीर लिंची, बोकोजु, नानसेन रिंझाई राजी

होंगे। महाकश्यप और बोधिधर्म राजी होंगे लेकिन याद रखना उनकी यह अद्भुत, अनूठी और बिल्कुल सत्य बात साधारण जन के किसी काम के नहीं। सरहपा, तिलोपा सहजयोग की बात करते हैं। कबीर कहते हैं, सहज समाधि भली लेकिन वह सहजता बिना विधि के नहीं मिलती। सांख्ययोग के मानने वाले विधि के विरोधी हैं और तंत्र का अर्थ ही होता है विधि, तकनीक। तंत्र यानी टेक्नोलॉजी, अध्यात्म की तकनीक। पार्वती ने सवाल पूछे हैं बड़े दार्शनिक और शिव जो उत्तर दे रहे हैं वो हमें विचित्र से लगेंगे। आज उन्नीसवीं विधि में भगवान शिव कह रहे हैं, पांव व हाथों का सहारा लिए बिना सिर्फ नितम्बों पर बैठो, अचानक केन्द्रित हो जाओ। पार्वती क्या पूछ रही है, वह पूछ रही है सृष्टि का निर्माण कैसे हुआ, जगत का परम सत्य क्या है? और शिव कह रहे हैं, सिर्फ अपने नितम्बों पर अपने वजन को रखो, केन्द्रित हो जाओ। बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। अच्छा हुआ उन्होंने दार्शनिक उत्तर न दिया, कोई बौद्धिक उत्तर न दिया, विधियां दीं।

इस विधि के द्वारा तुम स्वयं जानो कैसे यह सृष्टि है, इस जीवन का उद्देश्य क्या है, लक्ष्य क्या है? भगवान शिव लक्ष्य की बात कर रहे हैं, मंजिल की नहीं। जापान के झेन फकीर बड़ी प्यारी बात कहते हैं, कुछ न करते हुए, बस यूं हीं बैठे–बैठे, आती है ऋतु बसंत की और फूल अपने आप खिलने लगते हैं। लेकिन इस बात से किसी को सहयोग नहीं मिल सकता, ये बातें बड़ी अधूरी हैं। इसके पहले फूलों के बीज बोए गए होंगे, खाद और पानी डाला गया होगा, इसके पहले बाग और सुरक्षा का इंतजाम किया गया होगा, तब जाकर यह माली चुपचाप बैठा है और तब जाकर अचानक एक दिन बसंत में फूल खिलते हैं। पहले की भूमिका की चर्चा इसमें नहीं है। पश्चिम के महान् दार्शनिक, एक बहुत ही समझदार व्यक्ति 'पॉल रेप्स' ने जब पहली बार झेन का अनुवाद अंग्रेजी में किया, उसकी किताब है 'झेन फ्लेश झेन बोन्स', उसमें उसने परिशिष्ट के रूप में, अपेंडिक्स के रूप में विज्ञान भैरव तंत्र की 112 विधियों का उल्लेख किया। परंपरावादी झेन को मानने वाले बहुत नाराज हुए कि विधि की बात क्यों? झेन में तो कोई विधि आती नहीं और तंत्र तो सिर्फ विधि ही विधि है। 112 छोटी–छोटी पंक्तियां, प्रत्येक अपने आप में एक विधि है, केन्द्रित होने की विधि।

सांख्ययोग वाले कहेंगे समाधि की अवस्था तो फैलाव की अवस्था है, इसमें कहां केन्द्रीकरण, कहां एकाग्रता, ये बचकानी बातें न करो, इसमें तो विराट सागर में बूँद को खो जाना है लेकिन वे भूल जाते हैं कि जब तक ये बूंद बादल से टपके न, तब तक सागर में खो भी न सकेगी। एक बार तो सघन होना पड़ेगा, एक बार तो एकाग्र, 'केन्द्रीभूत' होना पड़ेगा बूंद को, हाँ! फिर सागर में खो जाए, फिर सागरस्वरूप हो जाए, फिर 'ओशनिक एक्सपीरियंस' ओशो जिसे कहते हैं, उसका अनुभव हो सकता है। तो ऐसा समझना, विज्ञान भैरव तंत्र भूमिका है, मार्ग है, रास्ता है और सांख्य जो सहजता की बात कर रहा है, खड़ा विश्व के
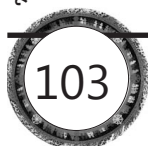
चौराहे पर, अपने में ही सहजलीन हूँ, वह लक्ष्य की बात है, वह मंजिल की बात है, वह पहुंचे हुए लोगों की बात है। इन दोनों के बीच में बड़ी विरोधाभासी चीजें लगेंगी लेकिन वे विरोधाभासी हैं नहीं। मार्ग पर चलकर ही कोई मंजिल पर पहुंचता है। बादल सघन पानी की बूँद बने तभी जाकर बूंद सागर में विलीन होकर विराटता को उपलब्ध हो सकती है। तो केन्द्रीभूत होने की विधियां अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। साधन के लिए हमारा मन अकेन्द्रित है, बंटा हुआ है, टुकड़ों–टुकड़ों में और फैला हुआ है। पहले तो उसे एकजुट करना होगा, केन्द्रीकरण जरूरी है। फिर इस मन के पार अमन की अवस्था में जाया जा सकता है। सीधे–सीधे, टुकड़ों–टुकड़ों से मन के पार नहीं जाया जा सकता। पहले एक मन तो चाहिए। अभी आदमी जैसा है वो पॉलीसाइकिक, बहुचित्तवान है। महावीर ने इस शब्द का प्रयोग किया था 2500 वर्ष पहले, बहुचित्तवान। आज के मनोवैज्ञानिक पुनः इस शब्द का प्रयोग शुरू किए हैं कि मनुष्य पॉलीसाइकिक, बहुचित्तवान है। उसका एक मन नहीं है, खंड–खंड है।

मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन बड़ा फिलॉसफर था। मुल्ला नसरुद्दीन दिन–रात धर्मग्रंथ पढ़ा करता और अक्सर उसी प्रकार के लोग उसके पास आते थे और बड़ा वाद–विवाद होता था। एक दिन चंदूलाल मुल्ला के घर के सामने से निकल रहे थे। भीतर से बड़े जोर–शोर से आवाज आ रही थी जैसे लड़ाई–झगड़ा हो रहा है, बड़ी बहस छिड़ी हुई थी। चंदूलाल भीतर गए, मुल्ला क्या हो गया? कोई लड़ाई–झगड़ा होने वाला है क्या? मुल्ला ने कहा, तंग आ गया हूँ इन बकवासियों की बकवास सुनते–सुनते, आखिर सहनशक्ति की भी एक सीमा होती है। चंदूलाल ने देखा कमरे में कोई और है ही नहीं। कुछ किताबों का ढेर लगा है धर्मग्रंथों का बस, मुल्ला उस दिन अकेला ही था। चंदूलाल ने कहा, मेरे भाई मुझे कोई बकवासी नजर नहीं आ रहा तुम अकेले ही हो, तुम किससे बहस कर रहे थे? मुल्ला ने कहा कि क्या बताऊं आज कोई आया ही नहीं समय पर। मैं खुद ही अपने–आप से बहस कर रहा था, मैं खुद ही तर्क दे रहा था और खुद ही उनका खण्डन भी कर रहा था। ऐसा है हमारा मन!

मैंने सुना है, एक ईसाई पादरी चर्च में बच्चों को समझा रहा था सृष्टि की कहानी, कैसे ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है, फिर कैसे अलग–अलग प्राणी व वनस्पति बनाए। उसकी बात से राजी न होकर एक छोटा सा बच्चा खड़ा हुआ, उसने कहा, मेरे पिताजी बायोलॉजी के टीचर हैं और वो मुझे बताते हैं डार्विन के विकासवाद का सिद्धांत। वे कहते हैं कि हम सब बंदर की संतान हैं, लंगूर की औलाद हैं। उस पादरी ने कहा मेरे बेटे तुम्हारे निजी पारिवारिक मामलों से मुझे क्या लेना–देना है, मैं तो सारी दुनिया की सृष्टि की कहानी बता रहा हूँ। तो मानो या ना मानो, हो तो बंदर की ही औलाद। कितना ही कहूं कि हम ईश्वर के पुत्र हैं, वो हमारा पिता है मगर पिताजी तो बंदर ही हैं। अच्छा हुआ हिन्दू हनुमान जी की पूजा करते हैं, वो हमारे पूर्वज हैं और आदमी का मन इसका प्रमाण है। डार्विन ने जो प्रमाण खोजे हैं वह तो

शरीरगत प्रमाण थे। मन आदमी का प्रमाण है, बंदर की तरह चंचल, यहां से वहां उछलता, भागता, कूदता। इस मन को एकाग्र करना होगा, एकजुट करना होगा, तभी अपने भीतर हम डूब सकेगें।

आज की इस विधि को करने के पहले जरूरी है हम नितम्बों से शुरू न करें, कहीं और से शुरू करें। क्योंकि हमारे नितम्ब हमारी हिपबोन्स, नीचे का हिस्सा बहुत असंवेदनशील हो गया है। दिन भर उसी पर बैठते दबाव उस पर पड़ता है, उसके प्रति हमारी संवेदनशीलता खत्म हो गई है। अच्छा है आप कुर्सी पर बैठे हैं, आपका हाथ कुर्सी के हत्थे पर रखा है। आंख बंद करके उस भार को महसूस करें, कुर्सी के स्पर्श को महसूस करें। कहीं और से शुरू करें। जब आपकी सेंसीटिविटी बढ़ने लगे, फिर धीरे-धीरे अपने हिप्स पर आना। तो तीन-चार सप्ताह अपनी संवेदनशीलता को बढ़ाने का प्रयोग करें। फिर शिव के इस प्रयोग को करना अद्भुत परिणामकारी है। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, जमीन पर बैठो, पांव या हाथों के सहारे के बिना, सिर्फ नितम्बों के सहारे बैठो। इसमें बुद्ध का पद्मासन काम करेगा। वैसे सिद्धासन या कोई मामूली आसन भी चलेगा लेकिन अच्छा होगा कि हाथों का सहारा न लो, सिर्फ नितम्बों पर बैठो और तब क्या करो?

आंखें बंद कर लो और नितंबों का जमीन के साथ स्पर्श महसूस करो और चूँकि अब तुम्हारे नितंब संवेदनशील हो चुके हैं इसलिए तुम्हें पता चलेगा कि एक नितम्ब जमीन पर अधिक स्पर्श कर रहा है। इसका मतलब हुआ कि तुम उस तरफ ज्यादा झुके हो, अब दूसरे जमीन की तरफ झुक जाओ, दूसरे नितंब की ओर झुक जाओ, फिर तुरंत ही पहले पर वापिस आ जाओ। इस प्रकार एक से दूसरे पर डोलते हुए बारी-बारी से बाएं-दाएं झुकते हुए, धीरे-धीरे संतुलन की मुद्रा में आओ। संतुलन लाने का अर्थ है कि तुम्हारे दोनों नितम्ब एक सा अनुभव कर रह हों, दोनो के ऊपर तुम्हारा भार बिल्कुल समान है और तुम्हारे नितंब संवेदनशील हो जाएंगे तो यह संतुलन कठिन नहीं होगा, बड़ा सरल होगा। तुम्हें उसका एहसास होगा और एक बार दोनों नितंब संतुलन में आ जाएं, अचानक तुम केन्द्रित हो जाओगे। उस संतुलन में तुम अचानक अपने नाभि केन्द्र पर पहुंच जाओगे। अपनी अंतरात्मा में प्रवेश हो जाएगा, तब तुम अपने नितंबों को भूलकर शरीर को भी विस्मृत करके आत्मा के केन्द्र में स्थित हो जाओगे। इसी वजह से मैं कहता हूं कि केन्द्र नहीं, केन्द्रित होना महत्त्वपूर्ण है। सवाल यह नहीं है कि सहस्रार, कि नाभिचक्र, कि हृदय, यह घटना कहीं भी घट सकती है। नितंबों में भी तुमने बुद्धों को बैठे देखा होगा, तुमने सोचा नहीं होगा कि वे अपने नितम्बों का संतुलन किए बैठे हैं।

किसी मंदिर में जाओ, महावीर को, बुद्ध को बैठे हुए देखो। तुमने कभी ख्याल नहीं किया होगा कि यह बैठना सिर्फ नितंबों का संतुलन भर है। वास्तव में बस केवल वहीं है और जब असंतुलन न रहा तो संतुलन में तुम केन्द्रित हो गए। केन्द्रित होना हीं हमें आत्स्मरण में ले जाता है। किस विधि से हम पहुंचे यह गैरमहत्त्वपूर्ण है। ये छोटी सी सरल दिखने वाली विधियां अद्भुत चमत्कार कर सकती हैं। अपने शरीर का भार महसूस करते–करते अचानक तुम निर्भारता में, विदेह अनुभूति में चले जाओगे, भाररहित हो जाओगे क्योंकि चेतना का कोई भार नहीं होता। शरीर भौतिक है, उस पर गुरुत्वाकर्षण काम करता है, आत्मा पर नहीं। आत्मा पदार्थ नहीं है और एक बार इसमें सफलता मिलनी शुरू हुई तो दो–तीन हफ्तों के प्रयोग में तुम्हारे जीवन में एक बड़ा परिवर्तन आएगा। तो आओ इस विधि को हम करते हैं। चार स्टेप्स में करते हैं।

पहले स्टेप में खड़े होकर, दोनों पैर को थोड़ा सा फैलाकर, आराम से सीधे खड़े हों, दोनों भुजाओं को फैला लें, थोड़ा सा बाएं झुकें। बाएं पैर में पड़ रहे भार को महसूस करें, अब बीच में आएं, दाहिनी तरफ झुकें, दाहिने पैर पर पड़े रहें, वजन को महसूस करें। धीरे–धीरे दोलन को कम करते चलें। क्रमशः बाएं–दाएं, बाएं–दाएं डोलें, भार को महसूस करें। धीरे–धीरे बाएं–दाएं झुकना कम होता जाए, मध्य के संतुलन को महसूस करें। बस जरा सा बाएं, जरा सा दाएं, उस कंट्रास्ट में बीच की स्थिति स्पष्ट एहसास होगी।

दूसरा चरण– बैठ जाएं, बैठकर भी हौले–हौले बाएं–दाएं बारी–बारी से झुकें, नितम्बों पर पड़ रहे भार का एहसास करें।

तीसरा चरण– अब बिल्कुल मध्य की अवस्था में रीढ़ और गर्दन सीधी रखते हुए थम जाएं। दोनों नितम्बों पर बराबर वजन पड़ रहा है, उन दबाव के बिंदु के प्रति जागरूक। महसूस करें कि अपने शरीर का वजन कितना है? और आश्चर्य होगा कि महसूस करने चले थे भार को, मिलेगी निर्भारता।

आखिरी चरण– अब कहीं भी केन्द्रित न हों, शरीरहीनता की इस अवस्था का अहसास करें। मैं देह नहीं हूँ, मेरा कोई वजन नहीं है, मैं निर्भार चैतन्य हूँ। कोई निश्चित दिशा नहीं है, मेरी चंचल गति का बंधन, कहीं पहुंचने की न त्वरा में, आकुल–व्याकुल है मेरा मन, खड़ा विश्व के चौराहे पर, अपने में ही सहजलीन हूँ। मुक्त दृष्टि, निरुपाधि, निरंजन मैं, विमुग्ध, उदासीन भी हूँ। अब हम मंजिल पर, लक्ष्य पर पहुंचे। धन्यवाद उस मार्ग बताने वाले का।

ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!
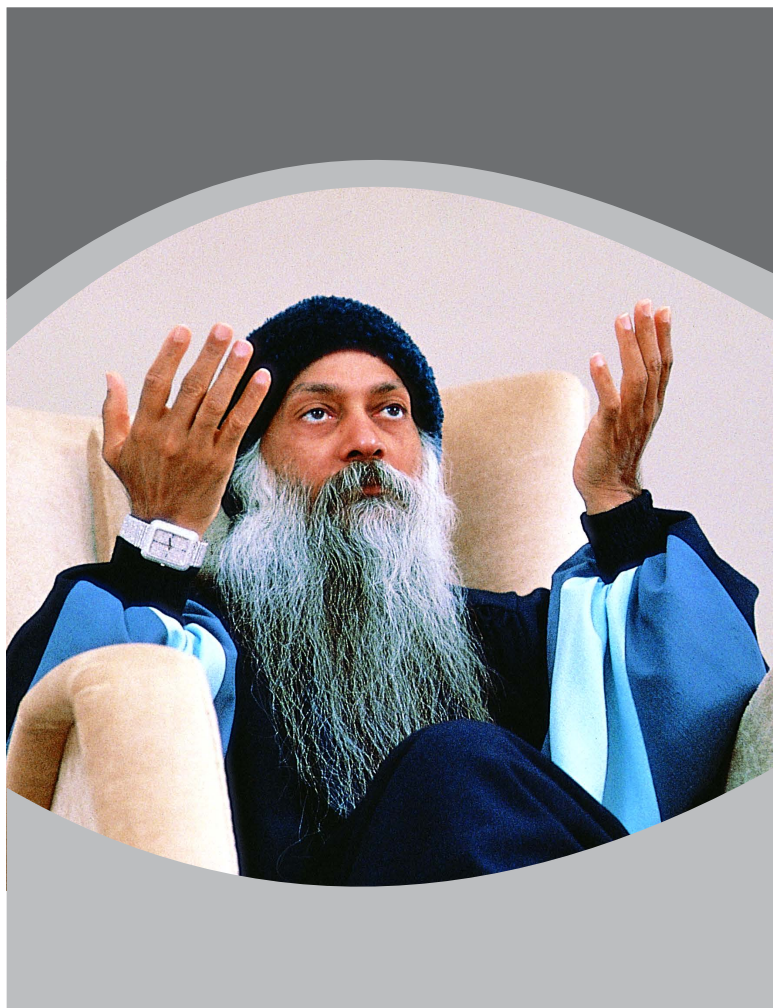
वाहन में लयबद्ध झूलो–20

किसी चलते वाहन में लयबद्ध झूलने के द्वारा अनुभव को प्राप्त हो या किसी अचल वाहन में अपने को मंद से मंदतर होते अदृश्य वर्तुलों में झूलने देने से भी।

इन सारी विधियों का एकमात्र लक्ष्य है तन और मन से तादात्म्य तोड़कर, चेतन के साथ तादात्म्य को जोड़ना। चाहे योग हो, चाहे तंत्र हो, चाहे झेन फकीरों की पद्धतियां, सबका लक्ष्य एक ही है, परिधि से हटकर केन्द्र में स्थिर होना, आत्मरमण करना। आज हम एक बहुत ही सुंदर विधि को लेने जा रहे हैं। तंत्रसूत्र की 20वीं विधि में भगवान शिव पार्वती से कहते हैं, किसी चलते वाहन में लयबद्ध झूलने के द्वारा अनुभव को प्राप्त हो अथवा किसी अचल वाहन में अपने को मंद से मंदतर होते दृश्य वाहन में झूलने देने से भी वही अनुभव प्राप्त हो सकता है। कभी आप यात्रा कर रहे हैं, पुराने जमाने में तो बैलगाड़ी, रथ या घोड़ों की यात्रा हुआ करती थी, बड़ा डोलना, झूलना उसमें हुआ करता था। भगवान शिव कह रहे हैं, उसी का उपयोग कर लो। हर परिस्थिति का उपयोग कर लो, चाहे बैलगाड़ी हो, चाहे आधुनिक रेलगाड़ी या कार की, हवाई जहाज की यात्रा कर रहे हो, वाहन का जो दोलन हो रहा है उसके साथ मजे से डोलो। उसका कोई विरोध और प्रतिरोध

तुम्हारे मन में न हो, तब एक अद्भुत घटना घटेगी। शरीर तो झूल रहा है, डोल रहा है और भीतर की चेतना पूरी तरह स्थिर है। परिधि झूम रही है और केन्द्र स्थिर है। इसे ऐसा ही समझना जैसे बैलगाड़ी का चाक गति करता है और केन्द्र में उसकी कील होती है वह कील स्थिर होती है। स्थिर कील के ऊपर ही गाड़ी का चाक गतिमान हो पाता है। यदि स्थिरता न हो, गतिमान होना भी संभव नहीं हो पाएगा।

जब शरीर झूम रहा है जरूर कोई एक स्थिर बिंदु हमारे भीतर होना चाहिए, वह हमारी आत्मा, वह हमारी चेतना है। उस आत्मा में प्रवेश का सबसे सरल उपाय है कि शरीर को गति करने दो और अगतिमान चेतना से सजग हो जाओ। परिधि से, शरीर से तादात्म्य टूटेगा और केन्द्र में स्थित हो जाओगे। छोटा बच्चा जब गर्भ में होता है, तब उसे अपने शरीर का भान नहीं होता, केवल चैतन्यता का बोध होता है। जन्म के बाद भी लगभग तीन साल की उम्र तक शरीर के साथ 'आइडेंटीफिकेशन' नहीं बनता। धीरे–धीरे बच्चे का जब अहंकार निर्मित होता है, तब शरीर के साथ और मन के साथ उसका तादात्म्य बनता है। छोटे बच्चे अक्सर गोल–गोल घूमने में बड़ा मजा लेते हैं। माता–पिता उन्हें मना करते हैं कि मत घूमो गिर जाओगे, चोट लग जाएगी, इसके बावजूद भी वे घूमते हैं, जरूर इसमें कुछ आकर्षण होगा। जब शरीर घूमता है तो अपने भीतर की स्थिर चेतना का अहसास होने लगता है,..यही आकर्षण है। शराब एवं अन्य मादक द्रव्यों का जो इतना आकर्षण है, वह भी इसी कारण है। शराबी जब डावांडोल होकर चलता है बिना किसी प्रतिरोध के, तब उसे शरीर से भिन्न स्वयं के होने का एहसास होता है। एक गलत मार्ग से, रासायनिक मार्ग से शराबी भी ध्यान की ही स्थिति को पाने का प्रयास कर रहा है। यद्यपि उसका रास्ता गलत है लेकिन जिस चीज की वह खोज कर रहा है वह एक आध्यात्मिक प्यास है। उसकी अभीप्सा बिल्कुल ठीक है। वह शरीर से पार स्वयं को जानना चाहता है।

इसलिए अक्सर शराबी यात्रा में थकते नहीं, छोटे बच्चे भी यात्रा में नहीं थकते। बड़े लोग यात्रा में थक जाते हैं। 10–12 घण्टे ट्रेन की यात्रा, छोटे बच्चे हंसते–खेलते, नाचते–कूदते पहुंचेगे, बड़े लोग थके–मांदे, उदास होंगे, उनका बदन टूटा हुआ होगा, दर्द हो रहा होगा। कारण, जब ट्रेन हिल रही थी तब वयस्क लोग उस हिलने से बचने की कोशिश कर रहे थे। छोटे बच्चे कोई कोशिश नहीं कर रहे थे। ट्रेन में अगर झटका लगा और गिरा दिया तो वे आराम से गिर गए। जरा ख्याल करो बच्चे खेलते–कूदते कितनी बार गिरते हैं, अगर तुम उतनी बार गिरो तो रोज अस्पताल में भर्ती होना पड़ेगा। छोटे बच्चे दिन में 25 बार गिरते हैं फिर भी उन्हें चोट नहीं लगती। कारण यही है कि वे गिरने का भी प्रतिरोध नहीं करते, देह के साथ उनका तादात्म्य नहीं है। शराब पीकर भी वही अवस्था बन जाती है। शराबी बेचारा

रात नालियों में गिरता, खम्भों से टकरा जाता लेकिन फिर भी उसे ज्यादा चोट नहीं लगती। कारण वह प्रतिरोध नहीं करता। इस समय अहंकार के साथ उसका तादात्म्य नहीं है, वह शरीर से भिन्न अपने आपको जान रहा है। किसी शायर ने लिखा है–

ठुकराओ या प्यार करो मैं नशे में हूँ,
जो चाहो मेरे यार करो मैं नशे में हूँ।
अब भी दिला रहा हूँ यकीने वफा मगर,
चाहो तो ऐतबार करो मैं नशे में हूँ।
गिरने दो तुम मुझे मेरा सागर सँभाल लो,
गिरने दो तुम मुझे मेरा सागर सँभाल लो,
इतना तो मेरे यार करो मैं नशे में हूँ।
मुझको कदम–कदम पे भटकने दो वाइजो,
मुझको कदम–कदम पे भटकने दो वाइजो,
तुम अपना कारोबार करो मैं नशे में हूँ।

कई बार वाइज, पंडित, बड़े–बड़े पुरोहित परमात्मा तक नहीं पहुंच पाते, लेकिन शराबी पहुंच जाते हैं। क्योंकि उनके भीतर प्रतिरोध नहीं है। इस विधि को समझाते हुए परमगुरु ओशो ने कहा, अगर तुम इस विधि को प्रयोग में लाना चाहते हो तो प्रतिरोध छोड़ दो, बल्कि गाड़ी की गति के साथ–साथ गति करो, उसकी गति के साथ–साथ झूलो, बैलगाड़ी का अंग बन जाओ, प्रतिरोध न करो। रास्ते पर बैलगाड़ी जो भी करे तुम उसके अंग बनकर रहो, इसी कारण यात्रा में बच्चे कभी थकते नहीं। एक पिअक्कड़ सारी रात बैलगाड़ी में यात्रा करेगा और वह सुबह तरोताजा रहेगा लेकिन तुम नहीं। कारण यह है कि पिअक्कड़ प्रतिरोध नहीं करता, वह गाड़ी के साथ गति करता है, वह लड़ता नहीं है, गाड़ी के साथ एक हो जाता है। तुम भी ऐसा कर सकते हो, वाहन की जरूरत नहीं है। जैसे बच्चे लोग गोल–गोल घूमा करते हैं, वैसा गोल–गोल घूमो और जब तुम्हारा सिर घूमने लगे और तुम्हें लगे की अब गिर जाऊंगा और नाचना बंद, तब भी मत करो, नाचते रहो, नाचते रहो। अगर गिर भी जाओ तो फिक्र न करो। आंख बंद कर लो और भीतर ही भीतर नृत्य चलता रहेगा, तुम्हारा सिर चक्कर खाने लगेगा। तुम्हारा शरीर गिर जाए तो भीतर देखो, भीतर मन का नृत्य जारी रहेगा, उसे महसूस करो।

वह निकट से निकटतर, मंद से मंदतर होता जाएगा और अचानक तुम केन्द्रित हो जाओगे।

बच्चे इसका खूब मजा लेते हैं क्योंकि इससे उन्हें बहुत ऊर्जा मिलती है लेकिन उनके मां-बाप उन्हें नाचने से रोकते हैं जबकि अच्छा नहीं, उन्हें नाचने देना चाहिए, उन्हें इसके लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए और अगर तुम उन्हें अपने भीतर की नाच से परिचित करा सको तो तुम उन्हें उसके द्वारा ध्यान सिखा दोगे। बच्चों का रस नाचने में, गोल-गोल घूमने में इसलिए है, उससे शरीर शून्यता का भाव पैदा होता है। विदेही अवस्था का ज्ञान होता है, राजा जनक को हम कहते हैं विदेह अर्थात देह के पार जिन्होंने अपनी आत्म सत्ता को पहचान लिया। इस छोटे से प्रयोग के द्वारा यह किया जा सकता है। सोवियत रूस में पिछली सदी में एक अद्भुत संत हुए, जार्ज गुरजियफ। वे शिष्यों को यह प्रयोग अक्सर कराते थे, गोल-गोल घूमने का प्रयोग। वह सूफी दरवेशों से उन्होंने सीखा था। जलालुद्दीन नामक सूफी संत ने इस प्रयोग की की थी। जलालुद्दीन रूमी स्वयं एक बार 36 घंटे तक गोल-गोल घूमते रहे। जब वे गिरे तो परमज्ञान को उपलब्ध हो गए। तब से सूफियों में यह नृत्य बहुत प्रचलित हो गया। तो बस प्रतिरोध करना छोड़ दो और आत्मरमण की घटना घट जाएगी।

मैने सुना है इंग्लैण्ड का एक चुटकुला। एक अंग्रेज ट्रेन में यात्रा कर रहा था। वह पहुंचा अपने मेजबान के घर, बड़ा थका-मांदा, उदास, परेशान, सिर में दर्द, उल्टी का मन हो रहा था। उसके मेजबान ने पूछा इतने परेशान क्यों हो? उस अंग्रेज ने कहा, क्या बताऊं? ट्रेन में मुझे जो सीट मिली थी वह इंजिन की तरफ घूमकर बैठने की थी और जब भी मैं गाड़ी में इंजिन की तरफ मुंह करके बैठता हूँ तो बड़े चक्कर आते हैं, वमन होने लगता है, मेरी तबियत खराब हो जाती है 'मोशन सीकनेस' की बीमारी है। मेजबान ने मेहमान से कहा कि अच्छा होता आप अपने सामने वाले सज्जन से सीट बदल लेते। उस अंग्रेज ने कहा, मैं भी यही सोच रहा था, लेकिन क्या बताऊँ? सामने की सीट पर कोई था ही नहीं, पूरा डिब्बा खाली था। तुम अंग्रेज न बनो, अंग्रेज बड़े 'एटीकेट्स' और बड़े मैनर वाले होते हैं। अगर सामने की सीट पर कोई है ही नहीं, पूरा डब्बा खाली है तो किससे सीट बदलें। ऐसी नासमझी न करना, हर परिस्थिति का उपयोग करना सीखो। नासमझ आदमी हर परिस्थिति में से दुःख निकाल लेता है। समझदार आदमी हर परिस्थिति में से आनंद का स्रोत ढूंढ़ लेता है। इस लिए भगवान शिव दोनों बातें कह रहे हैं, कह रहे हैं कि अगर झूलते हुए वाहन में यात्रा कर रहे हो, उसके साथ झूलो, प्रतिरोध न करो और अगर अचल वाहन में बैठे हो तो फिर मंद से मंदतर झूलने का भाव करो, शरीर को झूलने दो। फिर धीरे-धीरे अदृश्य झूला भीतर चलता रहेगा और अचानक तुम अपने भीतर केन्द्रित हो जाओगे। तो आओ आज हम इस प्रयोग को करते हैं।

शुरुआत में खड़े होकर प्रयोग करेंगे, फिर बैठकर प्रयोग करेंगे। तो ऐसे हिलें-डुलें,

डोलें जैसे की आप किसी चलते हुए वाहन में हैं। बंबई की लोकल ट्रेन में हचके लग रहे हैं। तो खड़े–खड़े आगे–पीछे झूलेंगे, बाएं–दाएं झूलेंगे, वर्तुलाकार झूलेंगे और फिर बैठकर वर्तुलाकार झूलेंगे और अंत में पेट के बल लेटकर पृथ्वी के साथ स्वयं को एक जानेंगे। तो सभी खड़े हो जाएं और शुरू करें आंख बंद करके आगे–पीछे झूलना, समझो आपको हचके लग रहे हैं। आप एक शराबी की भांति हैं। इस झूलने में आप कुछ भी नहीं कर रहे। गाड़ी में हचके लग रहे हैं। बहुत सुंदर। दूसरा प्रयोग, बाएं–दाएं झूलें, हौले–हौले, बिना प्रतिरोध के डोलते–डोलते गिर भी जाएं तो चिंता न करें, एक शराबी की भांति। शराबी गिर जाते हैं, उन्हें चोट भी नहीं लगती। कभी गौर किया छोटे बच्चों को, दिन में कितनी बार गिरते हैं, फिर भी कितनी कम चोट लगती हैं। बहुत खूब! अब आहिस्ता–आहिस्ता वर्तुलाकार घूमें, गोल–गोल, कभी आगे, कभी पीछे, कभी दाएं, कभी बाएं। अब धीरे से बैठ जाएं। बैठकर शरीर को वर्तुलाकार गोल–गोल झूलने दें, झुलाना नहीं है, झूलने दें। गिरने दो तुम मुझे मेरा सागर सँभाल लो, गिरने दो तुम मुझे मेरा सागर सँभाल लो, इतना तो मेरे यार करो मैं नशे में हूँ। मुझको कदम–कदम पे भटकने दो वाइजों, तुम अपना कारोबार करो, मैं नशे में हूँ। एक आंतरिक नशा उत्पन्न हो रहा है, खुमारी की अवस्था। अब पेट के बल लेट जाएं। भाव करें धरती माँ के साथ एक हो गए, जैसे छोटा बच्चा अपनी माँ के सीने से लगकर सो जाता है, ठीक वैसे ही यह पृथ्वी भी हमारी माँ है, हम सब इसके बच्चे हैं। धरती माँ के साथ एक हो जाएं। यह एकता की अनुभूति अद्वैत की प्रतीति बन जाएगी। अखण्ड और अविभाज्य, इस अस्तित्व के हिस्से हो जाएं। हम इस अस्तित्व से अलग–थलग नहीं, एक हैं।

ओम् नमः शिवाय, ओम् नमः शिवाय!!

ओशो शरणं गच्छामि, ओशो शरणं गच्छामि!!

सुई भेदन से शुद्धि पाओ–21

अपने अमृत–भरे शरीर के किसी अंग को सुई से भेदो और भद्रता के साथ उस भेदन में प्रवेश करो; और आंतरिक शुद्धि को उपलब्ध होओ।

मैंने सुनी है एक अंग्रेज के बारे में घटना। अंग्रेज बड़े औपचारिक किस्म के लोग होते हैं। बड़े 'एटीकेट्स' और मैनर वाले। ट्रेन से यात्रा करके अपने मित्र से मिलने फ्रांस जा रहा था। जब वहां वह पहुँचा तो बहुत रुग्ण हालत में, बहुत परेशान, बीमार। उसके फ्रेंच मित्र ने पूछा कि क्या तकलीफ हो गई? उस अंग्रेज ने कहा, ट्रेन में जो सीट मुझे मिली थी उसकी वजह से तकलीफ हो गई। जिस दिशा में ट्रेन जा रही है अगर मैं उसी दिशा की सीट पर बैठूं तो मुझे उल्टियां होने लगती है, वमन होने लगता है, बुखार चढ़ आता है, चक्कर आने लगता है, बड़ी तकलीफ हो जाती है। उसके फ्रेंच दोस्त ने कहा, ज्यादा अच्छा होता अगर आप अपने सामने वाले साथी से सीट एक्सचेंज कर लेते, दूसरी दिशा में बैठ जाते। उस अंग्रेज ने कहा, मेरे मन में भी यह विचार आया था कि सामने वाले से सीट एक्सचेंज कर लूं, लेकिन मुश्किल यह थी कि सामने वाली सीट पर कोई था ही नहीं, सीट

खाली थी। तो तुम कृपा करके अध्यात्म के बारे में अंग्रेज मत बनना। तुम कर्ताभाव की सीट पर बैठे हो और सारी तकलीफ उसी की वजह से है और तुम्हारे ठीक सामने साक्षीभाव की सीट है जो बिल्कुल खाली है, मगर तुम सीट बदलने को तैयार नहीं हो। काश हम थोड़ा सा परिवर्तन कर लें। जिस देह और मन के बल पर हम जी रहे हैं, कर्ताभाव और भोक्ताभाव में वहां तकलीफें–ही–तकलीफें होंगी। जरा सा परिवर्तन और सीट खाली है किसी से निवेदन भी नहीं करना है।

साक्षीभाव में आ जाओ और सारी तकलीफों के पार हो जाओ, तुम तकलीफ के भी साक्षी हो सकोगे, उसके भी द्रष्टा हो सकोगे और द्रष्टाभाव की एक खूबी है, द्रष्टा हमेशा दृश्य से भिन्न होता है, 'दि ऑबजर्वर इज सेपरेट फ्रॉम ऑबजर्वड्'। तुम जिस चीज का निरीक्षण कर रहे हो निश्चित ही तुम उससे अलग हो गए। तुम एक वृक्ष को देखते हो, इसका अर्थ स्पष्ट है तुम तो वृक्ष नहीं हो, तुम एक पर्वत को देखते हो, तुम पर्वत नहीं हो, तुम देखने वाले हो। अगर कहीं दर्द है, तकलीफ है तो तुम उसे जानने वाले हो, भोगने वाले नहीं हो। आज भगवान शिव एक बहुत ही अद्भुत विधि देते हैं, कहते हैं हे देवी! अपने अमृत भरे शरीर को किसी सुई से भेदो और भद्रता के साथ उस भेदन में प्रवेश करो और इस प्रकार आंतरिक शुद्धि को उपलब्ध हो जाओ। हमारा शरीर एक रहस्यमय यंत्र है। इंद्रियों से बहिर्मुखी चेतना पदार्थ को जानती है और इन इंद्रियों से अंतर्मुखी हुई चेतना परमात्मा को जानती है। इंद्रियां हमारे द्वार हैं। सत्य एक ही है उसको देखने के दो ढंग हैं। इंद्रियों के माध्यम से देखा तो संसार, अतीन्द्रिय ढंग से देखा तो परमात्मा।

संसार और परमात्मा दो अलग–अलग घटनाएं नहीं हैं। सत्य एक ही है, उस सत्य को हम किस भांति देखेंगे? नीला चश्मा लगाकर देखो तो सफेद चीज भी नीली दिखाई देती है, लाल चश्मा से देखो तो सब कुछ लाल नजर आएगा। यही मैं आप से कह रहा हूँ। केवल अपने भीतर छोटा सा रूपांतरण करना है, सीट बदलनी है। आंख बंद करके स्वयं को जानो, तुम्हारा होना अतीन्द्रिय है। अगर बिल्कुल घनघोर अंधेरा हो, कुछ भी दिखाई न पड़ता हो और मैं आपसे पुछूं, आप हैं? तो आप कहेंगे, हाँ हूं। मैं आपसे पूछूंगा आपको कैसे पता चला कि आप हैं? क्या आप स्वयं को दिखाई पड़ रहे हैं? आप कहेंगे स्वयं को देखने की जरूरत नहीं, मैं भीतर से जानता हूँ कि मैं हूँ। इसका मतलब हुआ आपको जानने के लिए आपको स्वयं को आंख, कान, नाक, हाथ किसी की भी चीज की जरूरत नहीं है। अगर ये इंद्रियां नष्ट हो जाएं, आप बिल्कुल अंधे, गूंगे, बहरे, कोई भी इंद्रिय आपकी काम न करे तब भी आप जानेंगे कि आप हैं। यह जानना कहां से आया? यह बिना किसी इंद्रिय के आया। तो बाहर के संसार को जानने के लिए इंद्रियों की आवश्यकता है, स्वयं को जानने के लिए किसी इंद्रिय की

आवश्यकता नहीं है। कैसे? बाहर से भीतर की तरफ चलें।

तीन स्थितियां समझना। एक साधारणतः सांसारिक स्थिति है, पूरा का पूरा बहिर्मुखी, दूसरा समाधिस्थ व्यक्ति की स्थिति है, पूरा का पूरा अंतर्मुखी और मध्य में है ध्यान की अवस्था। थोड़ा सा भीतर भी, थोड़ा सा बाहर भी। जैसे कोई अपने मकान की दहलीज पर खड़ा हो, एक पैर घर के बाहर एक पैर घर के भीतर। एक आंख से बाहर का नजारा भी दिखाई देता है, दूसरी आंख से कक्ष के भीतर का दृश्य भी नजर आ रहा है, 'डबल ऐरोड कॉनशसनेस'। मैंने सुना है, एक बहुत मूर्ख आदमी आर्मी में भर्ती हुआ। हर छोटी–छोटी बात के संबंध में वह कर्नल से पूछता था कि ऐसा करना है कि वैसा करना है। पीने के लिए चाय और काफी रखी है तो कर्नल से जाकर पूछेगा कि चाय पिऊं कि काफी पिऊं। कर्नल भी थक गया उसके सवाल का जबाव देते–देते। अंत में जब उसे रायफल की ट्रेनिंग दे रहे थे। वह रायफल चलाना सीख गया। तब उसने पूछा कर्नल साहब से, एक बात बता दें कि युद्ध के दौरान बंदूक की नली को दुश्मन की तरफ रखनी है या अपनी तरफ। कर्नल ने गुस्से में कहा, किसी भी तरफ रखो, दोनो ही हालत में देश को फायदा होगा। कर्नल ने कहा, अगर तुम्हारे जैसे लोग मिलिट्री में भर्ती होते रहे तो सरकार से निवेदन करूंगा कि इस प्रकार की बंदूकें बनाए कि जिसमें दोनो तरफ से गोलियां चलती हों। मूर्खों से भी छुटकारा हो। एक 'डबल ऐरोड कॉनशसनेस' चेतना भी होती है, जिसके दोनो तरफ तीर हो। हम बहिर्मुखी और अंतर्मुखी दोनों एक साथ हो सकें। कृष्णमूर्ति जिसे कहा करते थे 'च्वाएसलेस अवेयरनेस'। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं 'टोटल अवेयरनेस', समग्ररूपेण जागरूक, सबकुछ के प्रति, जो भी है भीतर–बाहर, सब। दूसरा और स्वयं का होना, सब। यह अवस्था ध्यान की अवस्था है। इस ध्यान की अवस्था में जाने के लिए इस विधि का उपयोग किया जा सकता है।

एक छोटी सी सुई किसी एक्युपंचरिस्ट से प्राप्त कर लेना। वह हाइजिनिक होगी, उससे कोई 'इन्फेक्शन' का डर न होगा। उसे धीरे से कहीं चुभाना, दर्द के प्रति जागरूक होना और एक बड़ी विचित्र घटना घटेगी। जैसे–जैसे तुम सजग होते जाओगे, तुम्हारा दर्द पिनप्वाइंटेड होता जाएगा। पहले फैला हुआ जान पड़ रहा होगा, फिर धीरे–धीरे बिल्कुल एक बिंदु पर आ जाएगा और सजग होना तब वह बिन्दु भी खो जाएगा और तुम चेतना में स्थित हो जाओगे। तुम्हारी सजगता बढ़ेगी, दर्द के माध्यम से। तपस्वियों ने तप के जो विविध उपाय खोजे, उनकी बुनियाद इसी विधि पर आधारित है। अगर हम जान–बूझकर कोई कष्ट पैदा कर सकें तो कष्ट में सजग होना आसान है। सुख में हमारा मन सो जाता है, सुख से हम तादात्म्य बनाना चाहते हैं। जब कोई दर्द तकलीफ हो, हम खुद ही उससे दूर हटना चाहते हैं।

ओशो के एक परिचित नास्तिक थे, उनके कमर का फ्रैक्चर हो गया। डॉक्टरों ने कहा तीन महीने बिल्कुल हिलना–डुलना नहीं है, प्लास्टर में बंध पड़े रहना है बिस्तर में। वे बड़े ही

तकलीफ में पड़ गए। बड़े ही कर्मठ किस्म के इंसान थे, कभी जिंदगी में चैन से दो मिनट बैठे न थे। जब ओशो उनको देखने गए, वे रोने लगे। उन्होंने कहा, इससे अच्छा होता कि मैं मर ही जाता। कमर की हड्डी टूट गई, बड़ी मुसीबत हो गई, तीन महीने बिना हिले–डुले पड़े रहना पड़ेगा। इससे तो अच्छा था मौत हो जाती। मैं तो बड़ा कर्मठ किस्म का हूँ, आप जानते ही हैं, बिना किए रहना मेरे लिए संभव नहीं। ओशो ने कहा एक छोटा सा काम करो। ध्यान का एक प्रयोग कहता हूँ। वे कहने लगे कि देखिए मैं नास्तिक हूं। आपको पता है मुझे ध्यान में कोई उत्सुकता नहीं है। ओशो ने कहा, ईश्वर की छोड़ो, मैं तुमसे ईश्वर की बात नहीं कर रहा। एक छोटी सी विधि दे रहा हूँ, यह जो दर्द हो रहा है तुम्हें, इसको भीतर से एहसास करो। इसके प्रति प्रतिरोध छोड़ दो, कि मिट जाए, कि नष्ट हो जाए। दुश्मनी का भाव छोड़ दो कि तीन महीने बिस्तर पर पड़े रहना है, इसको स्वीकार लो और इसे भीतर से जानो, कहां हो रहा है? कहने लगे इससे क्या होगा? ओशो ने कहा, तुम करके तो देखो, फिर बताना क्या होगा। कहने लगे, मैं नहीं करने वाला, ध्यान में मुझे कोई रस नहीं है।

तीन दिन बाद उनके बेटे का ओशो के पास फोन आया कि पिताजी आपको बुला रहे हैं, आपको धन्यवाद देना चाहते हैं। जब ओशो उनसे मिलने गए तो उनके चेहरे पर अद्भुत शांति नजर आ रही थी। वे कहने लगे, पहले तो मैंने आपकी बात नहीं मानी, मैंने इंकार कर दिया कि प्रयोग नहीं करूँगा, लेकिन फिर मुझे समझ में आया कि तीन महीने मुझे पड़े ही रहना है तो प्रयोग करने में हर्ज ही क्या है, वैसे भी खाली पड़ा हूँ, कुछ करने को नहीं है। मैंने भीतर–भीतर ख्याल किया कि कहां दर्द हो रहा है? पूरे पेट, कमर, पैर, सब जगह दर्द का एहसास हो रहा था। जब खूब गौर किया तो दर्द और कम जगह महसूस होने लगा, फिर बिल्कुल 'पिनप्वाइंटेड' हो गया। अब दर्द केवल एक जगह महसूस हो रहा था जहां फ्रैक्चर था और फिर अंत में अचानक पता नहीं क्या हुआ। आपने कोई चमत्कार किया या आपने कोई आशीर्वाद दिया क्या? मैं तो नास्तिक हूँ, चमत्कार और आशीर्वाद को मानता नहीं हूँ लेकिन बहुत विचित्र घटना घटी। अचानक दर्द विलीन हो गया, मैं बड़े आनंद से भर गया और आपको धन्यवाद देने के लिए ही बुलाया है। ओशो ने उनको समझाया कि जब तुम जागरूक हुए तो तुम्हारी चैतन्यता बढ़ी, तुम कर्ता से साक्षी में आना शुरू हुए, जब तुम द्रष्टा बने तो शरीर में होने वाली पीड़ा तुमसे अलग हो गई, तुम उससे अलग हो गए। और यही घटना है, जैसे ही तुम देह से भिन्न हुए, देह में होने वाली पीड़ा पीछे छूट गई, तुम चेतना में आ गए और चेतना आनंदस्वरूप है, सच्चिदानंद है। ये छोटी–छोटी विधियां बड़ी अद्भुत हैं।

मैंने सुना है एक महिला डॉक्टर के पास पहुंची और उसने कहा कि मेरे पूरे शरीर में दर्द ही दर्द है, ऐसी कोई बीमारी नहीं जो मुझे न हो। मैं अंगुली से यहां दबाती हूँ तो यहाँ दर्द होता

है, कंधे में दबाऊं तो दर्द होता है, घुटने में दबाऊं तब भी दर्द होता है, पैर में दबाऊं तब भी दर्द होता है, जहां भी मैं उंगली से दबाती हूँ दर्द होता है। डॉक्टर ने पूरी जांच पड़ताल के बाद पाया कि उसकी उंगली में फ्रैक्चर है। जिंदगी में भी जितना दर्द व तकलीफें हैं वास्तव में उतनी है नहीं। बहुत छोटी सी तकलीफ है। यह जो हमारा कर्ताभाव है, द्रष्टाभाव हमारे पास नहीं है, यही हमारे दर्द की जड़ है। लेकिन हम हमेशा दूसरी चीजों को दर्द का कारण बता रहे हैं। तो पहले तो दर्द के कारण को खूब अच्छे से पहचान लो, वह हमारे साक्षी भाव न होने की वजह से है। इसलिए अगर किसी भी प्रकार साक्षीभाव पैदा हो गया तो दर्द से छुटकारा हो जाएगा।

मैंने सुना है, फजलू ने एक दिन गुस्से में खाना नहीं खाया, जिद कर रहा था कि इडली–डोसा खाना है। घर में इडली–डोसा नहीं थे। कहा, नहीं खाऊंगा खाना। भूखा बैठा था कुछ देर, थोड़ी देर बाद उसके पेट में दर्द होने लगा, उसने आकर नसरुद्दीन से पूछा, पापा जी मेरे पेट में दर्द क्यों हो रहा है? नसरुद्दीन ने कहा, क्योंकि तुम्हारा पेट खाली है। फजलू ने कहा अच्छा अब समझ गया पापा कि आपको अक्सर सिरदर्द क्यों होता रहता है? यह खोपड़ी खाली डब्बा है। काश, ऐसा हो जाए तो महासौभाग्य की घटना घट जाए। विचारों से मुक्त, कर्ताभाव से मुक्त, अहंकार से मुक्त, भोक्ताभाव से मुक्त, ये खोपड़ी खाली हो जाए तो अचानक शून्यता का उदय हो, साक्षी का उदय हो और उस साक्षी में फिर सारी पीड़ा समाप्त हो जाती है। वह साक्षी परमानंद की अवस्था है, उसी ओर हमें जाना है।

तो आज हम सुई का प्रयोग तो नहीं करेंगे। कोई जरूरी नहीं सुई का ही प्रयोग करें। चम्मच के प्रयोग से भी वही बात बन जाएगी। तो प्रयोग को शुरू करते हैं। आराम से बैठ जाएं, आंखें खोलें, चम्मच को उठाएं और पैर के पंजे में चम्मच को गड़ाएं। अब आंख बंद कर लें और चम्मच की चुभन को महसूस करें और गौर से देखें, एक छोटे से बिन्दु पर चुभन हो रही है। ऐसा जाने जैसे दर्द किसी और के शरीर में हो रहा है, मैं केवल इसको जानने वाला हूं। देह से तादात्म्य तोड़ें, आप केवल दर्द के द्रष्टा हैं। आप भोक्ता नहीं ज्ञाता हैं। अंत में अब चम्मच को गिर जाने दें और चम्मच के साथ ही देहभाव भी गिर जाने दें, चेतना में स्थित द्रष्टाभाव में रमें। आपका स्वभाव केवल जानना है। भूख लगती है तो आप भूख को जानते हैं कि शरीर में भूख लगी, पेट भर जाता है तब आप जानते हैं पेट को तृप्ति हो गई। न आपको कभी भूख लगी, न आपने भोजन किया, न आपको तृप्ति हुई। आपका स्वभाव केवल जानना है। आपने जाना कि शरीर का जन्म हुआ, एक दिन आप जानेंगे कि शरीर की मृत्यु हुई। उस दिन भी आप जानते ही रहेंगे। वही आपका अमृत स्वरूप है। इस देह के भीतर वह अमृत चेतना भरी है जो कभी नहीं मरेगी। अपने दोनों हाथ जोड़ें और ज्ञाताभाव, अपने स्वभाव को पहचानने के लिए धन्यवाद दें।

ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!!

रूपांतरित हो जाओ–22

अपने अवधान को ऐसी जगह रखो, जहां तुम अतीत की किसी घटना को देख रहे हो और अपने शरीर को भी। रूप के वर्तमान लक्षण खो जाएंगे और तुम रूपांतरित हो जाओगे।

भूली बिसरी चंद उम्मीदें, चंद फसाने याद आए
तुम याद आए और तुम्हारे साथ जमाने याद आए
दिल का चमन आबाद था फिर भी खाक सी उड़ती रहती थी
कैसे जमाने एक में दौरा तेरे बहाने याद आए।
हंसने वालों से डरते थे, छुप–छुप कर रो लेते थे
गहरी–गहरी सोच में डूबे दो दीवाने याद आए
ठंडी–ठंडी हवा के झोंके आग लगाकर छोड़ गए

फूल खिले साखों पे नए और दर्द पुराने याद आए।
भूली बिसरी चंद उम्मीदें, चंद फसाने याद आए
तुम याद आए और तुम्हारे साथ जमाने याद आए

मनुष्य के मन की कई वृत्तियों में एक वृत्ति है याद्दाश्त की, स्मृति की। पतंजलि से पूछो तो पतंजलि कहेंगे, चित्तवृत्तियों का निरोध करना है। ये स्मृतियां कल्पना नहीं होनी चाहिए, तभी अध्यात्म में गति हो सकेगी। बड़ी कठिन बात वे कहते हैं। आदमी जी रहा है यादों में, कल्पनाओं में, योजनाओं में। भगवान शिव से पूछो, वे ज्यादा मानवीय बात कहेंगे। वे कहेंगे, ठीक अपनी इस चित्तवृत्ति का उपयोग कर लो वर्तमान में आने के लिए। यादों के बहाने ही सही, कल्पनाओं के बहाने ही सही। इसलिए विज्ञान भैरव तंत्र की बहुत सी विधियां, स्मृति और कल्पना का भी उपयोग करती हैं, अपने चैतन्य में स्थित होने के लिए। इस तंत्र–सूत्र की 22वीं विधि में भगवान शिव कहते हैं, हे देवी! अपने ध्यान को ऐसी जगह रखो, जहां तुम अतीत की किसी घटना को देख रही हो और अपने शरीर को भी। तब रूप के वर्तमान लक्षण खो जाएंगे और तुम रूपांतरित हो जाओगी। बड़ी अद्भुत क्रांतिकारी बात। अतीत की किसी घटना को याद करो, यादें तो आ ही रही हैं, उसमें से किसी मुख्य घटना को पकड़ लो। अपने मन को पूरी छूट दो, उस घटना को अच्छे से याद करें और उसमें एक नई बात जोड़ो, उस घटना में स्वयं के उस रूप का भी स्मरण करो।

समझो, बचपन की तुम कोई याद कर रहे हो। तुम छोटे बच्चे थे, छोटा सा शरीर था तुम्हारा, जरा उसका भी स्मरण करो। कोई खेल खेल रहे थे स्कूल में बच्चों के साथ, किसी से झगड़ा हो गया था, किसी के साथ मारपीट हो गई थी, इस पूरी घटना में स्वयं के होने का भी ख्याल रहे, वह छोटा सा बच्चा। उस दिन तो बड़ा सीरियस और गंभीर मामला था, लेकिन आज 40–50 साल बाद, उस घटना को याद करके तुम हंसोगे। अचानक डिसआइडेंटीफिकेशन होगा, तादात्म्य टूटेगा, वह छोटे से बच्चे का शरीर जिसे तुमने कभी स्वयं का शरीर जाना था, आज वह दूर से पृथक नजर आएगा। उससे तादात्म्य तोड़ना बहुत आसान है। तादात्म्य ही असली पाप है। महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा लिखी है। अपनी भूल–चूकों का खूब वर्णन किया है। रूसो ने अपनी आत्मकथा में, अपने पापों का कन्फेशन किया है, प्रायश्चित किया है।

दुनिया के बहुत महात्माओं ने खूब बढ़ा–चढ़ाकर अपनी जीवन की घटनाएं लिखी हैं। लेकिन एक बात लिखना वो भूल जाते हैं, वही है असली पाप। आइडेंटिफिकेशन इज द ओरिजनल सिन। ओशो कहते हैं, तादात्म्य है असली पाप। किसी महात्मा की किताब में

आजतक मैंने नहीं पढ़ा, उनके पापों के वर्णनों में कि तादात्म्य पाप था। 50–60 साल बाद वे किताब लिख रहे हैं और उसमें उन पापों में खूब रस लेकर लिख रहे हैं, न केवल रस, अतिशयोक्तिपूर्ण रस लेकर लिख रहे हैं। उससे आइडेंटिफिकेशन अभी भी नहीं टूटा और इसलिए वे महात्मा नाममात्र के हीं महात्मा हैं, अध्यात्म में उनकी कोई गति नहीं हो पाई। याद करो बचपन में तुम खिलौनो से खेलते थे, गुड्डे की टांग टूट गई थीं, कितना गंभीर मामला था। दुख के कारण तुमने भोजन न किया था, आंसू टपक रहे थे। तुम्हारी माँ मना रही थी तुम्हें, तुम न माने। रात चैन से नींद न आई, करवट बदलते रहे, गुड्डे की टांग टूट गई। आज तुम वह घटना याद करोगे, बिल्कुल पृथक होकर उसे आसानीं से याद कर सकोगे। फिर बचपन के खेल–खिलौने गए, जवानीं के खेल–खिलौने आ गए। किसीं से तुम्हारा इश्क हो गया था, तुम जींने मरने के लिए तैयार थे, आत्महत्या करने को राजीं थे, अगर उससे शादीं न होतीं तो। आज लौट कर उस घटना को देखोगे, तुम्हें याद भीं न आएगा, उस प्रेमिका का नाम भीं क्या था, कहां गई, किससे उसकी शादी हुई, कहां रहती है आजकल, कुछ पता ठिकाना नहीं। अब वह घटना बहुत दूर हो गई। ठींक जैसे वो बचपन के खेल–खिलौने छूट गए, जवानी का ये खेल भीं बहुत दूर छूट गया, अब तुम परिपक्व हो गए। लौट कर देखना तादात्म्य को तोड़ने में बहुत सहयोगीं हो सकता है।

इसकी विपरीत पद्धति भी उपयोग कीं जा सकती है, कल्पना की। बूढ़ों के लिए स्मृति ज्यादा आसान होगीं, छोटे बच्चों के लिए कल्पना करना आसान होगीं। वह भविष्य की कल्पना करें और उस कल्पना में अपने बड़े रूप को देखें और तब उससे अपने आइडेंटिफिकेशन को तोड़ें। और तब अचानक वर्तमान के क्षण में आना हो जाएगा और रूपांतरण घटित होगा। उस चैतन्य में स्थित हो जाएंगे जिसमें होना चाहिए, जो कि वास्तव में हम हैं। तो बूढ़े लोगों के लिए अतीत से तोड़ना आसान है, बच्चों के लिए इसी विधि का उल्टा रूप करना आसान होगा। महावीर ने प्रतिक्रमण कीं पद्धति दीं अपने साधकों को। गौतम बुद्ध ने भीं पिछले जन्मों में ले जाने कीं विधि बताई। पींछे का याद करो, करते जाओ, करते जाओ। चार–पांच साल तक कि उम्र को याद आना बड़ा आसान है, उसके बाद थोड़ीं कठिनाई शुरू होतीं है, फिर जरा साधना को गहन करना होगा। एक दिन आएगा तुम्हें अपने जन्म कीं याद आएगीं। उसके बाद भी अगर लगे रहे, गर्भावस्था का ध्यान आएगा। उसके बाद पिछलीं मृत्यु स्मरण आएगीं। ये जो पींछे कीं कहानीं है, उल्टे सिक्वेंस में चलतीं है। जैसे किसीं कैसेट को तुम रिवाइंड कर रहे हो।

इस बात को स्मरण रखना, पींछे कीं जो याद करो, वो उल्टे सिक्वेंस में होनीं चाहिए। अगर तुमने नार्मल सिक्वेंस में किया फास्ट फार्वर्ड प्ले कीं दिशा में तब जाति स्मरण नहीं

होगा, बल्कि तुम्हारी आदतें ही मजबूत होंगी। इस बात को खूब ख्याल रखना, बड़ी बारीक बात ओशो ने बताई है। रिवाइंड करना, चीजों को उल्टे क्रम में देखना। जब पिछला जन्म याद आएगा तो पहले मृत्यु याद आएगी, उसके बाद बीमारियां याद आएंगी, उसके बाद बुढ़ापा आएगा, उसके बाद जवानी आएगी, उसके बाद बचपन आएगा, फिर उसके बाद जन्म आएगा। सब चीजें, जैसे किसी उपन्यास को तुम पीछे की तर से पढ़ना शुरू करो, तब जाकर ये प्रतिक्रमण की विधियां, जातिस्मरण की विधियां काम करती हैं। और एक बार पिछले जन्मों का स्मरण आ जाए, फिर वही सारी बातें जो इस जिंदगी में हो रही हैं, बचकानी और हास्यास्पद लगने लगेंगी। अभी भी हास्यास्पद हैं, लेकिन अभी एक अर्जेंसी का भाव जुड़ा हुआ है, तात्कालिकता का भाव और उसकी वजह से हम उसको बहुत गंभीरता से लेते हैं।

मैं एक चुटकुला पढ़ रहा था । आजादी के पहले और आजादी के 60 साल बाद भारत की स्थिति में परिवर्तन। सन् 1947 की घटना। बेटी ने पूछा कि मां, क्या मैं जींस पहन लूं? माँ बोली जींस पहनोगी तो लोग क्या कहेंगे? 60 साल बाद सन् 2007 की घटना, बेटी ने वही सवाल पूछा, माँ मैं जींस पहन लूं? माँ बोली, हां बेटी कुछ तो पहन लो वरना लोग क्या कहेंगे? अभी मामला बड़ा गंभीर लग रहा है कि कुछ तो पहन ले, हो सकता है 50 साल बाद लोग इस पर भी हंसें। अभी जो बातें हमें बड़ी गंभीर लग रही हैं। समय बीत जाएगा, चीजें बदल जाएंगी। फैशन बदलते ही वही बातें जो बड़ी गंभीर थीं, हास्यास्पद बन जाती हैं। इस सूत्र को समझाते हुए 'दि बुक ऑफ दि सीक्रेट्स' के 15वें प्रवचन में ओशो कहते हैं, अतीत की किसी घटना को देखो, उसमें तुम्हारा रूप उपस्थित होगा। यह सूत्र तुम्हारा नहीं, तुम्हारे रूप की चर्चा करता है। तुम तो कभी वहां थे ही नहीं, सदा किसी घटना में तुम्हारा रूप उलझता है। जब तुम मुझे अपमानित करते हो तो सच में तुम मुझे अपमानित नहीं करते, तुम मेरा अपमान कर ही नहीं सकते, केवल मेरे रूप का अपमान कर सकते हो। मैं जो रूप हूं, तुम्हारे लिए तो उसी की उपस्थिति भर है और तुम उसे अपमानित कर सकते हो। लेकिन मैं अपने को अपने रूप से पृथक जान सकता हूं। यही कारण है कि हिन्दू नामरूप से अपने को पृथक करने की बात पर इतना जोर देते आए हैं। तुम तुम्हारा नामरूप नहीं हो, तुम तो वह चैतन्य हो जो नामरूप को जानता है। और चैतन्य सर्वथा पृथक है, लेकिन वर्तमान में यह करना कठिन होगा इसलिए अतीत से शुरू करो, वह सरल है, क्योंकि अतीत के साथ कोई तात्कालिकता का भाव नहीं है।

किसी ने 20 साल पहले तुम्हारा अपमान किया था, उसमें अपमान का कोई भाव कैसे होगा। वह आदमी मर चुका और बात आई–गई हो गई, वह एक मुर्दा घटना है। अतीत की याद से शुरू करो, उसके प्रति जागरूक होना सरल है। एक बार तुम उसके प्रति जागना सीख गए

तो बाद में फिर अभी और यहीं होने वाली घटनाओं के प्रति भी जागना हो सकेगा। लेकिन अभी और यहां से आरंभ करना थोड़ा कठिन है। क्योंकि समस्या इतनी तात्कालिक है, निकट है। जरूरी है कि उसमें गति करने के लिए जगह नहीं हैं, थोड़ी दूरी बनानी होगी और घटना से पृथक होना होगा। थोड़ा सा कठिन पड़ेगा वर्तमान में। इसलिए शिव कहते हैं, अतीत से आरंभ करो, अपने ही रूप को अपने से अलग देखो और इसके द्वारा रूपांतरित हो जाओ, क्योंकि यह निर्ग्रंथन है, यह एक गहरी सफाई है, धुलाई है और तब तुम जानोगे कि समय में जो तुम्हारा शरीर है, जो तुम्हारा मन है, वह तुम्हारा वास्तविक यथार्थ नहीं है, वह तुम्हारा सत्य नहीं है, सार सत्य इससे सर्वथा भिन्न है। तुम चैतन्य स्वरूप हो, नामरूप से सर्वथा अछूते। ऐसा समझो, बचपन, जवानी, बुढ़ापा ये मानो रेलवे स्टेशन्स हैं, जिससे तुम्हारी ट्रेन गुजरी। तुम वह यात्री हो जो ट्रेन में बैठे, तुम न बच्चे हो, न जवान, न बूढ़े। तुम इन तीनों के साक्षी हो, इन तीनों के द्रष्टा हो। आओ माँ आशो प्रिया के साथ इस विधि को करें। धन्यवाद!

माँ आशो प्रियाः– आज की विधि में आपका बहुत–बहुत स्वागत है। बचपन की कोई घटना याद करें। कोई घटना जो आज भी आप नहीं भूले हैं। उस समय आप कितने बड़े थे, आप कैसे दिखते थे। अपने शरीर को याद करें, अपनी शरीर की आकृति को याद करें। उस घटना के साथ अपने शरीर को भी देखें। बचपन की घटना को री–लिव कर रहे हैं और उस समय के शरीर को भी महसूस कर रहे हैं। अब धीरे से बैठ जाएं, आंखे बंद रहेंगी।..तुम्हारे रूप के वर्तमान क्षण खोने लगे, ...तुम्हारे रूप के वर्तमान लक्षण खोने लगे। तुम कौन हो? बच्चे, जवान अथवा बूढ़े। तुम कौन हो? तुमने बचपन जाना, युवावस्था जानी, वृद्धावस्था भी जान रहे हो या जानोगे। तुम केवल जानने वाले हो, तुम केवल जानने वाले हो, द्रष्टामात्र, साक्षीमात्र, ज्ञातामात्र। अब धीरे से लेट जाएं। विश्राम, विश्राम, ...पूर्ण विश्राम। अपने अंतराकाश को देखें, तुम समय के पार हो, अरूप हो, निराकार हो, परिवर्तनशील नहीं हो, अपरिवर्तनशील हो, शाश्वत हो, चैतन्य हो। अपने शाश्वत चैतन्य स्वरूप में डुबकी लगाएं। गहरे और गहरे उतरते जाएं।

.....धीरे–धीरे ध्यान से वापस लौटें, आज का ध्यान पूरा हुआ, हरि ओम् तत्सत्!
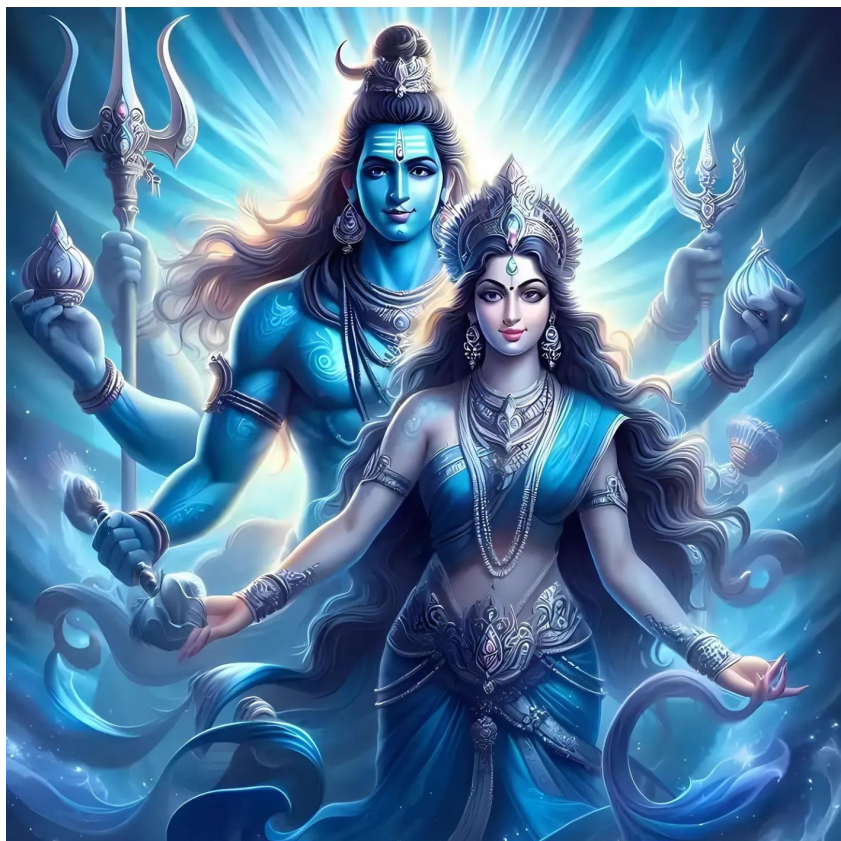
आत्मोपलब्ध हो जाओ–23

अपने सामने किसी विषय को अनुभव करो। इस एक विषय को छोड़कर अन्य सभी विषयों की अनुपस्थिति को अनुभव करो। फिर विषय–भाव और अनुपस्थिति–भाव को भी छोड़कर आत्मोपलब्ध हो जाओ।

भगवान शिव कहते हैं हे देवी! अपने सामने किसी विषय की उपस्थिति को महसूस करो। फिर एक विषय को छोड़कर अन्य सभी विषयों की अनुपस्थिति को महसूस करो। फिर विषय–भाव और अनुपस्थिति–भाव, दोनो को छोड़कर आत्मोपलब्ध हो जाओ। बड़ी ही प्यारी यह विधि है, दृश्य से द्रष्टा की ओर गति करने के लिए बड़ा ही अद्भुत सूत्र भगवान शिव दे रहे हैं। पहले तो दृश्य में तल्लीन हो जाओ, वह एक दृश्य तुम्हें सारे संसार के विषयों से मुक्त कर देगा। याद रखना, वह दृश्य ऐसा होना चाहिए, वह विषय ऐसा होना चाहिए, जिसके प्रति तुम्हारा सहज लगाव और प्रेम है। तुम्हें अगर गुलाब का फूल पसंद है तो गुलाब का फूल देखो, तुम्हें अपना कोई मित्र प्रीतिकर लगता है तो उसके स्मरण से भरो, उसके सामने बैठो, तुम्हें कोई वृक्ष प्यारा लगता है, या तुम्हें नदी के पास बैठने में रस आता है। जहां तुम्हारी ऊर्जा का सहज, प्रेमपूर्ण प्रवाह होता है, उस विषय को चुनना, ताकि चित्त वहां

से भागे न। और जिसके प्रति हम प्रेमपूर्ण होते हैं, उसकी उपस्थिति में हम सारी दुनिया को भूल जाते हैं। एक ही विषय रह गया, फिर बहुत आसान है इस एक विषय से स्वयं पर आना। पहले सारे विषयों की अनुपस्थिति को महसूस करो और फिर दोनों को छोड़ दो।

याद रखना, अनुपस्थिति भी उसी की महसूस की जा सकती है जब किसी के प्रति गहन प्रेम का भाव हो। आप जिसे प्रेम करते हैं, केवल उसी की गैरमौजूदगी उसकी याद बनकर आती है। तो इस मन की सामान्य प्रवृत्ति का उपयोग हम ध्यान की विधि के रूप में कर सकते हैं। ऐसा विषय नहीं चुनना, जिससे तुम ऊब जाओ, जिससे मन भागने का हो। मैने सुना है, सरदार विचित्तर सिंह एक दिन लाइब्रेरी में गए, एक बहुत मोटी किताब उन्होंने पढ़ने के लिए उठा ली। पहली बार ही लाइब्रेरी आए थे। बहुत देर तक किताब को उलटते–पलटते रहे, एक–एक पेज उलट डाला, कोई दो घंटे बाद उन्होंने कहा लाइब्रेरियन से कि हद हो गई, ये किस लेखक ने लिखी है, इतनी उबाऊ और बोरिंग किताब? इसमें, नाटक में कुछ कहानी है ही नहीं, नाटक के पात्रों की ही लंबी लिस्ट है, पढ़ते–पढ़ते दो घंटे बीत गए। आगे कुछ कहानी ही नहीं है, बस पात्रों के नाम ही नाम हैं। लाइब्रेरियन ने गौर से देखा, उसने कहा कि सरदार जी क्षमा करें, यह नाटक की किताब नहीं, यह तो टेलीफोन डायरेक्ट्री है।

मैंने सुना है एक बहुत क्रोधित दिखने वाली स्त्री, केमिस्ट की दुकान पर पहुंची और उसने कहा कि मुझे आत्महत्या करने के लिए जहर चाहिए, जल्दी दीजिए। केमिस्ट ने कहा क्षमा करें, बिना प्रेसक्रिप्शन के हम कोई दवाई नहीं बेचते। उस महिला ने अपने बैग में से एक मैला–कुचैला, फटा सा कागज निकालकर केमिस्ट के सामने पटक दिया। केमिस्ट ने खोलकर देखा, उसने कहा कि यह क्या है, यह कोई कार्टून है? क्या है यह? यह प्रेसक्रिप्शन तो नहीं है। उस गुस्सैल स्त्री ने कहा कि यह मेरे पति का फोटो है। केमिस्ट ने कहा, तब ठीक, मैं आपको जहर दिए देता हूं, यही तो प्रेसक्रिप्शन हो गया। जिससे तुम्हारा चित्त ऊबे, घबराए, जिससे तुम स्वयं हटना चाहो, उसपर यह ध्यान नहीं किया जा सकता। इसलिए विषय को खूब सोच–समझकर चुनना। किसी ने मुझे एसएमएस भेजा है आज, उसमें लिखा है कि जिंदगी की पहेली पैराडॉक्स है, जो हम चाहते हैं वह हमें कभी नहीं मिलता, जो हमें मिल जाता है उसको हम चाहते नहीं। जो मिल जाए उसका हम मजा नहीं लेते, जिसमें मजा आता है वह ज्यादा देर टिकता नहीं और जो ज्यादा देर टिक जाता है, और स्थाई है, वह बोरिंग और उबाऊ होता है। मन की इस प्रवृत्ति से सावधान रहना। एक विषय को चुनना फिर उसको बदलना नहीं। कम से कम एक माह तक उस पर ही प्रयोग करते रहना, करते रहना, करते रहना। उस एक के लिए सारे संसार को भुला देना और तब बहुत आसान होगा, प्रयोग का दूसरा हिस्सा करना। उस एक को भी भुला दो और अपने ऊपर वापस लौट आओ।

इस विधि को समझाते हुए परमगुरु ओशो कहते हैं, अच्छा हो किसी ऐसी चीज को चुनो जिसके प्रति तुम्हारा सहज लगाव हो और तब शेष संसार को भूल जाओ, उसकी उपस्थिति का मजा लो, स्वाद लो, आनंद लो। उस वस्तु में गहरे उतरो और उस वस्तु को अपने में गहरा उतरने दो। फिर विषय भाव को छोड़ दो, यह इस विधि का कठिन अंश है। तुमने पहले ही सब विषय छोड़ दिए, सिर्फ एक विषय तुम्हारे लिए रहा। सबको भूलकर इस एक को तुमने याद रखा, अब विषय भाव को छोड़ दो, उसे भी जाने दो। अब तो दो ही चीजें बचीं, एक विषय की उपस्थिति और शेष अन्य सभी चीजों की अनुपस्थिति, अब उस अनुपस्थिति को भी छोड़ दो। फिर शिव कहते हैं, आत्मोपलब्ध होओ। इस शून्य को, इस 'न–कुछ' को उपलब्ध होओ। यही तुम्हारा स्वभाव है, यही शुद्ध होना है। शून्य में सीधे पहुंचना बहुत कठिन होगा, श्रमसाध्य होगा, इसलिए किसी विषय के माध्यम से वहां जाना अच्छा होगा।

पहले किसी विषय को अपने मन में ले लो और उसे इस समग्रता से अनुभव करो कि किसी अन्य चीज को याद रखने की जरूरत न पड़े। तुम्हारी समस्त चेतना इस एक विषय से ही भर जाए और फिर इस एक चीज को भी छोड़ दो, इसे भी भूल जाओ। तब तुम किसी अगाध, अतल खाई में प्रविष्ट हो जाते हो जहां कुछ भी नहीं है, वहां केवल तुम्हारी आत्मा है, महाशून्य जैसी, आकाश जैसी शुद्ध और निष्कलुष। यह शुद्ध अस्तित्व, यह शुद्ध चैतन्य ही तुम्हारा स्वभाव है। तुम प्रकाश हो, तुम ज्योतिशिखा हो और सारा संसार तुम्हारा विषय है। तुम सारे संसार को छोड़ देते हो और एक विषय पर अपने को एकाग्र करते हो, तुम्हारी ज्योतिशिखा वहीं रहती है। लेकिन वह अब अनेक विषयों में स्थित नहीं है, केवल एक विषय पर स्थित है, फिर उस एक विषय को भी छोड़ दो अचानक, तब केवल प्रकाश बचता है, चेतना बचती है। तब वह प्रकाश किसी विषय को प्रकाशित नहीं कर रहा होता, इसी स्थिति को बुद्ध ने निर्वाण, महावीर ने कैवल्य, परम एकान्त कहा है। उपनिषदों ने इसी को आत्मज्ञान और ब्रम्हज्ञान कहा है। शिव कहते हैं, अगर तुम इस विधि को साध लो, तुम ब्रम्हज्ञान को उपलब्ध हो सकते हो। किसी शायर ने कहा है–

जिसका कोई भी नहीं उसका खुदा है यारों,
बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारों
मैं अंधेरे में रहूं या कि उजाले में रहूं,
ऐसा लगता है कि कोई देख रहा है यारों।

जब कोई भी विषय न बचा, जिसका कोई भी नहीं उसका खुदा है यारों। जब सारे विषयों से, दृश्यों से तुम मुक्त हुए, अचानक अपने भीतर बसे परमात्मा पर तुम्हारी नजर पड़ी। बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारों। एक ऐसा दीया, जिसकी रोशनी किसी और पर नहीं पड़ रही। बस दिया तले अंधेरा मिट गया। खुदा हमें ऐसी खुदाई न दे कि अपने सिवा कुछ दिखाई न दे, खुदा ऐसे एहसास का नाम है, खुद के भीतर रहे और दिखाई न दे। वह जो हमारे भीतर चैतन्यता है, वहीं है परमात्मा, लेकिन हमारी रोशनी हमेशा बाहर जा रही है, इंद्रियों के माध्यम से, किसी न किसी विषय पर पड़ रही है। ये पड़ना दो प्रकार का है, एक चंचलता, जहां विषय बारंबार बदलते हैं और एकाग्रता, जहां एक ही विषय पर देर तक रोशनी टिकती है। लेकिन चंचलता और एकाग्रता दोनो ही आध्यात्मिक नहीं हैं, वे बाहर के विषय से संबंधित हैं। आध्यात्म है स्वयं पर लौट कर आना। लेकिन एक से स्वयं पर लौट के आना बहुत आसान होगा, चंचल चित्त अपने पर वापस नहीं आ सकता। इसलिए एकाग्रता का, केन्द्रीभूत होने के लिए उपयोग किया जाता है, स्वयं पर वापस आने के लिए। एक बार अपने भीतर स्वयं का एहसास हो जाए, फिर लगता है–

आसमां दे रहा है सदाएं मुझे,
मुस्कुराती सी लगती फिजाएं मुझे,
गुद–गुदाने लगी हैं हवाएं मुझे,
अब तो रहमत सी दिखती हैं सजाएं मुझे।
जो कभी दूर लगता था वो पास है,
जिंदगी का हर एक पल बड़ा खास है
न कोई आरजू न कोई आस है,
मेरे दिल यह बता कैसा एहसास है।

एक अद्भुत, अनूठी अनुभूति में हम पहुंच जाते हैं, जहां कोई आरजू नहीं बचती, जहां कोई आशा नहीं बचती। याद रखना, तुम शायद सुनकर चकित होओगे कि आशा नहीं बचेगी। आशा दुख की अवस्था में होती है। जब हम पीड़ित होते हैं, संतापग्रस्त होते हैं, तब मन में आशा होती है कि इससे बेहतर कुछ हो। जब तुमने स्वयं को जान लिया, ब्रम्ह को जान लिया, परम आनंद से तुम ओत–प्रोत हो गए, फिर कैसी आशा? इससे बेहतर अब और कुछ हो नहीं सकता, तुमने मंजि पा ली, इसलिए कोई आशा नहीं बचेगी, इसका ये मतलब नहीं है

कि निराश हो जाओगे, तुम महाआनंद से भर जाओगे। सामान्यतः हम यही सोचते हैं कि जब आशा नहीं बचेगी तो हम निराश हो जाएंगे, नहीं। आध्यात्म में ठीक उल्टा होता है। जब परमानंद मिलता है, सब आशाएं, तृष्णाएं, कामनाएं, महत्वाकांक्षाएं समाप्त हो जाती हैं, जो पाने जैसा था वह पा लिया, जहां पहुंचने जैसा था वहां पहुंच गए, अब और कहां जाना। बस इतना ही ख्याल रखना इस विधि को करते हुए। इसको दो हिस्सो में बांट लेना।

पहला हिस्सा कम से कम एक महीने तक लगातार करना, एकाग्रता। समझो तुम्हें गुलाब पसंद है तो रोज गुलाब के फूल को लेकर बैठ जाना और उसपर एकाग्र करना। मंदिरों में मूर्तियों का भी यही उपयोग था। तुम्हें कृष्ण से प्रेम है, कृष्ण की मूर्ति पर एकाग्रता साधना। एक महीने तक पूरे संसार को भूल जाना, बस कृष्ण ही सामने रह जाएं या गुलाब का फूल ही सामने रह जाए। फिर आंख बंद कर लेना और विषयों की अनुपस्थिति को महसूस करना। और धीरे-धीरे इस अनुपस्थिति को भी जाने देना। तब क्या रह जाएगा, केवल तुम अपने शुद्धतम स्वरूप में। द्रष्टा रह जाएगा, दृश्य खो गए। यही है अध्यात्म की मंजिल। आओ इस प्रयोग को संक्षेप में करते हैं।

सभी मित्र खड़े हो जाएं, एक-एक फूल अपने हाथ में ले लें, उसे प्रेमभाव से सूंघे, हाथ में लेकर झूमें, प्रसन्न हों, प्रफुल्लित हों। सारी दुनिया को भूल जाएं, बस यह एक फूल ही तुम्हारी सारी चेतना को केन्द्रित कर दे। नाचें, गुनगुनाएं, रोमांचित हों। दूसरा चरण, अब बंद आंखों से फूल की मौजूदगी को महसूस करें। पूरे हृदय से, भाव से, प्रेम से। तीसरा चरण, फूल को छोड़ दें, अब फूल की अनुपस्थिति को महसूस करें, फील द ऐब्सेंस ऑफ द फ्लावर। एक फूल की खातिर सारे संसार को भुला दिया, अब स्वयं की खातिर फूल को भी भुला दें। आखिरी चरण, उपस्थिति और अनुपस्थिति दोनों का अतिक्रमण कर स्वयं के केन्द्र पर वापस लौट आएं। फील योर ओन प्रेजेंस। भगवान शिव कहते हैं, हे देवी! इस प्रकार आत्मोपलब्ध हो जाओ। कोई ऑब्जेक्ट नहीं जिस पर प्रकाश पड़ रहा हो। जिसका कोई भी नहीं उसका खुदा है यारों, बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारों। खाली मंदिर, शून्य मंदिर, बिना मूर्ति का मंदिर, केवल रोशनी, रोशनी, रोशनी। मैं अंधेरे में रहूं या उजाले में रहूं, ऐसा लगता है कोई देख रहा है यारों। वह जो तुम्हारे भीतर देखने वाला तत्व है, द्रष्टा है, साक्षी है, वही परमात्मा है।

धन्यवाद! ओशो शरणं गच्छामि!

OSHO
साधना पथ
ओशो

पक्ष–विपक्ष में न पड़ो–24

जब किसी व्यक्ति के पक्ष या विपक्ष में कोई भाव उठे तो उसे उस व्यक्ति पर मत आरोपित करो, बल्कि केंद्रित रहो।

किसी शायर ने लिखा है–
फिर सावन रुत का पवन चली, तुम याद आए
फिर पत्तों की पाजेब बजी, तुम याद आए।

फिर गूंजें बोली घास के हरे समंदर में
रुत आई पीले फूलों की, तुम याद आए।
दिन भर तो दुनिया के धंधों में खोया रहा
जब दीवारों से धूप ढली, तुम याद आए।
फिर सावन रुत का पवन चली, तुम याद आए।
फिर पत्तों की पाजेब बजी, तुम याद आए।

जब किसी से तुम्हारा लगाव हो, प्रेम हो, फिर उसी कि याद आती है। बाकी सब बहाने हैं। सावन की ऋतु या पत्तों की पाजेब, सब बहाने हैं। असली बात है कि तुम्हें याद आ रही है, चाहे वे फूल पीले हों कि लाल उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। तुम कह रहे हो, जब दीवारों से धूप ढली। यह शायर जिसके प्रेम में है, चाहे धूप ढले, चाहे चांदनी निकले, याद तो उसी की आएगी। लेकिन हम प्रक्षेपित करते हैं, हम समझते हैं कि दूसरा व्यक्ति कारण है, जबकि भावना का स्रोत हम सदा खुद ही होते हैं। चाहे प्रेम हो, चाहे क्रोध, चाहे कोई सकारात्मक भाव हो, या नकारात्मक, दानों में ही भावना के केन्द्र सदा हम ही होते हैं। लेकिन हम यह प्रोजेक्ट करते हैं कि दूसरे व्यक्ति के कारण यह भाव उत्पन्न हो रहा है। बहाने को हम कारण बताते हैं। जब तुम किसी पर नाराज होते हो या किसी के प्रति घृणा से भरते हो तो तुम महसूस करते हो कि उस व्यक्ति ने ऐसा-ऐसा कर्म किया, उसने ऐसा-ऐसा कहा, इसलिए मुझे नाराजगी हुई। लेकिन सच्चाई यह है कि तुम नाराज होने के लिए तैयार ही थे। तुम भीतर-भीतर खौल रहे थे, तुम्हारा विस्फोट होने ही वाला था। यह बहाना नहीं तो कोई और बहाना मिलता।

कभी एक छोटा सा प्रयोग करके देखो, एक कमरे में हफ्ते भर के लिए बिल्कुल बंद हो जाओ। ऐसा इंतजाम कर लो कि कोई तुम्हारा भोजन वहीं दे जाए, उसकी भी शकल न देखनी पड़े, दरवाजे के नीचे से खिसका दे। न किसी से मिलो, न किसी से बोलो, न टीवी देखो, न अखबार पढ़ो और एक डायरी में लिखते चलो तुम्हारे मन में क्या-क्या चल रहा है। तो तुम बहुत आश्चर्य चकित होओगे, संसार में, लोगों के बीच में रहते हुए जो-जो चल रहा था, सबकुछ वही चलता रहेगा। इस हफ्ते भर में कई बार तुम प्रेम से भर जाओगे, कई बार तुम क्रोध से भर जाओगे, कई बार नफरत से, कई बार मोहब्बत से, कभी तुम्हारे भीतर दया होगी, कभी तुम्हारे भीतर कठोरता होगी, कभी करुणा आएगी, कभी बेचैनी होगी, कभी शांति होगी। यद्यपि कारण वहां कोई भी नहीं है, तुम अकेले ही हो। तो सबसे पहले तो इस बात को समझो कि कारण सदा तुम्हारे भीतर मौजूद है भावनाओं का, दूसरा तो केवल बहाना है।

आज की विधि में शिव पार्वती से कहते हैं कि जब किसी व्यक्ति के पक्ष या विपक्ष में कोई भाव उठे तो उसे उस व्यक्ति पर आरोपित मत करो, बल्कि स्वयं में केन्द्रित रहो। केन्द्रीभूत होने की अद्भुत है यह विधि। इसको समझाते हुए सुनो ओशो क्या कहते हैं- एक सूखे कुएं में बाल्टी डालो तो हाथ कुछ भी नहीं लगेगा, पानी वाले कुएं में बाल्टी डालो तो वह पानी से भरकर बाहर आती है। लेकिन पानी कुएं में है, याद रखना, कुआं उसका स्रोत है। बाल्टी तो केवल पानी को बाहर लाने का निमित्त मात्र है। जो आदमी तुम्हें अपमानित करता है, वह बाल्टी का काम करता, वह तुम्हारे भीतर से क्रोध, घृणा या किसी भी आग को बाहर ले

आता है। तो स्मरण रहे उसके स्रोत तुम हो। इस विधि के लिए विशेष रूप से इस बात को ध्यान में रखो कि दूसरों पर तुम जो भी भाव प्रक्षेपित करते हो, उसका स्रोत सदा तुम्हारे भीतर है। इसलिए जब भी कोई भाव पक्ष या विपक्ष में उठे तो तुरंत अपने भीतर प्रवेश करो और उस स्रोत के निकट पहुंचो जहां से यह भाव उठ रहा है। स्रोत पर केन्द्रित रहो, विषय की चिंता भी छोड़ दो।

किसी ने तुम्हारे क्रोध को जगाने का मौका दिया उसके लिए उसे तुरंत धन्यवाद दो और उसे भूल जाओ। फिर आंखे बंद कर लो और अपने भीतर सरको और उस स्रोत पर ध्यान दो, जहां से यह क्रोध का भाव अथवा प्रेम का भाव उठ रहा है। भीतर गति करने पर तुम्हें यह स्रोत मिल जाएगा, क्योंकि वे भाव उसी स्रोत से आ रहे हैं। घृणा हो या प्रेम सब तुम्हारे भीतर से आता है। उस स्रोत के पास उस समय पहुंचना आसान है जब तुम क्रोध, घृणा, प्रेम को सक्रिय रूप से अनुभव कर रहे हो। इस क्षण में भीतर प्रवेश करना बड़ा आसान है। जब तार गर्म है तो उसे पकड़कर भीतर जाना बहुत सरल है और भीतर जाकर तब तुम एक शीतल बिंदु पर पहुंचोगे तो अचानक एक भिन्न आयाम, एक दूसरा ही संसार तुम्हारे सामने खुलने लगता है। इसलिए क्रोध, घृणा या प्रेम, जो भी भाव हो, उसका उपयोग अंतर्यात्रा के लिए करो। हम सदा दूसरों की तरफ गति करने में इन भावों का प्रयोग करते हैं और जब अपने भाव आरोपित करने के लिए हमें कोई नहीं मिलता तो हमें बड़ी निराशा हाथ लगती है, तब हम अपने भावों को निर्जीव वस्तुओं पर भी आरोपित करने लगते हैं। कई बार मैं देखता हूं लोगों को, दरवाजा ऐसे खोलते हैं झटके के साथ जैसे दरवाजे से कोई नाराजगी हो, पैर से धक्का मार कर, लात मारकर दरवाजा खोलते हैं। नाराजगी किसी और पर है, ऑफिस में बॉस ने डांट दिया, अब बॉस को तो लात नहीं मार सकते, दरवाजे के ऊपर क्रोध निकाल रहे हैं। निर्जीव वस्तुओं पर भी लोग अपना क्रोध निकालते रहते हैं। ख्याल करो, अपने भीतर कारण को ढूढ़ो, हम हमेशा दूसरों के ऊपर प्रोजेक्ट कर देते हैं।

मैने सुना है, चंदूलाल पूछ रहा था कि ऐसा कौन सा महान कार्य है जिसकी शुरुआत माँ करती है तथा पत्नी उसे आगे जारी रखती है। नसरुद्दीन ने कहा, अरे नादान इतना भी नहीं जानता, माँ रोते, बिलखते इंसान को जन्म देती है, दुनिया में लाती है, फिर पत्नी उसे जिंदगी भर रुलाती, तड़फाती है। नहीं, न माँ जिम्मेवार है, न पत्नी जिम्मेवार है, रोना, तड़पना तुम्हारे भीतर से आ रहा है। हम अपनी भावनाओं को दूसरे पर आरोपित करते हैं। क्रोध भीतर है, किसी न किसी पर निकलना है। पति हुए कि पड़ोसी हुए, क्या फर्क पड़ता है, क्रोध को तो व्यक्त होना ही था। मैने सुना है, मंदिर में एक लड़के को सिगरेट पीते हुए देखकर चंदूलाल ने कहा कि मुझे बहुत गुस्सा आया, इतना गुस्सा आया उसे सिगरेट पीते देखकर

मंदिर के अंदर। क्रोध में मेरे हाथ कांपने लगे और मेरे हाथों से दारू का गिलास छूटकर चकनाचूर हो गया। अपना दारू का गिलास दिखाई नहीं देता मंदिर में, दूसरे की सिगरेट नजर आती है। सुहागरात में जब चंद्रमा बहुत सुंदर दिखाई देता है, याद रखना वह सौंदर्य चंद्रमा में नहीं है। आज किसी के घर में किसी का देहान्त हो गया है, उसे यही चंद्रमा बड़ा उदास और रोता हुआ जान पड़ेगा। चंद्रमा खुश या उदास नहीं होता, ये हमारी ही भावनाएं हैं जिसे हम उस पर आरोपित कर रहे हैं। अगर कुएं में पानी नहीं होगा तो बाल्टी कैसे पानी निकालेगी।

गौतम बुद्ध को कोई गाली दे जाता है, उन्हें तो क्रोध नहीं आता, क्योंकि उनके भीतर अब केवल करुणा ही है। कोई गाली दे या प्रशंसा करे, बुद्ध के भीतर से केवल करुणा ही बाहर आ सकती है। एक और अद्भुत फकीर हुआ जापान में, लिंची उसका नाम था। सड़क से जा रहा था, उसका कोई विरोधी पीछे से आया और डंडे से उसके कंधे पर चोट की, चोट करने में डंडा टूट गया, गिर गया, वो विरोधी डंडा मार के भाग गया। लिंची ने चुपचाप वो टूटा हुआ डंडा उठाया और सड़क के किनारे एक दुकान थी, उस दुकानदार के पास जाकर वो डंडा रखा और कहा कि भाई साहब, अगर वह आदमी वापस आए तो उसको ये डंडा लौटा देना। दुकानदार ने पूरा दृश्य देखा था, उसने कहा कि हद हो गई, आपको कोई क्रोध नहीं आ रहा, आपके भीतर कोई घृणा का भाव नहीं आती। लिंची ने कहा कि एक बार मैं एक सड़क से गुजर रहा था, तूफ़ान आ रहा था उस समय, तेज हवाएं चल रहीं थीं और पेड़ से एक शाखा टूटकर मेरे कंधे पर गिरी, मेरे कंधे पर चोट लगी। मैंने क्या किया, उस शाखा को उठाकर सड़क के किनारे रख दिया। पेड़ को पता नहीं था, हवाओं को पता नहीं था कि मैं वहां से गुजर रहा हूं, पेड़ ने जानबूझकर तो मेरे ऊपर शाखा को नहीं गिराया था। ठीक इसी प्रकार उस व्यक्ति ने मुझे इसलिए डंडा मारा, क्योंकि उसके भीतर से क्रोध उमड़ रहा था। यह सांयोगिक बात है कि मैं इसके सामने पड़ गया। तो जैसा व्यवहार मैंने उस पेड़ की शाखा के साथ किया था, ठीक वैसा ही व्यवहार मैंने इस डंडे के साथ और उस आदमी के साथ कर रहा हूं। मेरे भीतर अब क्रोध नहीं है, लिंची ने कहा। अगर यह बात अपने भीतर गहरे उतार सको तब आज की विधि बहुत अद्भुत है।

अभी हम एक छोटा सा प्रयोग करेंगे पांच मिनट का। लेकिन इसे अपनी पूरी जिंदगी में लागू करना, जब भी किसी के पक्ष में या विपक्ष में कोई भाव उठे, उस व्यक्ति पर आरोपित मत करना, स्वयं में केन्द्रित रहना। तो आज की विधि इस प्रकार करेंगे कि सभी मित्र खड़े हो जाएं, जोड़ी से। दो–दो मित्र आमने–सामने मुंह करके खड़े हो जाएं। अब अपने मित्र के प्रति प्रेमपूर्ण हों, मुस्कुराएं, आपकी आंखो से प्रेम छलके, हाथ मिलाएं, गले लगें, हाथ मिलाएं, हाथ

में हाथ डालकर प्रसन्न होकर झूमें, गुनगुनाएं, अपने प्रेम को अभिव्यक्त होने दें। स्टॉप! हाथ छोड़ दें, आंख बंद कर लें, बिल्कुल सीधे खड़े हो जाएं। अपने ऊपर ध्यान, यह प्रेम का भाव कहां से उत्पन्न हो रहा था, अपनी अंतरात्मा में स्थित हो जाएं।

फिर से आंख खोलें, अब एक निगेटिव इमोशन का प्रयोग करते हैं। क्रोध से भर जाएं, सामने वाले को मुट्ठियां भींचकर घूंसे दिखाएं, लड़ने को तत्पर हो जाएं, कोई किसी को स्पर्श नहीं करेगा, दूर से ही क्रोधित हों। जबड़ों को कस लें, दांतों को भींचें, शरीर की सारी मांसपेशियों को अकड़ जाने दें, पूरे तनाव और घृणा से भर जाएं, जैसे कि लड़ने–मरने को तैयार हो रहे हों। क्रोध का अभिनय करते–करते भीतर हृदय में वास्तव में क्रोध आने लगा। आधा मिनट और जारी रखें, पूरे जोर–शोर से चीखें–चिल्लाएं। कल्पना करें सामने वाला व्यक्ति आपका बड़े से बड़ा दुश्मन है, जब सचमुच में किसी से दुश्मनी लेते हैं तब भी वह आपकी कल्पना ही होती है। न कोई दोस्त है, न कोई दुश्मन है, आपकी कल्पना का ही खेल है। स्टॉप! ...बिल्कुल शिथिल, सीधे खड़े हो जाएं, आंख बंद। भीतर देखें यह क्रोध कहां से आ रहा था। स्वयं पर ध्यान, भूल जाएं दुश्मन को। सारा ध्यान स्वयं पर, रिटर्निंग टू दि सोर्स, मूल उद्‌गम पर वापसी।

अंतिम चरण– शिथिलीकरण, ...विश्रामपूर्वक लेट जाएं। न पक्ष में, न विपक्ष में, न प्रेम में, न क्रोध में, पॉजिटिव और निगेटिव दोनों भावनाओं के पार, स्वयं के होने में डूबें। ... शरीर शिथिल हो रहा है, श्वांस धीमी हो रही, मन शांत हो गया, प्रेम और क्रोध दोनों भावनाएं विदा हो गईं। अपने अंतर्तम में डूबें। अद्भुत है यह विधि। कहते हैं भगवान शिव, जब किसी व्यक्ति के पक्ष या विपक्ष में कोई भाव उठे, उस व्यक्ति को भूलकर अपने केन्द्र में स्थिर हो जाओ। आत्मरमण, जैसे सिनेमाहॉल में, टॉकीज में सामने पर्दे पर फिल्म दिखाई पड़ती है। किन्तु, वह फिल्म चल रही पीछे प्रोजेक्टर में, ठीक ऐसे ही यह संसार एक पर्दा है। फिल्म हमारे भीतर चल रही है, प्रोजेक्टर हमारे भीतर है। फिल्म को भूल जाएं, पर्दे का ख्याल छोड़ें, अपने भीतर लौटें। जब तक भाव हो इस आनंद की अवस्था में लेटे रहें।

धन्यवाद! ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!

अनायास रुक जाओ–25

जैसे ही कुछ करने की वृत्ति हो, रुक जाओ।

जीवन के दो तल हैं, करना और होना, डूइंग ऐन्ड बीइंग। करना ऊपर–ऊपर है, होना भीतर है। जैसे किसी वृक्ष की शाखाएं, पत्ते, फूल, फल इत्यादि जमीन के ऊपर हैं, और उसकी जड़ें उसके भीतर हैं। ठीक ऐसे ही मनुष्य के व्यक्तित्व में उसका स्वभाव उसके भीतर मौजूद है, उसकी मूल प्रकृति वह है। ऊपर–ऊपर उसके विचार हैं, भाव हैं, शारीरिक कर्म और क्रियाएं हैं। यदि हम केवल कर्मों, क्रियाओं और विचारों में ही खोए रहे तो धर्म की उपलब्धि संभव नहीं है। धर्म है जड़ की खोज, आधारभूत की खोज। याद रखना, करने में चुनाव संभव है, होने में कोई चुनाव संभव नहीं है। तुम चाहो तो साधु हो सकते हो, तुम चाहो तो चोर हो सकते हो। चोर परिवर्तित होकर साधु हो सकता है, साधु परिवर्तित होकर चोर हो सकता है। लेकिन जहां तक होने का संबंध है, होने में कोई चुनाव नहीं है। बाल्या भील वाल्मीकि ऋषि बन जाता है, योगी भ्रष्ट होकर पुनः अपराधी बन सकते हैं।

करने में परिवर्तन हो सकता है, होने में कोई परिवर्तन, कोई बदलाहट संभव नहीं है। अस्तित्व चुना नहीं जा सकता, कर्म चुने जा सकते हैं। इसको ऐसा समझो कि केंद्र बिल्कुल

स्थिर है, चुनाव के बाहर, परिधि पर परिवर्तन संभव है। चुनने वाला बस है, उसके संबंध कुछ किया नहीं जा सकता। वहीं अमृत का, आनंद का द्वार है। वहीं चैतन्य परमात्मा है। आगे हम जिन पांच अचानक रुकने वाली विधियों को प्रयोग करने जा रहे हैं, वे परिधि से केंद्र की तरफ, शाखाओं से फूल की तरफ, करने से होने की तरफ जाने के उपाय हैं। हम कर्मों में इतने व्यस्त रहते हैं, एक क्रिया से दूसरी क्रिया, दूसरी क्रिया से तीसरी क्रिया, हम क्रियाओं में परिवर्तन करते रहते हैं, लेकिन कभी भी क्रिया से निष्क्रियता में नहीं जाते हैं। अगर कभी जाते भी हैं तो बेहोश होकर जाते हैं। आदमी अगर आठ घण्टे सोता है तो करीब–करीब 75 प्रतिशत समय तो वह स्वप्न देखता है, छः घण्टे, बामुश्किल दो घण्टे, एक चौथाई समय गहन सुषुप्ति का होता है, जिसमें स्वप्न बंद हो जाते हैं और व्यक्ति अपने केन्द्र में स्थित हो जाता है। लेकिन तब वह मूर्च्छित और बेहोश होता है। उसे मालूम नहीं होता कि वह कहां है? वह अपने केन्द्र में अपनी जड़ों में समा गया। काश! होशपूर्वक हम वहां पहुंच जाएं, तो उसी का नाम ध्यान है, समाधि है।

महर्षि पतंजलि कहते हैं– समाधि और सुषुप्ति एक समान है, बस एक अंतर है, सुषुप्ति में हम बेहोश उस जगह पहुंचते हैं जहां समाधि में हम होशपूर्वक पहुंच जाते हैं। ये विधियां जो हम करने जा रहे हैं, अचानक रुकने की हैं। भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, 25वीं विधि में, जैसे ही कुछ करने की वृत्ति हो रुक जाओ। याद रखना, तुम्हारी वह वृत्ति प्रामाणिक होना चाहिए। समझो, तुम्हें प्यास लगी और तुम पानी पीने जा ही रहे थे, ग्लास हाथ में उठा ही लिया था और अचानक याद आया और रुक गए, कुछ सेकेण्ड के लिए थम गए। श्वास भी रोक ली, आंख भी बंद कर ली, सारी क्रियाएं ठहर गईं। इस अचानक ठहरने में क्या होगा? शरीर का एक मोमेण्टम था, एक संवेग था, वह कुछ करने जा रहा था, इस अचानक रुकने में एक अंतराल, एक गैप पैदा हो गया। तुम्हारी चेतना भिन्न हो गई, शरीर से और मन से, करने वाला अलग हो गया, जो है, पृथक होने में वह अलग महसूस होने लगा। लेकिन सामान्यतः जिंदगी में हम इतने व्यस्त होते हैं, लगातार क्रियाओं में संलग्न होते हैं, थके–मांदे सो जाते हैं, सुबह से उठकर फिर भागदौड़ शुरू कर देते हैं। भीतर की निष्क्रिय जागरूकता का एहसास ही नहीं हो पाता।

आज के अखबार में एक ताजा खबर पढ़ रहा था, प्रकाण्ड पंडितों व दार्शनिकों के शहर काशी में दो सीटों वाला एक छोटा विमान दुर्घटनाग्रस्त होकर कब्रिस्तान में गिरा। स्थानीय कार्य सेवकों की जनसेवा ने अब तक 425 शव प्राप्त कर लिए हैं और बाकी की तलाश के लिए अभी भी खुदाई में 25 विद्वान उत्साहपूर्वक जुटे हुए हैं। अद्भुत है हमारी क्रियाशीलता। दो सीटर विमान गिरा, सवा चार सौ लाशें निकाल चुके हैं। जिंदगी भर हम कर ही क्या रहे हैं

और उससे मिला भी क्या, सिवाय मुर्दा लाशें उखाड़ने के। कभी रुक कर भी देखो, अचानक क्रिया के बीच में ठहर जाओ और तुम परम आनंद में प्रवेश कर जाओगे। रूस के संत जॉर्ज गुरजिएफ पिछली सदी में 'स्टॉप एक्सरसाईज' की खोज की, बड़े ही अद्भुत नृत्य उन्होंने विकसित किए। उनके शिष्य नाच रहे होते हैं और गुरुजी अचानक कहते स्टॉप और सब थम जाता, पत्थर की मूर्ति के जैसे हो जाते। अगर एक पैर उठा था तो उठा ही रह जाता। फिर चाहे गिर जाओ तो गिर जाओ, मगर पैर को मत हिलाना। अगर गिर गए तो जैसे गिर गए वैसे ही गिरे रहना, मगर शरीर को फिर से ऐडजस्ट मत करना। बौद्धों ने भी विज्ञान भैरव तंत्र से शिव के इस सूत्र से बहुत सी विधियां निकालीं। कई प्रकार से इसके उपयोग संभव हैं। मुख्य बात है अंतराल, एक गैप पैदा हो जाए।

इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, जब तुम सक्रिय होते हो, नाचते हो, गतिमान होते हो और अचानक बीच में रुक जाते हो तब एक गैप उत्पन्न होता है। समस्त क्रियाएं अचानक बंद हो जातीं हैं, इससे तुम दो भागों में बंट जाते हो। तुम्हारे शरीर से अलग, तुम हो जाते हो। अभी तुम और तुम्हारा शरीर दोनों गतिमान हैं, अचानक रुक जाओ, शरीर तब भी गति करना चाहेगा, उसका मोमेंटम है, तुम नाच रहे थे, उसका एक संवेग है। शरीर इस आकस्मिक ठहराव के लिए तैयार नहीं था। तुम्हें अचानक लगता है कि शरीर अभी भी कुछ करना चाहता है, लेकिन तुम रुक गए, इससे एक अंतराल पैदा हुआ। तुम्हें लगता है तुम और तुम्हारा शरीर दोनों दूर-दूर हैं, बहुत दूर हैं। शरीर में क्रियाओं का संवेग भरा हुआ है किन्तु तुम ठहर गए और तुम शरीर के साथ तादात्म्य को तोड़ सकोगे। शरीर के साथ सहयोग मत करना, बस उससे पृथक अपने आप को महसूस करना। यह जो अचानक मृतवत हो जाना है, मूर्तिवत हो जाना है, यहीं अंतराल पैदा करता है। रुकना तो शरीर के तल पर होता है, लेकिन रुकने वाला केंद्र है। परिधि और केन्द्र अलग-अलग महसूस होते हैं। एकाएक रुकने की घटना में तुम पहली बार स्वयं को अनुभव करोगे, पहली बार अपने केन्द्र को जानोगे।

मैं पढ़ रहा था एक चुटकुला, मुल्ला नसरुद्दीन और उसकी पत्नी की शादी की 25वीं सालगिरह है, पत्नी ने पूछा कि इस 'सिल्वर जुबली' को यादगार बनाने के लिए आज हमें कौन सा विशेष कार्य करना चाहिए? मुल्ला नसरुद्दीन ने कहा हे देवी! हमें बोलना बंद करके आज पांच मिनट मौन धारण करना चाहिए।

शराबी विचित्तर सिंह ने बीच सड़क पर स्कूटर रोककर टिफिन बॉक्स खोलकर देखा, यह जानने के लिए कि मैं घर जा रहा हूं या ऑफिस। अगर टिफिन बॉक्स भरा है तो ऑफिस जा रहा हूं, खाली है तो घर लौट रहा हूं। लेकिन हम कभी रुककर नहीं देखते। कभी हम 25 साल की जिंदगी में भी पांच मिनट चुप नहीं होते। कभी चुप होना, कभी रुकना भी सीखो।

हम कर्मों में ही खोए रहते हैं। एक कर्म से दूसरे कर्म में छलांग भरते रहते हैं। यह सतत सक्रियता हमारे पागलपन का कारण है। अगर आत्मस्थित होना है, भीतर की चैतन्यता को जानना है, तो यह सडेन स्टॉप एक्सरसाईज बहुत ही महत्त्वपूर्ण हो सकती है।

एक बार ओशो कार से यात्रा कर रहे थे, साथ में तीन लोग और थे। कार दुर्घटनाग्रस्त हो गई, कार एक पुलिया से नीचे सूखी हुई नदी में जा गिरी, पलट गई कार। वे तीनों लोग आकस्मिक घटना से चूक गए। कभी–कभी खतरों में, कभी–कभी दुर्घटनाओं में भी आकस्मिक रूप से अपने केंद्र में स्थित हुआ जा सकता है, कई लोग इस अवसर को खो देते हैं। ओशो ने कहा कि वे तीनों लोग चूक गए। अगर आसन्न मृत्यु का बोध भी हो, तुम कार ड्राइव कर रहे हो, अचानक ऐसा क्षण आ गया कि दुर्घटना होने वाली है, अचानक गहन जागरूकता घेर लेती है और तुम परिधि से केंद्र पर फेंक दिए जाते हो। कभी छोटा सा प्रयोग करो, छींक आने को है और रुक जाओ, थम जाओ। छींक रोकने के लिए तुम्हें कुछ नहीं करना, तुम बस अपने आत्मस्थित हो जाओ, तुम पाओगे छींक आते–आते रुक गई। न केवल रुक गई उसके साथ–साथ अंतर्यात्रा हो गई, भीतर गति हो गई।

छोटी–छोटी चीजों को ध्यान की विधि बनाया जा सकता है, किसी भी भांति इस विधि को करो। कभी जोर से नींद आ रही हो, बिस्तर पर लेटने जा ही रहे हो कि अचानक रुक जाओ और तुम पाओगे तुम अपने केन्द्र में स्थित हो गए। वह चेतना जो सदा गति कर रही थी, ए से बी, बी से सी, सी से डी की तरफ, बीच में रुकते ही अपने आप में स्थिर हो जाती है, एक नया आयाम, एक अंतर्आयाम खुलता है। तुम अपनी भावनाओं को भी इस विधि के द्वारा बदल सकते हो। समझो, किसी से तुम्हारा झगड़ा हो गया और तुम्हें बहुत गुस्सा आ गया, मारने–पीटने जा ही रहे थे कि अचानक रुक जाओ। अपने छोटे बच्चे को उठाकर उसे चुंबन करने लगो, उसके सिर पर हाथ फेरो, उसे प्रेम करने लगो तो तुम पाओगे पांच मिनट में ही वह शक्ति जो क्रोध में व्यक्त होने जा रही थी अचानक वह भीतर मुड़ गई और प्रेम में रूपान्तरित हो गई। तुम अपने आत्मरूपान्तरण से गुजर सकते हो, तुम अपने मन के विचारों को, हृदय की भावनाओं को इन विधियों से रूपान्तरित कर सकते हो। ऊर्जा परिवर्तित हो जाती है, ऊर्जा की दिशा बदल जाती है।

याद रखना जीवन शक्ति वही है, जो क्रोध में व्यक्त हो रही थी, वही प्रेम में व्यक्त होती है। तुम उसकी दिशा बदल सकते हो। जैसे किसी नदी में बांध बनाकर और नहर खोदकर पानी की दिशा बदली जा सकती है, पानी वही है। तुम क्रोध से परेशान हो। काश, तुम कला सीख जाओ कि कैसे क्रोध को प्रेम में और करुणा में बहाया जा सके। इस विधि का महत्त्वपूर्ण बिंदु यही है। वह जो तुम्हारी वृत्ति है, वह प्रामाणिक होनी चाहिए। दूसरा, आकस्मिक

रुकना, यह अचानक ही होना चाहिए। इसका अभ्यास मत करो। तीसरा, उस समय सांस भी ठहर जाए। और चौथा, ठहर कर कोई विचार नहीं करना है, केवल प्रतीक्षा भाव में रहना है, इंतजार करो और पांचवां तुम्हारे भीतर कोई अपेक्षा न हो।

तो आज मैं तुम्हें पहले से बताऊंगा नहीं कि मैं कौन–सी विधि करवाने जा रहा हूं। जैसे ही मैं निर्देश दूं, बस तुरंत उसका पालन करना। तो सब लोग तैयार हो जाएं। सजग और चौकन्ने, आपके कान मेरी तरफ लगे हों। जैसे ही मैं कुछ कहूँ, वैसा ही करना शुरू कर देना। जैसे ही मैं कहूं रुको, बस अचानक रुक जाना। जहां हो, बीच में वहीं, फिर न तुम्हारा हाथ हिले, न सांस चले, न आंख की पलकें हिलें। बिल्कुल पत्थर की मूर्ति के जैसे हो जाना। तो तैयार। ठीक, अपनी जगह से धीरे–धीरे उठो...... रुको। चलना शुरू करो...... रुको। बैठो. ..... रुको। अकारण हंसो...... रुको। खड़े होकर नाचो...... रुको। जॉगिंग शुरू करो...... रुको। लेट जाओ...... रुको। ठीक, अब लेट ही जाओ, शिथिल हो जाओ। आत्मस्थित, पत्तों से जड़ों पर आ गए, परिधि से केन्द्र पर आ गए। करने से होने पर आ गए।

ओम् नमः शिवाय! ओम् नमः शिवाय!!ओम् नमः शिवाय!!!

कामना को छोड़ दो–26

जब कोई कामना उठे, उस पर विमर्श करो। फिर, अचानक छोड़ दो।

किसी शायर ने लिखा है–

मरीजे मुहब्बत उन्हीं का फसाना सुनाता रहा दम निकलते–निकलते।
मगर जिक्रे शामे आलम जब भी आया
चरागे सहर बुझ गया जलते–जलते।
इरादा था तर्के मुहब्बत का लेकिन फरेबे तबस्सुम में फिर आ गए हम।
अभी खाके ठोकर संभलने न पाए कि फिर खाई ठोकर संभलते संभलते।
उन्हें खत में लिखा कि दिल मुजतरिब है, जवाब उनका आया मुहब्बत न करते।
तुम्हें दिल लगाने को किसने कहा था, बहल जाएगा दिल बहलते बहलते।
अरे कोई वादाखिलाफी की हद है हिसाब अपने दिल में लगाकर तो देखो
कयामत का दिन आ गया रफ्ता रफ्ता मुलाकात का दिन बदलते बदलते।
वो मेहमां हमारे हुए भी तो कब तक हुई शम्मां गुल और न डूबे सितारे।

कमर किस कदर उनको जल्दी थी घर की,
 वो घर चल दिए चांदनी ढलते–ढलते।

मनुष्य का जीवन कामनाओं से ग्रस्त है। कोई चाहत, कोई वासना, ऐसा हो जाए, वैसा हो जाए, मरते दम तक, आखिरी क्षण तक, कामनाएं ही कामनाएं चित्त में डोलती रहती हैं। हमारी पूरी जिंदगी वासनाओं की कहानी है। मृत्यु के क्षण में यही वासनाएं फिर घनीभूत हो जाती हैं और अगले जनम का बीज बन जाती हैं। कयामत का दिन आ गया रफ्ता–रफ्ता, मुलाकात का दिन बदलते–बदलते। वो मुलाकात की चाहत जाती ही नहीं। आज के इस सूत्र में भगवान शिव इस कामना से मुक्ति का उपाय बता रहे हैं। याद रखना तीन बातें– भीतर भाव के तल पर कामना होती है, उसके बाद विचार होते हैं और फिर सबसे बाहर शरीर के तल पर कर्म होते हैं। कामना का बाहरी रूप है कर्म और कर्म का सबसे आंतरिक रूप है कामना, दोनों के मध्य में है विचार। विचार यानि योजना।

हृदय में कोई कामना उठी, कोई तमन्ना पैदा हुई, मन ने उसके लिए योजना बनानी शुरू की कि इसको कैसे पूरा किया जाए और फिर शरीर क्रिया में संलग्न हुआ। इस प्रकार कर्मों का जगत शुरू हुआ, उस इच्छा को पूरा करने के लिए। अंतस में है कामना, बाहर है कर्म, बीच में है विचार। विचार केवल योजना है, हवाई बात है बिल्कुल। बहुत से धर्म, विचार के द्रष्टा बनने के लिए कहते हैं और हजारों–हजारों साधक इस कोशिश में बहुत परेशान होते हैं। विज्ञान भैरव तंत्र में भगवान शिव ने विचार की बात ही छोड़ दी। 25वीं विधि में शिव ने कहा, कोई भी कृत्य करने के पहले अचानक रुक जाओ। उसमें कर्म से हमें सचेत कराया, निष्कर्म चेतना में स्थित किया। आज 26वीं विधि उससे भी ज्यादा सूक्ष्म है। भगवान शिव कहते हैं, जब कोई कामना उठे, उस पर विमर्श करो, फिर अचानक छोड़ दो। अभी ऐक्शन शुरू नहीं हुआ, सिर्फ कामना ही उठी है। उसका पूरा–पूरा विमर्श करो। विमर्श का अर्थ विचार नहीं होता, विमर्श का अर्थ होता है, तथ्य को देखना। इस कामना का साक्षात् करो, उसके आमने–सामने हो जाओ।

ख्याल रखना, शत्रुता मत साधना, शत्रु के तुम आमने–सामने कभी नहीं होना चाहते, दुश्मन से हम नजर बचाकर निकल जाते हैं। जिसके प्रति हम इंडिफरेंट हैं या शत्रुभाव से भरे हैं, उसका साक्षात् हम कभी भी नहीं कर पाएंगे। जब कामना उठे, उसका विमर्श करो, अर्थात् उसे पूरी तरह से भर आंख देखो। न पक्ष में, न विपक्ष में, कोई निर्णय मत लेना। सिर्फ उसे देखना, उसे जानना, उसे घटित होने देना। अपने पूरे अस्तित्व को उससे उद्वेलित होता हुआ जानना और तब बहुत आसान होगा, अचानक उसे छोड़ना। विमर्श के पश्चात् छोड़ना आसान है। बिना साक्षात् किए, बिना विमर्श किए छोड़ना आसान नहीं। आप न तो अपने मित्रों से

अपना पिंड छुड़ा सकते हैं और न अपने शत्रुओं से। यदि आप कामना के पक्ष में हुए तो आप भोगी बन जाएंगे, यदि आप कामना के विपक्ष में हुए तो आप त्यागी बन जाएंगे, यानी संसारी या संन्यासी। और दोनों ही हालत में कामना से मुक्ति संभव न होगी। भगवान शिव एक तीसरा ही मार्ग बता रहे हैं, वे कह रहे हैं कामना के प्रति न मैत्रीभाव, न शत्रुभाव, सजग होकर उसका साक्षात्, यह अर्थ है विमर्श का। और तब बहुत आसान होता है किसी चीज को छोड़ देना।

मैंने सुना है मुल्ला नसरुद्दीन के जीवन की एक घटना। गांव में चिकित्सक का काम करता था। एक आदमी आया और उससे कहा कि मुल्लाजी, मैं सौ साल से ऊपर जीना चाहता हूं, मुझे कुछ नुस्खा बताइए। मुल्ला ने कहा, बहुत आसान है, सबसे पहली चीज शराब पीना छोड़ दो, सिगरेट पीना छोड़ दो, स्त्रियों के पीछे चक्कर लगाना छोड़ दो, सारी बुरी आदतें खतम करो। जुआघर आप जाते हो, वहां जाना बंद करो, सिनेमा और क्लब घरों में जाना बंद करो, पार्टियों में आना–जाना बंद करो, टीवी देखना बंद, अखबार पढ़ना बंद, पत्र–पत्रिकाएं बंद, स्वादिष्ट भोजन न करो, पसंद की कोई चीज न खाओ, विशेषकर नमक, घी, शक्कर इनका तो पूर्ण त्याग कर दो। उस आदमी ने कहा ये सब कर दूंगा, क्या मैं सौ साल से ज्यादा जी पाऊंगा? मुल्ला ने कहा, जी तो नहीं पाओगे मगर तुम्हें ऐसा लगेगा हजारों साल हो गया जीते–जीते। और मुल्ला ने कहा इससे भी बड़ी बात तुम्हारी लंबे जीने की कामना भी समाप्त हो जाएगी।

एक घटना और सुनिए, मुल्ला के पास एक बहुत ही बकवासी महिला रोगी आई, घंटों अपना दुखों का बखान करती रही, मुल्ला के कान पक गए। अंत में महिला ने कहा आपको तकलीफ बताकर मुझे कुछ हरारत महसूस हो रही है, कुछ दवा दे दीजिए। मुल्ला ने नब्ज देखने के बाद कहा कि कोई खास बात नहीं है, आपको बस थोड़ा आराम चाहिए, थकान है, निकल जाएगी, दो–चार दिन में ठीक हो जाएगी, आराम करें। लेकिन वो बातूनी महिला न मानी। उसके चित्त को शांति न मिली, बोली कि आपने नब्ज तो देख ली कृपया मेरी जबान भी देख लीजिए। मुल्ला ने उसकी जबान देखकर कहा, इसे भी आराम की जरूरत है। यही मैं आपसे कहना चाहता हूं, हमारे कामना वाले चित्त को भी जरा आराम की जरूरत है। बहुत दिन हो गए उसे काम करते–करते, वह भी बुरी तरह थक गया है।

ओशो इस विधि को समझाते हुए कहते हैं, इस विधि के दो हिस्से हैं– पहला कि तथ्य के साथ रहो। जो हो रहा है उसके प्रति पूर्ण सजग, अवधानपूर्ण। देखो कि जब कामवासना पकड़ती है तो तुम्हारे भीतर क्या–क्या घटित होता है? तुम्हारा शरीर ज्वर ग्रस्त हो जाता, कांपने लगता, तुम्हें लगता कि कोई विक्षिप्तता तुममें प्रवेश कर गई, तुम्हें लगता है तुम किसी चीज से आविष्ट हो गए। इसको अनुभव करो, इस पर विमर्श करो, कोई निर्णय न लो, सीधे

तथ्य को देखो। यह मत कहो कि यह अच्छा है या बुरा है। अगर बुरा कहा तो विमर्श समाप्त हो गया, तुमने द्वार बंद कर दिया। अगर तुमने अच्छा कहा तब भी विमर्श समाप्त हो गया। अब कामवासना की तरफ तुम्हारी पीठ हो गई, तुमने उससे शत्रुता साध ली या मित्रता साध ली, तब भी तुम उसका विमर्श न कर पाए। ऐसे तुमने एक गहरा और कीमती क्षण गवां दिया जिसमें तुम अपने जीवन की एक जैविक पर्त का दर्शन कर सकते थे।

और इसके बाद शिव कहते हैं दूसरा हिस्सा, वह बड़ा अद्भुत है। जब किसी चीज पर तुमने समग्ररूपेण विमर्श किया है, उसे छोड़ना बहुत ही आसान हो जाता है। वह इतना ही आसान हो जाता है, जितना मेरे हाथ में यह कागज, इस कागज को मैं गिरा दूं, इतना सरल। बस इसे छोड़ दो। इससे क्या होगा, ज्यों ही तुम कहते हो कि मैं छोड़ता हूं, एक अलगाव घटित होता है। तुम्हारा शरीर, कामतप्त शरीर और तुम, दो भिन्न–भिन्न अस्तित्व हो जाते हो। अचानक एक क्षण को भीतर उनके बीच जमीन–आसमान की दूरी पैदा हो जाती है। शरीर तो आवेग से, कामवासना के मोमेंटम से उद्वेलित है और केन्द्र शांत है, साक्षी है, मात्र देख रहा है। स्मरण रहे, वहां कोई संघर्ष नहीं है, सिर्फ अलगाव की स्थिति है। संघर्ष में तुम अलग नहीं होते, जिससे तुम लड़ते हो उसके साथ तुम्हें जूझना पड़ता है, तुम उस विषय के साथ एक हो जाते हो। जब तुम मात्र छोड़ देते हो, तब तुम विलग हो जाते हो, तब तुम इसे दूर से देख सकते हो, मानो तुम नहीं, कोई दूसरा ही व्यक्ति देख रहा हो।

ओशो ने एक घटना अपने जीवन की सुनाई है। उनके कोई परिचित थे। सिगरेट छोड़ना चाहते थे। बहुत कोशिश कर चुके थे। सैकड़ों बार कसम खा चुके थे। दो चार दिन से ज्यादा कसम न चलती, फिर सिगरेट पीना शुरू कर देते। वे अंततः घबरा गए और बड़े आत्मग्लानि और अपराधबोध से भी भर गए। एक दिन उन्होंने ओशो से कहा कि मैं सिगरेट छोड़ना चाहता हूं, क्या करूं? ओशो ने कहा, एक काम करो। पहले तो एक हफ्ते तुम निर्विरोध होकर सिगरेट पिओ, जी भर के सिगरेट पिओ, जितनी सिगरेट पीना हो, पिओ। कोई भी शत्रुभाव तुम्हारे भीतर न हो। वे कहने लगे हद हो गई, जब शत्रुता साध कर भी नहीं छोड़ पाए तो शत्रुता को मिटाकर तो बिल्कुल ही न छोड़ पाएंगे, उसी में फिर से लिप्त हो जाएंगे। ओशो ने कहा, तुम करके तो देखो, एक प्रयोग तो तुम कर ही रहे हो, उसमें सालों–साल से सफल नहीं हुए, मेरी भी बात मान कर देखो। उन्होंने कहा ठीक, लेकिन क्या फिर इससे सिगरेट छूट जाएगी? ओशो ने कहा, तो अभी भी तुमने शत्रुता भाव नहीं छोड़ा वरना छूटने की बात ही क्यों आती।

छूटने की बात ही मत लाओ। निर्विरोध भाव से सिगरेट पिओ, उसके तथ्य का दर्शन करो, ये सिगरेट की तलब क्या है? ये धुएं का भीतर जाना, बाहर आना क्या है? तुममें क्या

घटित हो रहा है, उसको जानो, उसको पूरा-पूरा भोगो। एक हफ्ता बीत गया, दो हफ्ते बीत गए, तीन हफ्ते बीत गए, वे सज्जन लौटकर ही न आए। ओशो ने खबर भिजवाई, वे कहने लगे मैं ऐसा तल्लीन ऐसा मगन हूं, तो छोड़ने की बात ही भूल गया। आपने कहा था कि भूल ही जाओ। पूरी तसल्ली से पिओ। सुबह से शाम तक बस धुआं ही उड़ाता रहता हूं। ओशो ने कहा बस अब समय आ गया, नाउ ड्रॉप इट, इसी समय छोड़ दो। उनके हाथ में सिगरेट थी, उन्होंने हाथ से छोड़ दी। और उसके बाद फिर दुबारा नहीं उठाई। क्या हुआ? इन तीन हफ्तों में विमर्श घटा, तथ्य का साक्षात् हुआ।

तो कामना को छोड़ने का यह अद्भुत गुह्य सूत्र शिव दे रहे हैं। चलो, हम क्रोध भावना को लेकर इसका प्रयोग करते हैं। जब हम अभिनय करते हैं क्रोध का, शुरुआत में तो अभिनय होता है लेकिन दो-चार मिनट के भीतर वास्तविक क्रोध घटित होने लगता है, उस क्रोध का साक्षात् करना, जब मैं अचानक रुकने को कहूं, तो रुक जाना। और फिर तुम क्रोध को ऐसे ही छोड़ पाओगे जैसे हाथ से सिगरेट को गिरा दी हो।

तो सभी मित्र खड़े हो जाएं। क्रोध की अभिव्यक्ति शुरू करें। समझें, सामने आपका दुश्मन है। हृदय की धड़कन बढ़ाएं। चीखें-चिल्लाएं, एक-दूसरे को स्पर्श न करें। अपने क्रोध की पूरी-पूरी अभिव्यक्ति करें। अभिनय को वास्तविक करने में अपनी पूरी प्राणशक्ति लगा दें। चीखें-चिल्लाएं, गालियां दें। बिल्कुल आगबबूला हो जाएं। रुक जाएं, पत्थर की मूर्ति की तरह। बीस सेकेण्ड के लिए सांस भी रोक लें। भीतर क्रोध की ज्वाला का साक्षात् करें। क्रोध पर विमर्श, इसे ठीक से देखें। भूल जाएं विषय को, उस व्यक्ति को जिस पर क्रोध आया। भीतर के क्रोध के प्रति जागरूक, बस। अब अचानक अनियंत्रित ढंग से गिर जाएं। जैसे भी गिरे हैं, उसी अवस्था में रुक जाएं। अब कोई हलन-चलन नहीं। मुर्दे के समान, देह अलग पड़ी है, आप उसके साक्षी हैं। क्रोध से उत्तप्त देह शांत, शीतल, साक्षी। शरीर ही नीचे नहीं गिरा, क्रोध भी गिर गया, क्रोध से भिन्न, सर्वथा पृथक अपने अस्तित्व को पहचाने। वह अस्तित्व ही शिव-रूप है, ओशो-रूप है।

ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!!

थको, गिरने में पूर्ण होओ–27

पूरी तरह थकने तक घूमते रहो, और तब, जमीन पर गिरकर इस गिरने में पूर्ण होओ।

विज्ञान भैरव तंत्र लगभग पांच हजार साल पुराना ग्रंथ है। किन्तु आश्चर्य इन पांच हजार सालों में इसमें, कुछ जोड़ा या घटाया नहीं जा सका। अध्यात्म की जितनी भी विधियां हो सकती हैं मन के पार जाने की, इन 112 विधियों में शामिल हैं। ओशो कहते हैं, भविष्य में भी कोई संभावना नहीं कि विज्ञान भैरव तंत्र में कुछ सुधार किया जा सके। ये दो महर्षि बड़े अद्भुत हुए, एक पतंजलि और एक भगवान शिव। अकेले पतंजलि ने योग का पूरा शास्त्र दे दिया। और अकेले शिव ने तंत्र की, ध्यान की, समाधि में डूबने की सारी विधियां दे दी। ये ऐसे सनातन हैं, जैसे हिमालय की शाश्वत बर्फ। और इतने ताजे, जैसे सुबह के ओसकण। प्राचीनतम भी और नवीनतम भी। विज्ञान इसलिए कहते हैं इसको, क्योंकि इसमें विश्वास की जरूरत नहीं। हिन्दू भी इसे कर सकता है, जैन भी इसे कर सकता है, बौद्ध भी इसे कर सकता है और ईसाई भी। विधि को पूरा करो, मंजिल पर पहुंचना होगा ही होगा। मुसलमान भी इसे कर सकता है।

आज जिस विधि की हम चर्चा करने जा रहे हैं, उसे एक सूफी मुसलमान फकीर ने पुनः खोज ली थीं। जलालुद्दीन रूमी उसका नाम था। शिव इस विधि में कहते हैं, कि पूरी तरह थकने तक घूमते रहो और तब जमीन पर गिरकर, इस गिरने में समग्र हो जाओ। जलालुद्दीन के जीवन में यह घटना अपने आप घटीं। जैसे छोटे बच्चे घूमते हैं न, खेल में, माता–पिता मना करते हैं कि मत घूमो तो फिर भी बच्चे गोल–गोल, गोल–गोल घूमते हैं, उन्हें बड़ा मजा आता है। जरूर इसके भीतर कोई गहरा कारण होगा। जब शरीर घूम रहा है तब अचानक न घूमने वाली साक्षी चेतना का एहसास होता है। जैसे बैलगाड़ी का चाक चल रहा और उसके बींच में, केंद्र में एक धुरी है, जो स्थिर है। गति के कंट्रास्ट में अगतिमान चेतना का अहसास होना बिल्कुल स्वाभाविक है। कंट्रास्ट में हीं चींजों का पता चलता है। शिव कहते हैं शरीर को घूमने दो। रूमी के जींवन में यह घटना घटीं। एक बार वे 36 घण्टे तक लगातार घूमता रहे, लोगों ने समझा कि पागल हो गया। 36 घण्टे बाद, अचानक जब वे गिरे, उस गिरने में एक पूर्णता थीं, समग्रता थीं। फिर गिरे तो ऐसा गिरे कि फिर अहंकार का वापस उठना न हुआ। उस गिरने में हीं उसने अपने अखंड, अविभाज्य अस्तित्व को जान लिया। अस्तित्व के साथ एकता सध गई।

जलालुद्दीन रूमी के बाद सूफी दरवेश, इस नृत्य को बहुत करते हैं। बहुत लोग इस विधि के द्वारा उपलब्ध हुए हैं। सुनने में लगेगीं बड़ी सरल, इसमें क्या रखा है? यह तो छोटे बच्चे भी खेलते–खेलते करते हैं, याद रखना छोटे बच्चों से हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। अक्सर हम सोचते हैं कि बच्चों को हमें सिखाना है। काश, हम थोड़ा बच्चों से सीखें, क्योंकि वे प्रकृति के ज्यादा निकट हैं, परमाात्मा से ज्यादा जुड़े हुए हैं। अभी उनकी बुद्धि विकसित नहीं हुई है, अभी विचारों के जाल में वे फंसे नहीं हैं, निसर्ग के ज्यादा नजदीक हैं, हमें उनसे कुछ सीखना चाहिए। बच्चों को झूला झूलने में बड़ा मजा आता है। विज्ञान भैरव तंत्र में झूलने की भी विधि है। बच्चों को गोल घूमने में बड़ा मजा आता है। माता–पिता मना करते हैं कि गिर जाओगे, चोट लग जाएगीं। बेचारे वे भी ठींक कहते हैं। पर चोट लगने से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण घटना घटतीं है, घूमने में। बच्चा शरीर के पार, मन के पार पहुंच जाता है। तंत्र के बारे में बड़ी गलतफहमियां फैली हैं। स्वाभाविक है, जैसे विज्ञान की पराकाष्ठा पर पहुंचे आइंस्टीन के सापेक्षिकतावाद के सिद्धांत को दुनिया में बहुत कम लोग ही समझ सकते हैं। लेकिन सभी समझते हैं कि हमने समझ लिया, फिर उन्होंने क्या समझा होगा? जरूर कुछ मिसअंडरस्टैण्डिंग, कुछ नासमझी, कुछ गलतफहमी ही हुई होगी। खुद आइंस्टीन ने कहा है कि शायद दुनिया में 12 लोग हैं जो मेरे इस सिद्धांत को समझ सकें। फिर ये युनिवर्सिटी के प्रोफेसर्स और फिजिक्स डिपार्टमेण्ट के हेड्स और पीएचडी करने वाले लोग क्या समझ रहे

होंगे? निश्चित रूप से, कुछ नासमझी, कुछ गलतफहमी ही हो रही होगी। ठीक इसी प्रकार से योग के बारे में, तंत्र के बारे में खूब गलतफहमियां फैली हैं।

याद रखना, तंत्र कोई विचार नहीं है, कोई दर्शनशास्त्र नहीं है। जैसे किसी चिकित्सक के पास तुम जाओ, तुम बताओ कि तुम्हें खांसी है, गले में तकलीफ है, नाक बह रही है, सिर में दर्द है, बुखार चढ़ा है और डॉ. तुम्हारे कूल्हे में इंजेक्शन लगाने लगे, तुम कहोगे कि यह क्या कर रहे? तकलीफ गले में है, इंजेक्शन कमर में लगा रहे हो, कुछ होश–हवास में हो। डॉ. कोई तुम्हें विचार नहीं देता, खांसी के ऊपर तुम्हें उपदेश नहीं देता कि नहीं खांसना चाहिए, धर्मग्रंथों में लिखा है। बड़े–बड़े ऋषिमुनि कह रहे हैं कि छींकना पाप है। नहीं, डॉक्टर तुम्हें कोई उपदेश नहीं देता। डॉ. इलाज करता है और इलाज बड़ा इंडायरेक्ट होता है। तकलीफ कहीं है, इलाज कहीं और होता है। तुम एक्युपंचर वालों के पास जाओ, तुम कहो कि सिर में दर्द है वह पैर के अंगूठे में सुई चुभाते हैं, वहां दबाते हैं एक्युप्रेशर वाले। तुम कहोगे कि दर्द हमें सिर में है, वे कहेंगे सिर से हमें कुछ लेना–देना नहीं, हम उस प्वाइंट को दबा रहे हैं जहां से सिरदर्द ठीक हो सकता है। पार्वती ने पूछा की इस अस्तित्व का रहस्य क्या है? शिव कह रहे हैं गोल–गोल घूमो जब तक कि गिर ही न जाओ। फिर पूर्णता से गिर जाओ, तुम्हें लगेगा ह तो बड़ी विचित्र बात हुई। क्या पूछा जा रहा है, क्या उत्तर दे रहे? यह उपचार है, तंत्र एक विधि है। तंत्र कोई दर्शन नहीं है, कोई विचार नहीं है। और इसलिए विचार करने वाले लोग कभी विज्ञान भैरव तंत्र में उत्सुक नहीं हुए। इसलिए विज्ञान भैरव तंत्र पर पण्डित, पुरोहितों की टीकाएं–टिप्पणियां नहीं हैं।

गीता की एक हजार से ज्यादा प्रसिद्ध व्याख्याएं मौजूद हैं। विज्ञान भैरव तंत्र पर कोई व्याख्या नहीं करता। लोगों को समझ में नहीं आता इसमें क्या व्याख्या करें? शिव कह रहे हैं गोल–गोल घूमो जब तक कि गिर न जाओ। इससे परमात्मा का क्या लेना–देना? तुम करके देखो तब पता चलेगा कि सब कुछ इसी से होगा। गीता की व्याख्याओं से और वेदों पर वाद–विवाद करने से कुछ भी नहीं होगा। अगर गोल–गोल घूम सके पूर्णता से, ध्यान रखना पूर्णता इसमें बहुत जरूरी है। अधूरे–अधूरे मन से नहीं, तुम्हारा गिरना तभी हो जब तुम पूरी तरह थक चुके हो। एक कदम अब और नहीं उठा सकते। अगर तुम जान–बूझकर गिरे तो तुम्हारे भीतर दो खण्ड हो गए। एक मन का हिस्सा, जो कह रहा कि गिर जाओ, वह हिस्सा बाकी के हिस्से से अलग हो गया, तब तुम अद्वैत का अनुभव नहीं कर सकोगे। गिरने में पूर्णता होनी चाहिए। लेकिन हम तो विचित्र लोग हैं, हम कोई भी काम पूरा–पूरा करते ही नहीं। आधे–अधूरे मन से सारी चीजें करते हैं।

मैंने सुना है सरदार विचित्तर सिंह बगल में छाता दबाए सड़क से जा रहे थे। भारी वर्षा

होने लगी, बिजलियां चमकने लगीं, बाजार में सभी लोगों ने अपने–अपने छाते खोल लिए लेकिन विचित्तर सिंह नेइ अपना छाता बगल में ही दबाए रखा। किसी ने पूछा कि भलेमानुष छाता क्यों नहीं खोलते? विचित्र सिंह ने कहा छाता बिल्कुल खराब है। एक तो उसमें छेद–ही–छेद हैं, दूसरा वह खुलता भी नहीं, उसका डण्डा भी टूटा हुआ है। उसने कहा कि जब छाता किसी काम का नहीं तो उसको लाए ही क्यों? विचित्तर सिंह ने कहा मुझे क्या पता कि आज वर्षा हो ही जाएगी। ऐसा आधा–अधूरा हमारा मन है। कुछ काम करते भी हैं और करना भी नहीं चाहते। छाता लाए भी हैं और उम्मीद पूरी है कि वर्षा न होगी। इस छाता लाने का क्या मतलब हुआ? तो तंत्र कि विधियों में एक बात है, इसे पूर्णता से करना।

शिव चरित्र बदलने की नहीं कहते, वे उस चित्त को बदलते हैं। वे केवल विधि देते हैं, समझो, कोई आदमी मेरे पास आए और कहे कि मैं लोभ से, मोह से, अटैचमेंट से बहुत पीड़ित हूं। मैं उससे कहता हूं, बाहर छोड़ने वाली श्वास पर ध्यान दो, वह चकित होता है। मैं कह रहा हूं कि लोभ से ग्रस्त हूं, मोह–ममता से घिरा हूं और आप कह रहे हैं कि बाहर छोड़ने वाली श्वास पर जोर दो, उनका क्या संबंध? संबंध सीधा तो दिखाई नहीं देगा। जो आदमी लोभग्रस्त है, मोहग्रस्त है, वह चीजों को पकड़ना चाहता है। वह श्वास भीतर तो लेता है बाहर नहीं छोड़ना चाहता। मैं उल्टी विधि कह रहा हूं, मैं कह रहा हूं श्वास बाहर छोड़ने पर जोर दो, लेने पर बिल्कुल जोर न दो। अगर वह आदमी इस तरकीब को करे, छोड़ने वाली श्वास पर ज्यादा ध्यान दे। तो वह पाएगा कि उसके भीतर से पकड़, अटैचमेंट, लोभ, मोह विसर्जित हो गए। यद्यपि हमने सीधा–सीधा उनके साथ कुछ भी न किया, परिणामस्वरूप पकड़ समाप्त हो गई। जो आदमी अपनी सांस तक को नहीं पकड़ रहा, वह और क्या पकड़ेगा? जो अपना जीवन ही छोड़ने को राजी है। भीतर आती श्वास जन्म का प्रतीक है, बाहर जाती श्वास मृत्यु का प्रतीक है। जो अपनी जिंदगी भी छोड़ने को राजी है, वह धन पैसा पकड़ेगा? वह पत्नी–बच्चों को पकड़ेगा? मोह उसका अपने आप छूट जाएगा। तो शिव की ये विधियां इस प्रकार की हैं। एक विधि अब चुन लो उसे कम से कम तीन माह तक करो और पूर्णता के साथ करो, आधे–अधूरे मन से नहीं। डटे रहना करते ही जाना। पूर्णता ही विधि को सफल बनाती है। समग्र, टोटलिटी के साथ घूमते जाना, घूमते जाना और तब तुम पाओगे अद्भुत घटना घटी।

इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, मन बार–बार कहेगा कि बस भी करो बहुत थक गए, मगर ध्यान मत देना मन पर, तब तक घूमना जारी रखो जब तक तुम्हें महसूस न हो कि शरीर बिल्कुल थक गया। यह थकना विचार न हो, तुम्हारा एहसास हो। अब एक कदम भी उठाना संभव न हो, यदि उठाऊंगा तो गिर जाऊंगा, तब भी घूमते जाओ, गिर जाओ तो गिर जाओ। शरीर थककर चकनाचूर हो गया, तब जमीन पर गिर कर इस गिरने में पूर्ण हो

जाओ। पूर्णता से गिरो। ध्यान रहे कि थकना इतना हो कि गिरना अपने आप घटित हो। अगर तुमने दौड़ना जारी रखा तो गिरना अनिवार्य है, वह चरम बिंदु आ ही जाएगा। शिव कहते हैं, गिरो और उस गिरने में पूर्ण हो जाओ। इस विधि का केन्द्रीय बिंदु यही है, गिरने में पूर्णता। उसी से अपने भीतर के अद्वैत, अखंडभाव को, अविभाज्य भाव को जान सकोगे। तो आओ इस विधि को हम करते हैं।

इस विधि के सिर्फ दो चरण हैं– पहले चरण में दाहिना हाथ ऊपर आकाश की ओर करके, बायां हाथ नीचे जमीन की ओर करके। घड़ी की विपरीत दिशा में घूमना शुरू करेंगे। दो मिनट तक इस प्रयोग को हम करेंगे। धीरे–धीरे गति बढ़ाते चलेंगे। यहां मैं सिर्फ समझाने के लिए दो मिनट करवा रहा हूं। लेकिन इसे तब तक करना है जब तक कि स्वयं गिरना न हो। और जब गिरें, अंतिम चरण में पेट के बल गिरें। अगर कोई व्यक्ति बीच में ही गिर जाए तो फिर वह उठे न। पेट के बल गिरा रहे, गिरने में पूर्ण हो जाए। तो आओ इस विधि को करते हैं।

ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!!

शक्ति या ज्ञान से खाली–28

कल्पना करो कि तुम धीरे–धीरे शक्ति या ज्ञान से वंचित किए जा रहे हो। वंचित किए जाने के क्षण में अतिक्रमण करो।

मनुष्य का होना तीन तलों पर विभाजित है, करना, सोचना और जानना। शरीर क्रियाओं का तल है, मन विचारने का तल है और आत्मा जानने का तल है। सामान्यतः केवल हम केवल दो तलों से परिचित हैं, तीसरे का हमें ख्याल ही नहीं है। हम या तो क्रियाओं में संलग्न होते हैं, शरीर की या मन की क्रियाएं, विचार, कल्पना, स्मृति इत्यादि। आज की विधि में भगवान शिव कहते हैं, प्रथम दो तलों से मुक्त होकर, तीसरे में स्थिर बनो। वे कहते हैं कि कल्पना करो कि तुम धीरे–धीरे शक्ति और ज्ञान से वंचित किए जा रहे हो। वंचित किए जाने के क्षण में अतिक्रमण करो। इन दोनों के पार चले जाओ। बड़ी प्यारी और अद्भुत विधि है यह। पहले तो यह समझ लें कि हम जिसे मन कहते हैं, ज्ञान का भंडार, स्मृतियों का संग्रहालय, वह सदा ही चिंता, तनाव, दुख, डर और द्वंद्वग्रस्त स्थिति में रहेगा। इसके तीन कारण हैं, पहला कारण मन, तन और चेतन के बीच सेतु का काम करता है। एक तरफ आत्मा, एक तरफ पदार्थ, उन दोनों को जोड़ने वाला पुल है। पुल तो तनावग्रस्त

रहेगा ही, वह तो खिंचा हुआ रहेगा ही। दृश्य और अदृश्य को जोड़ने वाला है मन बीच में, इसलिए उसका तनावग्रस्त होना, प्रकृति ही है।

दूसरा कारण, मन कोई वस्तु नहीं है, एक सतत प्रक्रिया है, विचारों की प्रक्रिया और इसलिए कोई प्रक्रिया शांत नहीं हो सकती। जैसे शांत तूफ़ान नहीं होता, हम गलत शब्द प्रयोग करते हैं। हम कहते हैं तूफ़ान आया था, अब शांत हो गया। शांत तूफ़ान जैसी कोई चीज नहीं होती, या तो तूफ़ान होता है या तूफ़ान नहीं होता। अशांति का नाम ही तूफ़ान है। इसलिए अशांत शांति जैसी कोई बात हो ही नहीं सकती। ठीक इसी प्रकार शांत मन भी नहीं हो सकता। मन हिंसा की व्यवस्था है। मनुष्य अन्य पशु–पक्षियों और जानवरों से बहुत कमजोर था। देखें आदमी के नाखून कितने कमजोर हैं, किसी पर हमला नहीं कर सकता। आदमी के दांत कितने कमजोर हैं। अमरूद और गन्ना खाने में भी दिक्कत होती है। शेर, चीता और हाथी से क्या झगड़ा करेगा, कुत्ता बिल्ली से भी झगड़ा करना मुश्किल है। कुत्ते से भी हम हार जाएंगे। शारीरिक रूप से मनुष्य कमजोर था। इसलिए उसके भीतर मन विकसित हुआ, मन ने फिर चालाकी के उपाय निकाले। नाखून तो कमजोर है कोई बात नहीं, नुकीले पत्थर ढूंढ़ लिए। हथियारों की तरह उपयोग करने लगा। दांत कमजोर हैं, कोई बात नहीं, दूर से तीर चला देंगे। धनुषबाण खोज ही लिया। फिर धीरे–धीरे पिस्तौल आ गई, बंदूके, रायफल, मशीनगनें आ गईं, बम और परमाणु बम आ गए। हमारे कमजोर शरीर के कारण ही हमारा मन इतना विकसित हो पाया। जानवरों को मन के विकास की कोई जरूरत नहीं। उनका शरीर ही काफी मजबूत है। तो हमारा मन एक प्रकार से हमारी कमजोरी का सबस्टिच्यूट है, परिपूरक है। इसलिए मन हिंसा की व्यवस्था है। और हिंसा की व्यवस्था कैसे शांत हो सकती है?

तीसरी बात, मन हमेशा स्मृति और अनुभवों के अनुसार चलता है। वह हमेशा ही रूढ़िवादी और परंपरावादी होगा। वह हमेशा ही अतीत उन्मुख ही होगा और इसलिए परमात्मा से वह चूकता चला जाएगा क्योंकि परमात्मा अर्थात् वर्तमान में होना। वह जो इस क्षण में है, अभी और यहीं, वह परमात्मा है और मन कभी अभी और यहीं में नहीं हो सकता। इन तीन कारणों से मन सदा ही तनावग्रस्त और विक्षिप्तता की अवस्था में रहेगा। पश्चिम के मनोवैज्ञानिक तो कहते हैं कि आनन्दित व्यक्ति हो ही नहीं सकता, ज्यादा से ज्यादा इतना हो सकता है, कम दुखी और ज्यादा दुखी। तो मनोविज्ञान का लक्ष्य है कि ज्यादा दुखी आदमी को थोड़ा कम दुखी बना दो। इससे और ज्यादा कुछ किया नहीं जा सकता। लेकिन यह वक्तव्य तो बड़ा ही निराशाजनक है। पूरब के ऋषियों ने कुछ और जाना है। बुद्ध ने, महावीर ने, पतंजलि ने, शिव ने, कबीर ने, नानक ने, ओशो ने परमानंद की अवस्था को जाना है। यह अवस्था मन के पार की अवस्था है। मन के द्वारा इसे नहीं जाना जा सकता। तो पश्चिम के

मनोवैज्ञानिक जो कह रहे हैं, उसमें भी आंशिक सत्य है। क्योंकि वे केवल मन के घेरे के अंदर कार्य कर रहे हैं। वे मन को स्वस्थ्य और सुव्यवस्थित करने की असंभव कोशिश कर रहे हैं और उसका निष्कर्ष यही निकलता है कि यह काम न हो सकेगा।

उन्हें एक बात अभी सूझी नहीं कि मन के बाहर भी जाया जा सकता है। समझो तुम्हारे कमरे में बहुत ठण्ड पड़ रही है और तुम उसे गर्म करने की कोशिश कर रहे हो। यह भी तो सूझ आ सकती है कि कमरे के बाहर चलो जहां धूप निकली है। मन के भीतर रहना कोई जरूरी तो नहीं, अनिवार्य तो नहीं है। तुम मन के बाहर भी जा सकते हो, उस मनातीत अवस्था का नाम ही ध्यान है, समाधि है। हां ऐसा व्यक्ति जो बाहर हो आया, वह मन के भीतर पुनः आ सकता है, मन का उपयोग कर सकता है। अपने कमरे में फिर आ सकता है लेकिन अब वह आदमी बदल गया। वह दूसरा ही हो गया। मन के पार, भावों के पार, शरीर के पार एक बार स्वयं को जान लिया कि मैं साक्षी चैतन्य हूं, फिर शरीर का उपयोग करते हुए भी तुम वही व्यक्ति नहीं रह जाओगे, जो तुम पहले थे।

मैंने सुना है, मुल्ला नसरुद्दीन किसी पार्टी में एक बहुत मनोविज्ञान के प्रकाण्ड पण्डित से बात कर रहा था। उसने पूछा कि प्रोफेसर साहब, यह बताइए, किसी आदमी की बुद्धि की परीक्षा कैसे ली जाती है या बुद्धि मापांक कैसे निकाला जाता है? उसने कहा कि यह बड़ा सरल है, कोई छोटा-मोटा सवाल किसी से पूछ लो, फौरन पता चल जाएगा कि उसमें अक्ल है कि नहीं। मुल्ला ने कहा चलिए मैं ही आपसे एक सवाल पूछता हूं। बताइए, कर्नल वर्ड ने तीन बार बिना रुके हवाई जहाज से पृथ्वी की परिक्रमा की, तीन राउण्ड लिए, किस राउण्ड में उनकी मृत्यु हुई आप बताइए। प्रोफेसर बहुत चकित हुआ सिर खुजाने लगा, उसने कहा कि भाई यह तो बड़ा कठिन सवाल है, तीन राउण्ड लिए, किस राउण्ड में मृत्यु हुई? जब तक इतिहास का ज्ञान न हो मैं आखिर कैसे बता सकता हूं? हम जिन्हें प्रकाण्ड पण्डित, विद्वान, मनोवैज्ञानिक कह रहे हैं वे मन के घेरे के अंदर बंद हैं। इस मन के घेरे के बाहर निकलना होगा। और विधि बड़ी आसान है, जरा भी कठिन नहीं।

भगवान शिव कह रहे हैं, केवल शरीर की शक्ति और मन की शक्ति तुमसे बाहर जा रही है, इसकी कल्पना करो। मुर्दे के जैसे पड़े रह जाओ। भाव करो तुम्हारे शरीर की सारी शक्तियां तुमसे बाहर जा रही हैं। कल्पना में उड़ते हुए देखो कि शक्ति की तरंगें बाहर को जा रही हैं। कल्पना करो, तुम्हारी खोपड़ी से सारा ज्ञान बाहर जा रहा है। जो विचार, जो स्मृतियां, जो अनुभव तुमने संग्रहीत कर रखे थे, वे सब उड़न छू हो रहे हैं। तुम्हें छोडकर जा रहे हैं। यह कल्पना भी अद्भुत असर करेगी। पांच-सात मिनट के अंदर ही तुम पाओगे जैसे तुम्हारा शरीर निर्जीव हो गया, कोई ताकत न बची। न शरीर में हिलने-डुलने की शक्ति है, न मन में कुछ सोचने-विचारने की ताकत है। और उस क्षण में अचानक एक ट्रान्सडेंटल

एक्सपिरियन्स होगा, अतिक्रमण का अनुभव होगा। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं– तुम यह प्रयोग अन्य कई ढंगों से भी कर सकते हो। कभी–कभी वास्तविक स्थितियों में भी यह प्रयोग संभव है। मानलो तुम बीमार पड़े हो और तुम्हें लगता है कि अब कोई आशा न बची, मृत्यु सुनिश्चित है, यह प्रयोग बहुत लाभकारी होगा। ध्यान के लिए इस अवस्था का उपयोग कर लो।

और दूसरे ढंगों से भी इसका उपयोग किया जा सकता है। कल्पना करो कि धीरे–धीरे तुम्हारी शक्ति क्षीण हो रही है। लेट जाओ और भाव करो कि समस्त अस्तित्व मेरी शक्ति को चूस रहा है। चारों ओर से मेरी ताकत चूसी जा रही है और शीघ्र ही मैं निःशक्त हो जाऊंगा, सर्वथा बलहीन हो जाऊंगा, मेरे भीतर कुछ भी न बचेगा और जीवन ऐसा ही है। तुम चूसे ही जा रहे हो, तुम्हारे चारों ओर की चीजें तुम्हें चूस रही हैं और एक दिन तुम मुर्दा हो जाओगे, सब कुछ चूस लिया जाएगा। जीवन तुमसे जा चुकेगा और केवल लाश पड़ी रह जाएगी। इस क्षण का भी तुम प्रयोग कर सकते हो। कल्पना करो, लेट जाओ और भाव करो कि ऊर्जा चूसी जा रही है। थोड़े ही दिनों में तुम्हें साफ होने लगेगा कि जैसे ऊर्जा बाहर जा रही है। जब तुम समझो कि सारी ऊर्जा बाहर चली गई, भीतर कुछ भी नहीं बचा तब अतिक्रमण कर जाओ।

शिव कहते हैं, वंचित किए जाने के क्षण में अतिक्रमण करो। जब ऊर्जा का अंतिम कण तुमसे बाहर जा रहा है, अतिक्रमण करना बहुत आसान है। द्रष्टा की भांति हो जाओ, मात्र साक्षी, अब यह जगत और शरीर ोनोंद ही तुम नहीं हो। बस तुम तो केवल देखने वाले हो। यह अतिक्रमण तुम्हें तुम्हारे मन के बाहर ले जाएगा। यही कुंजी है इस विधि की। और तुम अपनी पसंद के मुताबिक कई तरह से इस प्रयोग को अपनी जिंदगी में आजमा सकते हो। उदाहरण के लिए, जब तुम दौड़ रहे हो, खूब तेजी से दौड़ो, अपने को बिल्कुल थका डालो। दौड़ते जाओ, दौड़ते जाओ खुद अपनी तरफ से मत रुको, शरीर को अपने आप ही गिरने दो। जब शरीर का जर्रा–जर्रा थक जाएगा, तुम अनायास ही गिर पड़ोगे और जब तुम गिरोगे, अचानक तुम सजग हो जाओगे। तुम देखोगे कि शरीर गिर रहा है और मैं उसे जान रहा हूं। कभी–कभी तो दुर्घटनाओं में भी चमत्कारपूर्ण घटना घट जाती है। इस विधि को कई भांति से प्रयोग करना।

आज हम जो प्रयोग करने जा रहे हैं, वह बड़ा आसान है। थोड़ी देर जॉगिंग करेंगे। अपने ही जगह खड़े होकर उछलेंगे, एक ही बिन्दु पर दौड़ेंगे। हू–हू की आवाज करते हुए, दोनों हाथ ऊपर उठाकर, उसके बाद एक मिनट तक अपनी सारी शक्ति लगा देंगे। 'हू' कहने से ऊर्जा ऊपर की ओर जाती है। और उछलना भी है साथ में, धीरे–धीरे शरीर की शक्ति चूकती चली जाए। जैसे ही मैं कहूं अचानक स्टॉप, आप रुक जाएं। जहां हैं, जैसे हैं उसी स्थिति में

रुक जाएं। फिर कोई हलन–चलन नहीं। पत्थर की मूर्ति जैसे हो जाएं। फिर जब मैं कहूं कि अचानक गिर जाएं, बस तब गिर ही जाएं। अपने को संभालने की कोशिश न करें, जरा भी कहीं से ताकत न लगाएं, अब आपके पास ताकत बची ही नहीं, सम्हलने की भी ताकत न बची। और उस गिरने की अवस्था में फिर भाव करें कि आपके सिर से विचारों की तरंगें बाहर जा रही हैं। शरीर की शक्ति पहले ही चुक गई, अब मन की शक्ति भी चूक रही है। धीरे–धीरे आप मनहीन हो गए। कल्पना करें कि आपका सिर है ही नहीं।

मैं पढ़ रहा था एक चुटकुला। एक अमेरिकन वैज्ञानिक भारतीय वैज्ञानिक से बात कर रहा था। अमेरिकन वैज्ञानिक ने कहा कि हमारे यहां प्लास्टिक सर्जरी इतनी विकसित हो गई है कि एक बच्चा लूला पैदा हुआ था उसका एक हाथ नहीं था। हमने प्लास्टिक सर्जरी के द्वारा एक नकली हाथ लगाया। 25 साल बाद वह युवक बड़ा होकर ओलंपिक में प्रसिद्ध बॉक्सर बना, गोल्ड मेडल लेकर आया है बॉक्सिंग में, नकली हाथ से। भारतीय कहने लगा कि यह तो कुछ भी नहीं, हमारे यहां तो प्लास्टिक सर्जरी इससे भी ज्यादा विकसित है। एक बच्चा पैदा हुआ था बिना सिर का, हमने उसके सिर की जगह नारियल फिट कर दिया। जानते हो आज वो बहुत बड़ा मिनिस्टर बन गया है। भाव करो, तुम्हारा सिर ही नहीं है। सारे ज्ञान से तुम वंचित हो गए। और तब तुम अतिक्रमण कर जाओ। तो आओ इस प्रयोग को शुरू करते हैं।

सभी लोग खड़े हो जाएं, दोनो हाथ ऊपर कर लें और उछलना शुरू करें और उछलने के साथ सूफी मंत्र हू–हू–हू– का उच्चारण करें। अपनी पूरी शक्ति लगा दें। स्टॉप! ... अब बिल्कुल संगमरमर की प्रतिमा हो जाएं। कोई हलन–चलन नहीं, आंख बंद। भाव करें आपकी सारी शक्ति चुक गई है। देह में कोई बल बाकी नहीं रहा। सम्हलने की भी शक्ति नहीं बची, अब तो खड़े रहने की भी शक्ति नहीं बची। अनायास शरीर को गिर जाने दें। बिल्कुल ठीक, अब दूसरी कल्पना करें कि मैं ज्ञान से वंचित किया जा रहा हूं, मेरी खोपड़ी खाली होती जा रही है। विचार के कण भाप बनकर हवा में उड़ रहे हैं, तन की शक्ति पहले ही चूक गई है, अब मन की शक्ति भी चूक गई। एक मुर्दा लाश की भांति शरीर पड़ा हुआ है। न करने की शक्ति है, न सोचने की शक्ति है लेकिन जानने की उर्जा अभी भी बाकी है। देह और मन के पार आप साक्षी चैतन्य हैं। इस लाश जैसे पड़े शरीर को आप जान रहे हैं। भाव करें मर गए, मर ही गए। फिर भी कोई जानने वाला तत्व शेष है, वही तुम्हारी साक्षी आत्मा है।

ओम् नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!!

भक्ति मुक्त करती है–29

भक्ति मुक्त करती है।

भगवान शिव ने अचानक रुकने की पांच विधियां बताया। आज हम पांचवीं विधि की चर्चा करेंगे। वे कहते हैं, हे देवी! भक्ति मुक्त करती है। 'भक्ति' को उन्होंने अचानक रुकने की विधि में गिना है। वह जो कर्ताभाव, अहंकार अभी तक क्रियाशील था, वह भक्ति में, प्रेम में, श्रद्धा में, समर्पण में अचानक रुक जाता है। गिर जाता है, समाप्त हो जाता है। इसलिए भक्ति अचानक रुकने की एक विधि है। हो जाए तो हो जाए, न हो तो न हो, प्रेम के समान है। हवा का झोंका है, खिड़की से आ जाए तो आ जाए, न आए तो न आए। कुछ किया नहीं जा सकता, इसलिए प्रेम की, भक्ति की, समर्पण की कोई विधि नहीं होती। याद रखना, विज्ञान भैरव तंत्र एक अद्भुत ग्रंथ है, हिंदुओं का एकमात्र ऐसा ग्रंथ है, जिसमें एक स्त्री, पार्वती सवाल पूछ रही है और गुरु शिव उसका उत्तर दे रहे हैं। अन्य सभी ग्रंथों में जो प्रश्न हैं, वे बौद्धिक प्रश्न हैं, पुरुष शिष्यों के द्वारा पूछे गए हैं। गुरु भी पुरुष है, शिष्य भी पुरुष है। केवल यह 'विज्ञान भैरव तंत्र' ही एक अनूठा ग्रंथ है। और इसलिए शिव जो उत्तर दे रहे हैं उसमें बहुत सी बातें ऐसी हैं जो किसी अन्य शास्त्र में नहीं है। भगवान शिव ऐसी विधियां भी बता रहे हैं जो स्त्रैण चित्त के लोगों के काम आ सकेंगी।

भक्ति मुक्त करती है। 'डिवोशन गिव्स फ्रीडम', पहले तो यह समझ लो कि बंधन क्या है? बंधन है– हमारा अहंकार, हमारा कर्ताभाव, मैं–भाव। भक्ति इस बंधन को गिरा देती है। भक्ति का अर्थ है, मैं करने वाला नहीं, परमात्मा की मर्जी से सब हो रहा है। उस विराट की इच्छा से सब चल रहा है। मेरे होने, न होने का कोई अर्थ नहीं। मैं अर्पित हूं उसके चरणों में, जो उसकी मर्जी। भक्तों ने अपने नाम के साथ 'दास' शब्द जोड़ा है। कबीरदास, तुलसीदास, रामदास, सूरदास। मुसलमान सूफी फकीरों ने अपने नाम के साथ गुलाम शब्द जोड़ा है। दास का पर्यायवाची, गुलाम अली, गुलाम मोहम्मद। जब पश्चिम के लोगों ने पहली बार अनुवाद किए पूर्वी शास्त्रों के तो उनको बड़ी हैरानी हुई। दास या गुलाम का पर्यायवाची अंग्रेजी में है, 'स्लेव' और स्लेव बड़ा ही निंदात्मक शब्द है, यह कोई अच्छा शब्द नहीं है। स्लेवरी, गुलामी, दासता। उन्हें तो आश्चर्य हुआ कि लोग अपने नाम के साथ दास या गुलाम क्यों कहते हैं? उन्हें पता नहीं है कि दास होकर, गुलाम होकर, प्रेम में मिटकर महास्वतंत्रता मिलती है। दो प्रकार की स्वतंत्रताएं हैं, एक तो है स्वयं की स्वतंत्रता और एक है स्वयं से स्वतंत्रता। एक है, फ्रीडम ऑफ दि सेल्फ और दूसरी है, फ्रिडम फ्रॉम दि सेल्फ। यहां जिस मुक्ति की चर्चा भगवान शिव कर रहे हैं, वह दूसरे प्रकार की मुक्ति है। स्वय से मुक्ति, अहंकार से मुक्ति, कर्ताभाव से मुक्ति।

भक्ति से ज्यादा श्रेष्ठ और कोई साधन इसका नहीं हो सकता। लेकिन याद रखना केवल भावुक किस्म के लोग, स्त्रैण चित्त के लोग ही इस राह पर चल सकते हैं। कभी–कभार पुरुषों में भी स्त्रैण चित्त के लोग होते हैं। यह मार्ग महिलाओं के लिए सरल, पुरुषों के लिए कठिन है। कुछ अपवाद होते हैं। अब उदाहरण के लिए झांसी की रानी लक्ष्मीबाई। कहने के लिए तो एक स्त्री थीं लेकिन किसी पुरुष योद्धा से कम नहीं। अच्छे–अच्छे योद्धाओं के छक्के छुड़ा दिए। कभी–कभी इसका ठीक विपरीत भी होता है। महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर, लंबी दाढ़ी–मूंछों से धोखा मत खा जाना कि वे पुरुष हैं। उनका हृदय बड़ा कोमल, बड़ा कमलीय, किसी स्त्री का शायद इतना कमलीय न होगा। रवीन्द्रनाथ बड़े ही कोमल हृदय के व्यक्ति हैं, बड़े करुणा और प्रेमभाव से भरे हैं ज्यादा अच्छा होता, रवीन्द्रनाथ की नाम रवीन्द्रबाई होता। लक्ष्मीबाई का नाम लक्ष्मीभाई होता। दो प्रकार के लोग हैं– मस्तिष्कप्रधान और हृदयप्रधान। मस्तिष्कप्रधान लोगों के लिए अन्य सारी विधियां हैं। हृदयप्रधान लोगों के लिए प्रेम ही एकमात्र विधि है। कुछ लोग मिक्स टाइप के होते हैं, आधे–आधे, उनकी बड़ी मुश्किल होती है। कभी उनके भीतर भावावेश आता है और वे भाव से आविष्ट हो जाते हैं और कभी बुद्धि, गणित, विज्ञान, संदेह हावी हो जाता है। ऐसे लोग खण्डित व्यक्तित्व के हो जाते हैं। एक आदमी दो व्यक्तियों की तरह व्यवहार करने लगता है। ऐसे लोगों का व्यवहार अविश्वसनीय हो जाता है। कहा नहीं जा सकता वे कब क्या करेंगे? ऐसे लोगों के पागल होने की संभावना

ज्यादा होती है। वास्तव में उनके भीतर एक आदमी नहीं, दो आदमी हैं।

मीरा ने किसी से पूछा नहीं कि कृष्ण को कैसे प्रेम करे? बस प्रेम हो गया और इसलिए मीरा का प्रेम राधा के प्रेम से भी ऊपर चला जाता है। राधा के सामने तो कम से कम वास्तविक कृष्ण मौजूद थे। मीरा के सामने तो कृष्ण की केवल कल्पना मात्र है। लेकिन वह कल्पना में भी ऐसी तल्लीन हो गई, ऐसी डूब गई कि मुक्त हो गई। भगवान शिव कहते हैं, भक्ति मुक्त करती है। प्रेम में भक्ति का छोटा सा रूप दिखाई पड़ता है। प्रेम अंशतः मुक्त करता है और यही प्रेम की पीड़ा भी है। भक्ति पूर्ण मुक्त करती है, प्रेम अंशतः मुक्त करता है। थोड़ा सा बंधन रह जाता है। और वही बंधन फिर दुख का कारण बनता है। इसलिए जगत के साधारण प्रेम में सुख भी मिलता है, दुख भी मिलता है, दोनों एक साथ मिलते हैं। प्रेम से भक्ति की ओर चलो। किसी शायर ने लिखा है–

काफिला ऐ हमसफर अब अलविदा,
मुमकिन है तनहाई सुकून लाएगी।
चलते–चलते हम भटकते ही रहे,
रुकूं तो शायद मंजिल मिल जाएगी।
नाज था जिस अक्ल पर उसने ही धोखे दिए,
दीवानगी शायद कहीं ले जाएगी
खुदी में गर्क होके ये सबक सीखा है,
बेखुदी शायद कहीं पहुंचाएगी।

बहुत संभल–संभल कर बुद्धि के भरोसे चलकर देख लिय, अब थोड़ा ह्रदय की भी मानकर चलो। बेखुदी शायद कहीं पहुंचाएगी, रुकूं तो शायद मंजिल मिल जाएगी। यह अचानक रुकने की विधि, आप में से कुछ लोगों ने देखी होगी ओशो की वह तस्वीर, जिस पर उन्होंने अपनी हस्तलिपि में लिखा था कि मैं सिखाने नहीं जगाने आया हूं। समर्पण करो और मैं तुम्हें रूपान्तरित करूंगा, यह मेरा आश्वासन है। किसी ने बाद में ओशो से पूछा, कोई व्यक्ति आपसे दूर रहता है, उसने आपको देखा नहीं, आपने उसे देखा नहीं। वह अपने घर में ही आपके प्रति समर्पण भाव से भरे, क्या उसका भी आप रूपान्तरण कर देंगे? ओशो ने समझाया कि पागल मैं थोड़े ही रूपान्तरण करूंगा, समर्पण का भाव स्वयं ही रूपान्तरणकारी है। गुरु को कुछ करना नहीं पड़ता, शिष्य के भीतर ही यह अद्भुत घटना घटती है, उसका

समर्पण का भाव ही उसके अहंकार को मिटा देता है। यह तत्व ही रूपान्तरणकारी है। तो गुरु के प्रति समर्पण, परमात्मा के प्रति समर्पण का रिहर्सल है और इसलिए यह गुरु के प्रति श्रद्धा
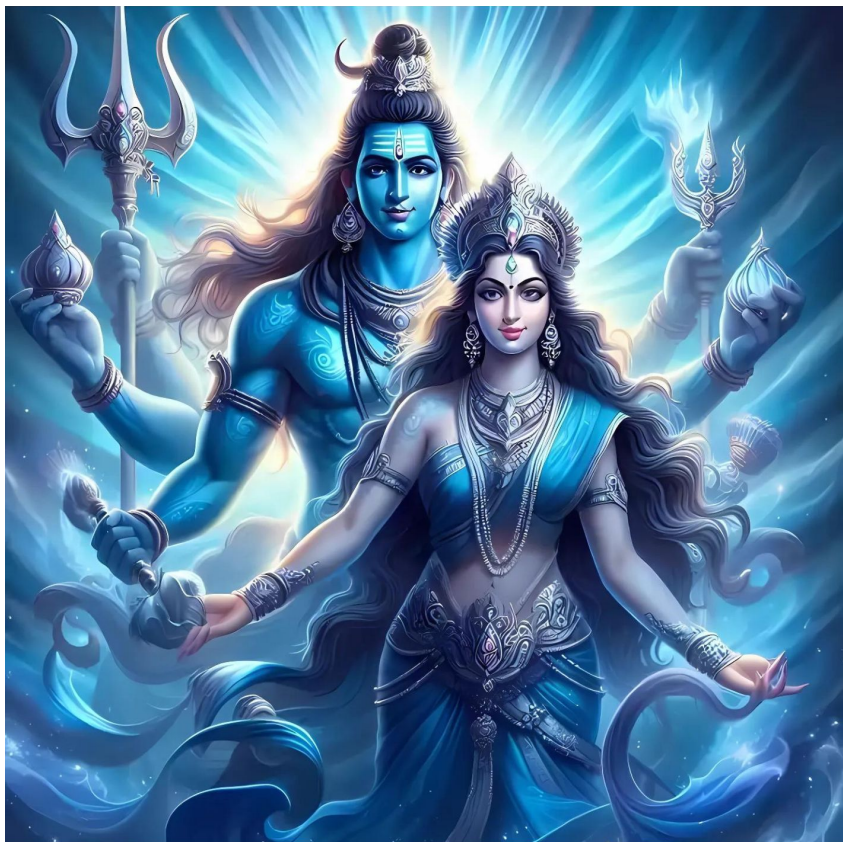
अंतरस्थ अस्तित्व को देखो—30

आंखे बंद करके अपने अंतरस्थ अस्तित्व को विस्तार से देखो। इस प्रकार अपने सच्चे स्वाभाव को देख लो।

आज विज्ञान भैरव तंत्र की तीसवीं विधि में भगवान शिव कहते हैं, आंखे बंद करके अपने अंतरस्थ अस्तित्व को विस्तार से देखो और इस प्रकार अपने सच्चे स्वभाव को जान लो। अंतरस्थ अस्तित्व, एक तो बाहर फैला हुआ विराट अस्तित्व है, जिसे हम इंद्रियों से जानते और जब हम आंख बंद करते हैं तब अक्सर बाहरी घटनाओं की, परिस्थितियों, व्यक्तियों की छवियां हमारे भीतर डोलती रहती हैं, हम उनसे मुक्त नहीं हो पाते। या तो बाहर के यथार्थ जगत को हम देखते हैं या फिर हमारे भीतर एक मनोजगत है। एक मानसिक संसार है भीतर, वही बाहर के लोग, उन्हीं के सपने, उन्हीं की स्मृतियां, वही बाहर की घटनाओं की प्रतिछवियां भीतर तैरती रहती हैं। जब भगवान शिव कहते हैं आंख बंद करके, तो इसका तात्पर्य केवल आंख से ही नहीं, बल्कि समस्त इंद्रियों से लेना। कान भी बंद कर लेना, न बाहर सूंघना, न बाहर का स्वाद लेना, न बाहर कुछ स्पर्श करना, न बाहर देखना, न बाहर सुनना।

कल्पना करो कि तुम अचानक अंधे हो गए, बहरे हो गए, गूंगे हो गए। कोई ऐसी दवा तुम्हारे शरीर पर लगा दी जाए तुम्हारी त्वचा पर एनेस्थींसिया की कि शरीर बिल्कुल सुन्न हो जाए, तुम छू भी न सको, तुम स्पर्श भी न कर सको। तुम्हारे जीभ में और नाक में एनेस्थेसिक ड्रॉप्स डाल दिए जाएं, तुम्हें न कोई स्वाद आए, न कोई गंध आए, क्या तुम तब भी स्वयं के होने को न जानोगे? तुम्हारा होना तो तब भी बरकरार होगा। वही तुम्हारा अंतरस्थ अस्तित्व है। तुम्हारा होना इंद्रियों के पीछे है, केन्द्र में, इंद्रियां बाहर परिधि पर हैं। ऐसा समझें कि एक मकान मालिक अपने मकान की खिड़कियों से झांककर बाहर देखता है, एक खिड़की है आंख की खिड़की, जिसके माध्यम से हम बाहर देखते हैं। दूसरी खड़की है कान की जिसके भीतर वह मालिक आता और बाहर की आवाजें वहां से सुनता। तीसरी खिड़की है नाक की, मालिक उस खिड़की पर जाता और वहां बगीचों में सिर्फ फूलों की सुगंध आती। हमारी सारी इंद्रियां खिड़कियों के समान हैं। और मजे की बात यह है कि मालिक स्वयं को भूल गया, उसे अपना ज्ञान ही नहीं है।

तंत्र सूत्र की ये सारी विधियां, योग की सारी प्रक्रियाएं और साधना की अन्य समस्त पद्धतियां, उस मालिक की पहचान कराने के लिए हैं। यह बंदा सबको जानता है, बस खुद ही से अंजाना है। कैसे यह भीतर का साक्षी चैतन्य स्वयं के ज्ञान को प्राप्त हो? निश्चित रूप से यह ज्ञान अलग प्रकार का होगा। यह कोई ऑबजेक्टिव नॉलेज नहीं होगा, सबजेक्टिव नोइंग होगी। बाहर के विषयों को हम ऑबजेक्ट की तरह जानते हैं, भीतर हम स्वयं उस प्रकार से न जान सकेंगे। साक्षी चेतना स्वयं को सबजेक्टिविटी की भांति जानेगी, एक ऑबजेक्ट की भांति नहीं। विज्ञान जिन चीजों की खोज करता है वे सभी ऑबजेक्ट्स हैं, हमसे बाहर के विषय हैं और इसलिए विज्ञान ने जितने उपकरण बनाए हैं, वे हमारी इंद्रियों के ही एक्सटेंशन हैं। हमारी साधारण आंख थोड़ी दूर तक देखती है। दूरबीन बहुत दूर के ग्रह नक्षत्रों को देख लेती है, माइक्रोस्कोप अत्यंत सूक्ष्म कीटाणुओं को, विषाणुओं को देख लेता है, लेकिन है आंख के लेंस का ही बढ़ा हुआ रूप। कान थोड़ी दूर की आवाज सुन पाता है, टेलीफोन बहुत दूर की सुन लेता है, लेकिन है कान का ही वह फैलाव। उसकी मेकैनिजम् बिल्कुल कान जैसी ही है। हमारे कान में एक इयर ड्रम होता है, एक पतली सी झिल्ली, ध्वनि की तरंगे उससे टकराती हैं, उसके भीतर कुछ अस्थियां होती हैं और वहां से एक नर्व ब्रेन तक जाती है, तार के समान फैली हुई। उसमें इलेक्ट्रिक करंट जाता है। बाहर की आवाज आपके भीतर नहीं जाती, आवाज पहले विद्युत में परिवर्तित होती है, वह विद्युत मस्तिष्क तक जाती है। ठीक यही घटना टेलीफोन में घटती है। टेलीफोन में जब आप बोलते हैं आपकी आवाज से हुए कंपन से एक मैग्नेटिक स्क्रिन कांपती है, जिस कंपन से विद्युत उत्पन्न हो जाती है। वह विद्युत आगे तार से यात्रा करती है। बिल्कुल कान का ही एक्सटेंशन है टेलीफोन।

आंख का ही प्रतिरूप है कैमरा, कुछ भिन्न नहीं है। साधारण आंख थोड़ी दूर तक देख पाती है, टेलीविजन बहुत दूर तक देख पाता है। हो सकता है भविष्य में वैज्ञानिक ऐसे उपकरण बना लें कि आप घर बैठे–बैठे दूर के भोजन का स्वाद ले सकें। जो चैनल चाहें लगा लें, जिस फाईव स्टार होटल के मेन्यू के आइटम का आपको स्वाद लेना है वह नंबर दबाएं और स्वाद आपको आने लगे, यह संभव है। जब हम दूर का देख सकते हैं, दूर का सुन सकते हैं तो दूर का स्वाद भी ले सकेंगे, दूर की सुगंध भी ले सकेंगे, यह संभव है। प्रैक्टिकली वैज्ञानिक इसे कब कर पाते हैं, लेकिन यह जरूर संभव है। हम दूर से छू भी सकेंगे। हमारी सारी इंद्रियां विज्ञान के उपकरणों की मदद से दूर तक फैल सकती हैं। लेकिन याद रखना, जिसे हम जानेंगे वह बाह्य जगत ही होगा, वह भीतर का जगत नहीं होगा। कभी–कभी वैज्ञानिक बड़ी विचित्र घोषणा कर देते हैं, कहते हैं, हमने बहुत खोजबीन की लेकिन कहीं कोई ईश्वर नहीं मिला, कोई परमात्मा नहीं मिला, आत्मा नहीं है। चार वाक्य कहते हैं, जिसे जाना नहीं जा सकता, वह नहीं है। नास्तिकों का यही तर्क रहा है कि कहां है आत्मा? लाके दिखाओ। प्रयोगशाला में टेस्टट्यूब में बंद करके सिद्ध करो। नहीं, अगर वह टेस्टट्यूब में बंद हो गई तो फिर वह आत्मा न रही। आत्मा कभी ऑबजेक्ट नहीं बन सकती, वो हमेशा ही सबजेक्ट रहेगी और इसीलिए वैज्ञानिक कभी भी आत्मा को न जान सकेंगे। जिस दिशा में वो जानने को निकले हैं वहां आत्मा नहीं है, वहां वस्तुएं हैं, भीतर जाना होगा।

ओशो इस विधि को समझाते हुए 'दि बुक ऑफ सिक्रेट्स' के 21वें प्रवचन में कहते हैं, मन की अंतरस्थ गुफा में प्रवेश करो। जब तुम शरीर और मन दोनों से पृथक हो जाते हो, तब तुम देखते हो कि शरीर और मन दोनों ही विषय हैं, जिन्हें देखा जा सकता है और जो उन्हें देख रहा है वह उनसे पृथक और भिन्न है। अंतरस्थ अस्तित्व को विस्तार से देखो, इसका यही अर्थ है, शरीर और मन के भीतर प्रवेश। उन्हें भीतर से देखना है, तब तुम केवल साक्षी हो और इस साक्षी में प्रवेश नहीं हो सकता है। इसी से यह तुम्हारा अंतर्तम है, यही तुम्हारा स्वभाव है। जिसमें प्रवेश किया जा सके, जिसे देखा जा सके, वह तुम नहीं हो। जब तुम वहां आ गए जिससे आगे नहीं जाया जा सकता, जिसके पार नहीं जाया जा सकता, जिसे देखा नहीं जा सकता तभी समझना कि तुम अपने सच्चे स्वभाव के पास, अपनी आत्मा के पास पहुंचे। याद रखना, साक्षी के साक्षी नहीं हो सकते। नास्तिकों का चार वाक्यों का यह कहना कि मैं नहीं हूं, यह बात बड़ी ही मूर्खतापूर्ण है। वैज्ञानिक कह रहा है कि जो मैंने जाना लेबोरेट्री में वही सब सत्य है और जो जान रहा है वह? यदि वही असत्य है, वैज्ञानिक का स्वयं का होना ही अगर असत्य है तो जिसे वह जान रहा है, वह सत्य कैसा होगा? अगर वैज्ञानिक स्वयं ही स्वप्न के नाटक का एक हिस्सा है तो वह नाटक का पात्र, स्वप्नपात्र जो जानेगा वह सत्य कैसा हो सकता है, असंभव। नहीं, अपने शरीर के भीतर जानना है, मन के भीतर

जानना है और तब उस साक्षी चैतन्य में हम पहुंच जाते हैं, जो कि हमारा स्वयं का होना है।

बाहर के एक उदाहरण से समझाऊं, बाहर की दुनिया में रोशनी है, आप कहेंगे हां, हमने रोशनी देखी। मैं आपसे कहना चाहूंगा वैज्ञानिक आधार पर आपने प्रकाश को कभी भी नहीं देखा है, प्रकाश को कोई देख ही नहीं सकता है। हम केवल प्रकाश के स्रोत को और प्रकाशित वस्तुओं को देख सकते हैं। पृथ्वी के चारों तरफ से रात को भी बड़ी तीव्र प्रकाश की किरणें गुजरती हैं, किन्तु हमें दिखाई नहीं देती क्योंकि कोई उस प्रकाश के रास्ते में ऑबजेक्ट नहीं आता। हां, अगर चंद्रमा रास्ते में आ जाए तो चांदनी रात हो जाती है। लेकिन याद रखना, चंद्रमा जब नहीं है अमावस की रात को तब भी सूरज की किरणें वहां से गुजर रही हैं, लेकिन कोई प्रतिबिंबित करने वाला, रिफ्लेक्ट करने वाला, उसको परावर्तित करने वाला वहां नहीं है, इसलिए वे हमें दिखाई न देंगी। प्रकाश को हम सीधा देख ही नहीं सकते। इसलिए याद रखना, आत्मज्ञान विषयरहित चैतन्य का बोध है। वह कोई ऑबजेक्ट नहीं है।

मन और शरीर के घट के हम वासी हैं, भीतर से इन्हें हम जान सकते हैं और इसलिए इनसे हम पृथक हैं। जिसने अपने इस अमृतस्वरूप को जान लिया फिर उसकी कभी मृत्यु नहीं होती। शरीर तो मरता है बुद्ध का भी, महावीर का भी लेकिन उनकी मृत्यु साधारण मृत्यु नहीं होती। महावीर की मृत्यु को हम निर्वाण कहते हैं, बुद्ध की मृत्यु को हम निर्वाण कहते हैं। क्योंकि वे स्वयं के अमृतस्वरूप से परिचित हो गए। तुम स्वयं परमात्मा हो, अपने भीतर चलो। शिव पार्वती को ये सारी विधियां दे रहे हैं, अपने भीतर जाने की। 'खुदा' ऐसे एहसास का नाम है जो खुद के भीतर बसा हो पर दिखाई न दे। उसे देखने की कोशिश मत करना। वह दिखाई नहीं देता फिर भी जाना जाता है। वह सुनाई नहीं देता फिर भी सुना जाता है। बड़ा विरोधाभासी वक्तव्य कहना पड़ता है। वह जाना भी जाता है फिर भी अंजाना रह जाता है, इसलिए उसको अज्ञेय कहते हैं, अकथनीय कहते हैं, अनिर्वचनीय कहते हैं, अगम और अगोचर कहते हैं। आओ खुद के भीतर बसे उस खुदा को जानने के लिए चलते हैं। माँ ओशो प्रिया के साथ ध्यान का प्रयोग करेंगे। धन्यवाद!

माँ ओशो प्रिया : खड़े हो जाएं, आंखें खुली रखें और पूरे शरीर को कंपित करें, संगीत की धुन पर। कंपन के साथ शरीर का एहसास, शुरू करें कंपन ...... स्टॉप। आंखें बंद कर लें। कल्पना करें कि आप अंधे हो गए हैं, अपने शरीर को अब भीतर से देखना है। बैठ कर अब अंगूठे को देखना शुरू करें। बंद आंखों से पैर के अंगूठे को देख रहे हैं। क्रमशः पूरे शरीर को भीतर से देखें। अंतर्दर्शन के द्वारा शरीर का तादात्म्य टूट गया। आप शरीर नहीं, शरीर के द्रष्टा हैं, शरीर को महसूस करने वाले, शरीर को देखने वाले हैं, द्रष्टा मात्र। धीरे से बैठ जाएं, आंखें बंद रहेंगी। अंतर्दर्शन के द्वारा शरीर से तादात्म्य टूटा, अब मन से भी तादात्म्य तोड़ लें। भीतर विचार चल रहे हैं। आप विचार नहीं हैं, आप विचार के देखने वाले हैं, आप

विचार के द्रष्टा हैं। विचारों से तादात्म्य टूटा, शरीर से तादात्म्य टूटा, मन से तादात्म्य टूटा। अब अंतिम चरण है लेट जाएं शवासन में। जिसे देखा नहीं जा सकता, वह तुम हीं हो, साक्षी के साक्षी नहीं हो सकते। जो देख रहा है उसे कैसे देखोगे? आत्मा का दर्शन कैसे होगा? तुम ज्ञाता हो, तुम द्रष्टा हो। दृष्य नहीं हो, ज्ञेय नहीं हो, द्रष्टा हो, ज्ञाता हो। यहीं तुम्हारा सच्चा स्वभाव है। अपने इस सच्चे स्वभाव में डुबकी लगाएं। गहरे, और गहरे, और गहरे।

दृ धीरे–धीरे ध्यान से वापस लौटें। आज का ध्यान यहीं पूरा होता है।

हरि ओम् तत्सत्!

बोध को उपलब्ध हो जाओ–31

किसी कटोरे को उसके पार्श्वभाग या पदार्थ को देखे बिना देखो। थोड़े ही समय में बोध को उपलब्ध हो जाओगे।

जिसका कोई भी नहीं उसका खुदा है यारों,
मैं नहीं कहता किताबों में लिखा है यारों।
मैं अंधेरे में रहूं या कि उजाले में रहूं,
ऐसा लगता है कोई देख रहा है यारों।
मुड़ के देखूं तो किधर और सदा दूं तो किसे,
तुमने तो मुझे तन्हां छोड़ दिया है यारों।
इंतजार आज के दिन का था बड़ी मुद्दत से,
बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारों।
ऐसा लगता है कोई देख रहा है यारों।

हमारे भीतर जो देखने वाला तत्व है, वह साक्षी ही परमात्मा है। वही सर्वद्रष्टा है, ओमनीसिएंट। लेकिन देखने की कला हम भूल गए हैं। सामान्यतः जब हम देखते हैं, हमें इस देखने वाले का बिल्कुल स्मरण नहीं आता। हम दृश्य में खो जाते हैं और द्रष्टा को भूल जाते हैं। देखने की एक नई कला सीखनी होगी। योग की विधियों में और तंत्र की विधियों में देखने की कला पर बड़ा जोर है। त्राटक की विभिन्न विधियां उपयोग में सदा से लायी जाती रही हैं और बड़ी प्रसिद्ध ध्यान की विधियां रही हैं, बड़ी सरल और आसान भी। बहुतों के द्वारा उपयोग में लाई गयीं। आज विज्ञान भैरव तंत्र के 31वीं विधि में भगवान शिव कहते हैं पार्वती से– किसी कटोरे को उसके पार्श्वभाग या पदार्थ को देखे बिना देखो, थोड़े ही समय में बोध को उपलब्ध हो जाओ। देखने की यह सरल सी तरकीब अनफोकस्ड विजन, बिना आंखों को केंद्रित करे देखना। कटोरा या गिलास या कोई भी बर्तन या कोई भी वस्तु इससे फर्क नहीं पड़ता वह क्या है? दृश्य कोई भी हो, उसके किसी एक खास हिस्से को मत देखना। उस पूरे बर्तन को देखना उसकी संपूर्णता में, उसकी समग्रता में, टोटलिटी में देखना।

कभी आप गौर करना छोटे बच्चे लगभग सात–आठ माह की उम्र तक आंखों को फोकस नहीं कर पाते, वे पूरे दृश्य को इकट्ठा देखते हैं। धीरे–धीरे उनकी आंखें फोकस्ड होना शुरू होती हैं। जब दो माह का छोटा बच्चा अपनी माँ को देख रहा है तो वह विभाजन नहीं कर पाता कि यह माँ है या उसके बगल में रखी टेबल है, ये कुर्सी है। उसको टेबल, कुर्सी, माँ, दीवालघड़ी, फ्रिज ये पूरा दृश्य इकट्ठा दिखाई देता है। वह भेद नहीं कर पाता कि ये अलग–अलग चीजें हैं। ये सारे भेद उसे बाद में दिखने शुरू होंगे। अगर अभेद में और अद्वैत में जाना है, फिर वापस छोटे बच्चों जैसी आंखें पैदा कर लेना। ये आंखें कभी तुम सबके पास थीं। सिर्फ याद करने की जरूरत है देखने का वह ढंग, बिना फोकस किए देखना। यह त्राटक से बिल्कुल अलग है। त्राटक में हम फोकस करके देखते हैं, इसमें अनफोकस्ड विजन रखना है, चौड़ी फैली हुई दृष्टि । एक अंग को नहीं, पूरे को। समझो कि आप सड़क के किनारे खड़े हैं, भीड़ गुजर रही है। आप एक–एक व्यक्ति के चेहरे को न देखें इस पूरे समूह को अगर इकट्ठा देखेंगे तो कैसे देखेंगे? रात आकाश में बहुत सितारे चमक रहे हैं, किसी एक तारे पर नजर न गड़ाएं, अगर आप पूरे आकाश को इकट्ठा देखेंगे तो कैसे देखेंगे? बड़ा अद्भुत प्रयोग है और कभी करके देखना। यहां इतने लोग बैठे हुए हैं किसी व्यक्ति पर नजर को गड़ाओ मत, पूरे समूह को इकट्ठा देखो और तुम पाओगे जैसे ही तुम्हारी आंख बिना फोकस की हुई, अचानक भीतर निर्विचार हो गए। जब बिना फोकस के देखोगे तो तुम्हारे आंख की पुतलियों की गति रुक जाएगी और उस गति के थमने के साथ ही भीतर विचारों का प्रवाह भी थम जाएगा। उनका आपस में एसोसिएशन हो गया है।

आपने रूस के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक पावलफ का प्रयोग सुना होगा। जहां कुत्तों को वह

रोटी देता था और साथ में घंटी बजाता था। धीरे–धीरे रोटी और घंटी की आवाज आपस में संयुक्त हो गए, एसोसिएटेड हो गए। फिर एक दिन पावलफ ने सिर्फ घंटी बजाई और भोजन नहीं दिया और कुत्ते ऐसा व्यवहार करने लगे जैसे कि उन्हें भोजन मिला हो। उनकी जीभें बाहर निकल आईं, लार टपकने लगीं, वे खाना खाने को उत्तेजित हो गए और खाना वहां था ही नहीं, सिर्फ घंटी की आवाज। किसी अन्य कुत्ते को घंटी की आवाज सुनके ऐसा नहीं होगा, लेकिन पावलफ के कुत्ते एक महीने के प्रयोग में कंडीशन्ड रिलैक्स से भर गए। घंटी की आवाज भोजन का पर्यायवाची हो गई उनके लिए, एसोसिएटेड हो गई। ठीक इसी प्रकार हमारे भीतर भी बहुत सी चीजें आपस में एसोसिएटेड हैं। आंख की गति, श्वास की गति और विचारों कि गति, इनका आपस में एसोसिएशन हो गया है। छोटा बच्चा जब तक अनफोकस्ड विजन से देखता था, तब तक उसके भीतर विचार भी नहीं चलते थे। फिर जैसे–जैसे वह भाषा सीखा, शब्द सीखा वह विचार करने लगा वैसे–वैसे उसके भीतर आंखों की गति भी फोकस ढंग की होने लगी। जैसे ही हम अनफोकस्ड विजन से देखेंगे, भीतर अचानक निर्विचार शून्य उत्पन्न हो जाएगा और उस शून्यता में ही भीतर के द्रष्टा का अहसास होगा। ऐसा लगता है कि कोई देख रहा है यारो, बन गया जीवन मंदिर का दीया है यारो। तब तुम पाओगे तुम्हारे शरीर रूपी मंदिर के भीतर चेतना का दीया जल रहा है। उस चैतन्य को जानना ही अध्यात्म का लक्ष्य है।

मैंने सुना है कि विचित्तर सिंह अपने मित्र मुल्ला नसरुद्दीन के साथ किसी होटल में गए। जिस टेबल पर वे बैठे थे वहां पर गिलास उल्टा रखा हुआ था। नसरुद्दीन ने गिलास उठाया गौर से उसकी तरफ देखा और कहा कि हद हो गई, इस गिलास का मुंह ही नहीं है इसमें पानी कहां से डालेंगे। नसरुद्दीन ने कहा लाओ मुझे दिखाओ, नसरुद्दीन ने उसे उलटाकर देखा उसने कहा हद हो गई इसमें पेंदी भी नहीं है। पानी भर भी दो तो टिकेगा नहीं। देखने की एक नई कला और नई शैली विकसित करनी होगी। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, मैं तुम सभी को दो ढंगो से देख सकता हूं। एक तरफ से देखता हुआ आगे बढ़ सकता हूं, पहले अ को देखूं, फिर ब को, फिर स को इस तरह से आगे बढ़ता जाऊं लेकिन अब मैं अ, ब अथवा स को देख रहा हूं, तो मैं उपस्थित नहीं रहता हूं। मैं स्वयं को भूल जाता हूं। यदि उपस्थित भी रहूं तो किनारे पर, परिधि पर गौण रूप से और उस हालत में मेरी दृष्टि एकाग्र और समग्र नहीं रह पाती। क्योंकि जब मैं ब को देखता हूं तो अ से हट जाता हूं और जब स को देखता हूं तो अ पूरी तरह खो जाता है, मेरी निगाह से बाहर चला जाता है।

इस समूह को देखने का एक ढंग यह भी है कि मैं इस पूरे समूह में व्यक्तियों को इकाइयों में बांटे बगैर संपूर्ण रूप से देखूं। इसका प्रयोग करो, पहले किसी चीज को अंश–अंश में देखो। एक अंश के बाद दूसरे अंश को और तब अचानक उसे पूरे का पूरा देखो,

बिना टुकड़ों में बांटे। जब तुम किसी चीज को पूरा देखते हो तो आंखों को गति करने की जरूरत नहीं रह जाती। आंखों में गति करने का मौका न मिले इस उद्देश्य से ही ये शर्तें रखी गई हैं। पूरे विषय को उसकी समग्रता में पूरे का पूरा देखो। तुम्हें समग्र के साथ रहना है और रूप के साथ रहना है। तब तुम स्वयं को अपने को जान लोगे। क्योंकि जब आंखे गति नहीं कर सकती और आंखों को गति करने की जरूरत नहीं तब तुम्हारी दृष्टि स्वयं पर लौट आएगी। दृष्टि अंतर्यात्रा करेगी, स्रोत पर वापिस लौट आएगी क्योंकि दृष्टि की आदत है यात्रा करना। अगर तुम बाहर यात्रा नहीं कर रहे तो तुम्हारी अंतर्यात्रा शुरू हो जाएगी। और पहली बार तुम आत्मवान बनोगे और जानोगे कि तुम कौन हो? बहुत अद्भुत है यह विधि और बहुत आसान भी। अलग से समय देने की जरूरत नहीं, कहीं भी घर में, ऑफिस में, सड़क पर चलते हुए, बस या ट्रेन में यात्रा करते हुए, इसका प्रयोग कर सकते हो। किसी को बाहर से पता भी नहीं चलेगा कि तुम कुछ खास कर रहे हो। सामान्यतः ध्यान करने के लिए आंख बंद करने की जरूरत होती है। इस विधि में तो आंख भी बंद करने की जरूरत नहीं। अपने सामान्य क्रियाकलापों को करते–करते इस ध्यान विधि का प्रयोग किया जा सकता है।

कुछ बातें और समझना। सामान्यतः जब हम किसी कटोरी को देखें या किसी भी पात्र को देखें हम विचार करने लगते हैं कि स्टील का है कि तांबे का है, कि पीतल का है, कि सोने–चांदी का है हम उसके पदार्थ को देखने लगते हैं। हम उसके शेप को, उसकी आकृति को देखने लगते हैं। हमारे भीतर तुरंत विचार चलने लगते हैं कि ये सुंदर है, कि नहीं है, ऐसा नहीं होना चाहिए था, वैसा नहीं होना चाहिए था। अभी मैंने कहा न नसरुद्दीन और विचित्तर सिंह का चुटकुला। हम किसी चीज को देखते नहीं कि तुरंत हमारे भीतर विचारों कि धारा शुरू हो जाती है। इस विचारों कि धारा को रोकना, सीधे चीजों को देखना बस, जैसी वे हैं, बिना विचारे। अविभाजित ढंग से खण्डों में बिना तोड़े और तुम्हें बड़ा मजा आने लगेगा, जल्दी ही तुम आनंद से ओत–प्रोत हो जाओगे। पदार्थ का स्थूल रूप तो खो जाएगा, उसके भीतर का अरूप, उसके भीतर का शून्य दिखाई पड़ने लगेगा। उसकी आकृति तो खो जाएगी, उसके भीतर निराकार का दर्शन होने लगेगा। और तब अपने भीतर भी वही अरूप और निराकार दिखाई देने लगेगा। चूंकि हमें इसकी आदत नहीं है। शुरुआत में प्रयोग करने पर तुम्हें अजीब और विचित्र सा लगेगा। चिंता नहीं करना, करते जाना।

गेस्टाल्ट साइकोलॉजी का आपने चित्र देखा होगा। अक्सर बच्चों की किताब में रहते हैं। एक ही चित्र है उसमें एक बूढ़ी स्त्री भी है और एक युवा स्त्री भी है। लेकिन अगर तुम एक को देखो तो दूसरी नहीं दिखाई देती, दूसरी को देखो तो पहली नहीं दिखाई देती। ठीक ऐसे ही यह सारा जगत है। संसार और परमात्मा दो नहीं हैं, एक ही सत्य को देखने के दो ढंग हैं। जब तुम विचारों से भरकर देखते हो, मन के माध्यम से, तो संसार नजर आता है। जब तुम

निर्विचार, शून्य होकर देखते हो खाली आंख, खाली मन, तब परमात्मा नजर आता है। एक अर्थ में शंकराचार्य भी ठीक कहते हैं कि जगत माया है, ब्रम्ह सत्य है और दूसरे अर्थों में कार्लमार्क्स भी ठीक कहता है कि केवल जगत ही सत्य है, कहीं कोई ईश्वर नहीं है। लेकिन याद रखना दोनों अधूरी-अधूरी बातें कह रहे हैं। इनका गेस्टाल्ट फिक्स हो गया है। शंकर कह रहे हैं केवल परमात्मा है, पदार्थ नहीं है। मार्क्स कह रहा है सब कुछ पदार्थ है, कहीं कोई परमात्मा नहीं है। ओशो हमसे और अतिक्रमण करने वाली बात कहते हैं। ओशो की क्रांतिकारी दृष्टि, वे कहते हैं परमात्मा भी है, संसार भी है और दो नहीं हैं, एक ही है। हमारे देखने के दो ढंग हैं। सत्य एक ही है। निर्विचार ध्यान से देखो तो परमात्मा, विचार और मन के माध्यम से देखो तो पदार्थ। इसलिए देखने की ये विधियां जो शिव पार्वती को दे रहे हैं, बड़ी अद्भुत हैं। आओ माँ ओशो प्रिया के साथ इस कटोरे देखने वाले प्रयोग को हम करते हैं।

धन्यवाद!

माँ ओशो प्रिया : सामने हथेली पर रखे पात्र को देखें। दृष्टि अकेन्द्रित रखें, द्रष्टा का एहसास करें, डबल ऐरोड कॉन्शसनेस, चेतना की दोधारी तलवार। विश्रामपूर्वक लेट कर, आंख बंद कर आत्मरमण करें, आत्मबोध को उपलब्ध हो जाएं।

.... धीरे-धीरे ध्यान से वापस आएं!

हरि ओम् तत्सत्!
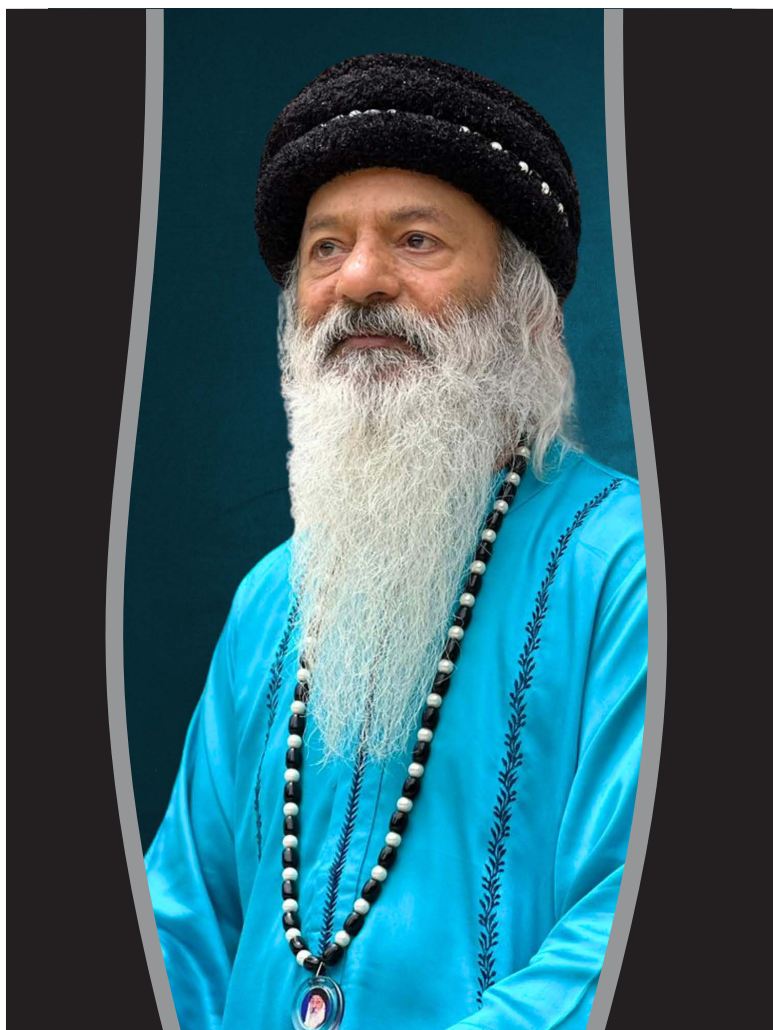
जैसे पहली बार देख रहे...!–32

किसी सुंदर व्यक्ति या सामान्य विषय को ऐसे देखो जैसे पहली बार देख रहे हो।

आज की विधि देखने की कला पर निर्भर है। आश्चर्य से भरकर, प्रेम से भरकर देखने की कला। किसी गीतकार ने लिखा है–

छोटा करके देखिए जीवन का विस्तार,
आंखों भर आकाश है बाहों भर संसार।
चाहे गीता बांचिए या पढ़िए कुरान,
तेरा–मेरा प्यार ही हर पुस्तक का ज्ञान।

जब हम प्रेमपूर्वक, भावपूर्वक किसी को देखते हैं, सच पूछो तो केवल तभी हम देखते हैं। जहां प्रेम का तत्व नहीं है, याद रखना वहां भीतर संवेदनशीलता नहीं है और होश का तत्व भी नहीं है। जिससे हमें प्रेम नहीं है उसकी तरफ हम ध्यानपूर्वक देखते ही नहीं, सिर्फ आंखें बचाते हैं। इसलिए जब कोई नया व्यक्ति मिलता है, शायद पहली बार आश्चर्य से भरके हम देखते हैं। उस आश्चर्य के कारण, उस जीवंतता और संवेदनशीलता की वजह से प्रेम उत्पन्न

होता है। फिर वहीं व्यक्ति परिचित हो जाता है, पुराना हो जाता है, फिर हम उसकी तरफ देखते ही नहीं। फिर हम सोचते हैं कि इस व्यक्ति से पहले तो बड़ा आनंद आया था, अब क्यों नहीं आता? क्या यह प्रेमी या प्रेमिका धोखा दे गया। पति या पत्नी बनने के बाद, वैसा सुख इस व्यक्ति से नहीं मिलता। नहीं, सुख का कारण वह दूसरा व्यक्ति नहीं, सुख का कारण यह था कि जब प्रथम मिलन हुआ था, तब हम बहुत आश्चर्य से भरे, नए के प्रति जागरूक थे। उस जागरूकता से आनंद फलित हुआ था। फिर जब सब चीजें पुरानी हो गईं, स्मृतियां बीच में आ गईं, अतीत का बोझ सिर पर लद गया, तब हमने देखना ही बंद कर दिया।

आज की विधि में भगवान शिव पार्वती से कहते हैं– किसी सुंदर व्यक्ति या सामान्य विषय को ऐसे देखो जैसे पहली बार देख रहे हो। बड़ी सरल छोटी–सी विधि है किन्तु आश्चर्यजनक है, करके देखना। बड़े विराट इसके परिणाम होंगे। हमारी आंख भिन्न–भिन्न परिस्थितियों में भिन्न–भिन्न व्यवहार करती है। जब हम प्रेम और आश्चर्यभाव से भरे होते हैं, आंख की पुतलियां फैल जाती हैं। जब हम ऊबे, थके, उदास होते हैं, सबकुछ पुराना होता है, बासा होता है, तब आंख की पुतलियां सिकुड़ जाती हैं। वे उस दृश्य को भीतर ले जाना ही नहीं चाहती हैं। वे लोग जो कहते हैं कि ब्रम्हचर्य को उपलब्ध हो गए हैं, उनके सामने से एक सुंदर स्त्री को गुजारो और उनकी आंखों का निरीक्षण करो, तो पता लग जाएगा, वे भी सौंदर्य से प्रभावित हुए। जब एक सुंदर स्त्री निकली, उनकी आंख की पुतलियां फैल गईं। हमारी आंखें भिन्न–भिन्न व्यवहार करती हैं। आंखों के रहस्य को जानकर, देखने की कला हम सीख सकते हैं। वैज्ञानिकों ने एक मशीन बनाई है, आंखों की गति नापने की। उसे वे कहते हैं, 'आर इ एम ग्राफ'। आर इ एम ग्राफ रिकॉर्डर के द्वारा आंख की पुतलियों की गति नापी जाती है। कोई व्यक्ति सो रहा है, वह सपना देख रहा है कि नहीं, यह भी पता लगाया जा सकता है। विचार जागृत अवस्था में देखे गए स्वप्न हैं और स्वप्न निद्रा में चल रहे विचार हैं, उनमें कुछ ज्यादा भेद नहीं है। सुषुप्ति में हमारी पुतलियां स्थिर हो जाती हैं। काश, जाग्रत अवस्था में हम अपनी पुतलियों को स्थिर कर सकें। इसलिए ध्यान में त्राटक का, पुतलियों को स्थिर करने का इतना उपयोग है।

आज की विधि में शिव कह रहे हैं, ऐसे देखो जैसे पहली बार देख रहे हो। दुबारा तो फिर हम किसी को देखते ही नहीं। अभी आप, अपने घर जाएंगे, कमरे का दरवाजा खोलेंगे। ऐसे खोलेंगे कि जैसे पहले हजारों बार खोल चुके हों। इस दरवाजे को आप देखेंगे ही नहीं, बिल्कुल जैसे नशे में हों। घर में आपके बच्चे हैं, परिवारजन हैं उनसे आप ऐसे मिलेंगे जैसे आप मिले ही नहीं। मिलना हो ही नहीं पाता, पहली बार जरूर मिलना हुआ था। जब आपके घर में नया बच्चा पैदा हुआ था, आपने गौर से उसे देखा था। फिर धीरे–धीरे, बड़ा होते–होते

वह युवक हो गया। कितने साल हो गए आपने अपने बेटे को गौर से नहीं देखा। उसने अपने पिता को गौर से नहीं देखा। रोज सब चीजें बदल रही हैं। कहावत है कि सूरज के नीचे कुछ भी नया नहीं। यह कहावत बिल्कुल गलत है। सूरज के नीचे प्रतिक्षण सबकुछ नया है। आपका बेटा जो कल था वह आज नहीं है। आपकी पत्नी जैसी कल थी वैसी आज नहीं है। चौबीस घंटे बीत गए, गंगा में बहुत पानी बह गया। लेकिन हम सब चीजों को पुराना और बासा करके देखते हैं। हर चीज के ऊपर अतीत की धूल जमती चली जाती है। शिव कह रहे हैं, इस धूल को झाड़ो।

इस विधि पर प्रवचन देते हुए ओशो ने कहा, यह विधि तुम्हारी आंखों को ताजा और जीवन्त बना देंगी। इतना ताजा व जीवन्त कि वे भीतर मुड़ सकें और तुम अपने अंतरस्थ को देख लो। लेकिन ऐसे देखो मानो पहली बार देख रहे हो। इस बात को ख्याल में रख लो कि किसी चीज को ऐसे देखना है जैसे कि पहली बार देख रहे हो। और तब अचानक किसी समय तुम चकित रह जाओगे कि कैसा सौंदर्य भरा संसार तुम चूके जा रहे थे। अचानक होश से भर जाओ और अपनी पत्नी को देखो। ऐसे कि पहली बार देख रहे हो। और अचरज नहीं कि तुम उसके प्रति फिर उसी प्रेम से भर जाओगे, जिसका उद्वेग पहली बार, पहले मिलन में हुआ था। ऊर्जा की वही लहर, आकर्षण की वही पूर्णता तुम्हें अभिभूत कर देगी, लेकिन किसी सुंदर व्यक्ति या सामान्य विषय को ऐसे देखो जैसे कि पहली बार देख रहे हो। इससे क्या होगा? तुम्हारी दृष्टि तुम्हें वापिस मिल जाएगी। तुम्हारी बचपन वाली दृष्टि।

फिलहाल तुम अंधे हो। अभी जैसे तुम जी रहे हो करीब-करीब तुम अंधे ही हो। और यह मानसिक अंधापन शारीरिक अंधेपन से ज्यादा घातक है क्योंकि आंखों के रहते हुए भी तुम नहीं देख रहे। जीसस बार-बार कहते हैं जिनके पास आंखें हों वह देख लें और जिनके पास कान हो वे सुन लें। क्या वे अंधों, गूंगों और बहरों के बीच बोल रहे थे। नहीं, लेकिन इस बात को वे बार-बार दोहराते हैं। क्या वे किसी अंधो की संस्था के अधीक्षक थे? वह कहे ही चले जाते हैं कि देखो, अगर तुम्हारे पास आंखें हैं। सुनो, अगर तुम्हारे पास कान हैं। वे हम जैसे सामान्य लोगों से ही बोल रहे थे फिर भी आंखों के और कानों के होने पर इतना जोर क्यों देते हैं। वे उस आंख और उस कान की बात कर रहे हैं जो तुम्हें इस विधि के प्रयोग द्वारा मिल सकती है। जो भी चीज दिखाई पड़े, ऐसे देखो कि जैसे पहली बार देख रहे हो। इसे अपनी सतत स्थाई दृष्टि बना लो।

किसी चीज को ऐसे छुओ जैसे कि पहली बार स्पर्श कर रहे हो। तब क्या होगा? अगर तुम ऐसा कर सके तो तुम अपने अतीत से मुक्त हो जाओगे। अतीत के बोझ, उसकी गंदगी, उसके संग्रहीत अनुभव, उसकी गंभीरता, उन सब से मुक्त हो जाओगे। प्रत्येक क्षण अपने

अतीत से स्वयं को तोड़ते चलो। अतीत को अपने भीतर प्रवेश मत करने दो, अतीत को अपने साथ मत ढोओ, अतीत के बोझ को छोड़ते चलो और प्रत्येक चीज को ऐसे देखो कि जैसे

बादलों के पार नीलाकाश–33

बादलों के पार नीले आकाश को देखने मात्र से शांति और सौम्यता को उपलब्ध होओ।

भगवान शिव कहते हैं पार्वती से, बादलों के पार नीले आकाश को देखने मात्र से शांति और सौम्यता को उपलब्ध होओ। सुनने में बड़ी सरल लगती है विधि। इसके पहले कि हम इस विधि को समझें और करें, थोड़ी सी भूमिका की बातें मुख्य रूप से तीन बातें। यह भूमिका पूरी हों तभी तंत्र की विधियां कारगर होंगी। सबसे पहली बात अपनी मृत्यु को आसन्न जानो। हम हमेशा ऐसा सोच कर चलते हैं कि मृत्यु कभी भविष्य में होगी, बहुत दूर। और अगर कोई चीज बहुत दूर हो फिर हम उससे प्रभावित नहीं होते। मैं आपसे कहूं कि दो सौ साल बाद पृथ्वी में एक विस्फोट होगा, आप कहेंगे होगा जब होगा। दो सौ साल बाद की, दूर की कौन चिंता करता है? बीस साल बाद कोई दुर्घटना होने वाली है, उसकी बात करूं, आप कहेंगे जब होगी तब देखेंगे। नहीं, मृत्यु को आसन्न जानो कि बस होने ही वाली है, कौन जाने यह क्षण आखिरी क्षण हो। आज छः अरब लोग हैं इस दुनिया में, लगभग सवा दो लाख लोग प्रतिदिन मरते हैं। उन मरने वालों की गिनती में किस दिन हमारा नाम होगा हम जानते भी नहीं। मैं आपसे अभी बात कर रहा हूं, कुछ कह रहा हूं क्या

कोई गारंटी ले सकता है कि इस बात को पूरा कर पाऊंगा, क्या ये संभव नहीं कि बीच में ही हार्टअटैक हो जाए और वाक्य अधूरा ही रह जाए। आखिर किसी न किसी दिन तो ऐसा होगा ही, आज भी हो सकता है। जो व्यक्ति मृत्यु को निकट जानता है उसके जीवन में क्रांति घटित होना शुरू हो जाती है।

दूसरी बात, जीवन में हमेशा नए–नए उद्देश्य पैदा मत किए जाओ। देखते हैं लोगों को, उनके अपने लक्ष्य, अपने टारगेट्स हैं। यही उनके माता–पिता के थे, यही उनके दादा–दादी के थे और यही उनके बच्चों के होंगे। एक बार ओशो के पास कोई व्यक्ति आए, पति–पत्नी दोंनो साथ थे, कहने लगे कि अब तो हमारी जिंदगी पूरी हो गई है, मगर बच्चों की खातिर जी रहे हैं। बच्चों को खूब अच्छे से पढ़ाना–लिखाना है, इनको आई.ए.एस. ऑफिसर बनाना है, बस जीवन का यही उद्देश्य है। फिर बीस साल बाद की घटना है, ओशो उनके बच्चों से मिले, वे आई ए एस ऑफीसर बन चुके थे, वे ऊंचे पदों पर थे। ओशो ने कहा, तुम्हारे माता–पिता मर गए, तुम्हें इतने ऊंचे पद पर अफसर बनाने के लिए, क्या तुम प्रसन्न हो? वे कहने लगे नहीं, हमारे जो बच्चे हैं, हम चाहते हैं वे विदेश पढ़ने चले जाएं। इस देश में तो कोई ऊंची शिक्षा होती नहीं, एक बार अमेरिका या कनाडा पहुंच जाएं, बच्चे वहां सेटल हो जाएं, फिर हम समझेंगे कि हमारी जिंदगी का उद्देश्य पूरा हो गया। संयोग की बात और बीस साल बाद, उस तीसरी पीढ़ी से भी मिलना हुआ। ओशो ने पूछा कि तुम लोग तृप्त हो, तुम्हारी पिछली दो पीढ़ियों को मैं जानता हूं। वे कहने लगे नहीं, सैटल तो हो गए हैं अमेरिका में किन्तु बड़ी मुश्किल है हमारे बच्चे नशीले द्रव्यों के आदी हो गए हैं। बहू सिगरेट पीती है और बहू के जो बच्चे हैं उनका तो पढ़ने–लिखने में कोई मन ही नहीं लगता है। भारतीय संस्कृति बिल्कुल भूल ही गए हैं। अब तो एक ही उद्देश्य है, किसी प्रकार ये लोग भारत लौट आएं, फिर से भारतीय संस्कृति और धर्म को अपनाएं, ये पश्चिमी सभ्यता छोड़ें। देखते हैं इन तीन पीढ़ियों की कहानी, प्रत्येक व्यक्ति सोच रहा है कि उसके जीवन का एक बड़ा महान् उद्देश्य है।

लेकिन उस छोटी घटना को छोड़ो। थोड़े विहंगम दृष्टि से, थोड़ा ऊपर उठकर देखो, आखिर तुम कर क्या रहे हो? पीढ़ी दर पीढ़ी पूरी मनुष्य जाति कर क्या रही है? जीवन का उद्देश्य क्या है और अचानक तुम पाओगे कि सब बिल्कुल निरर्थक है, कुछ भी उद्देश्य नहीं है। मैंने सुनी है कहानी, सिकंदर के बारे में जब विश्वविजय की यात्रा पर निकलता था। डायोज़निज नाम के एक फकीर ने पूछा कि तुम विश्वविजय प्राप्त कर के करोगे क्या? सिकंदर थोड़ा हैरान हुआ, यह सवाल कभी उसके मन में उठा न था। उसने कहा कि विश्वविजय प्राप्त करके फिर आराम करूंगा। डायोज़निज खूब हंसने लगा, उसने कहा आराम करने के लिए, विश्वविजेता बनने की क्या जरूरत? हमको देखो, नंग–धड़ंग अभी यहीं आराम कर रहे हैं। कौन रोक रहा है, आराम करने से। हम जबरदस्ती अपने जीवन में

उद्देश्य पैदा किए जाते हैं। किसी आदमी ने सोचा था कि 10 लाख रुपए हो जाएंगे फिर चैन से रहेगा। लेकिन मुझे पक्का पता है वह नहीं रहेगा। जब उसके पास दस लाख होंगे, वह बीस लाख का लक्ष्य बना लेगा। जब बीस लाख होंगे तब वह चालीस लाख का लक्ष्य बना लेगा। निरंतर लक्ष्य, हमेशा दौड़, हमेशा कोई कामना। तो पहली बात मृत्यु को आसन्न जानो, दूसरा निरंतर नए–नए लक्ष्य पैदा मत किए जाओ और तीसरी इससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण बात अपनी भूलों से कुछ सीखो।

हम बहुत विचित्र हैं, अपनी भूलों से कुछ सीखते ही नहीं। कल क्रोध किया था फिर पश्चाताप किया, कि भूल हो गई क्रोध नहीं करना चाहिए। लेकिन ऐसा पिछले चालीस साल में हजारों बार हो चुका। आज फिर क्रोध होगा, आज फिर पश्चाताप होगा। कल भी क्रोध होगा, कल भी पश्चाताप होगा। बार–बार वासना पकड़ेगी हर बार वासना से गुजरने के बाद विषाद घेरेगा। ऐसा सैकड़ों बार हो चुका और आगे फिर सैकड़ों बार होगा। कितनी भूलें हैं अगर गिनती करोगे तो ज्यादा नहीं, वही के वही गढ्ढे हैं जिनमें हम बारंबार गिरते हैं। जो व्यक्ति अपनी भूलों से कुछ सीखता नहीं, अनुभव के ऊपर आशा की विजय जिसे मिलती जाती है, वह कभी जीवन रूपान्तरण से न गुजर पाएगा। ये शब्द याद रखना, अनुभव के ऊपर आशा की विजय। हमारा अनुभव तो बता रहा है कि कुछ गलत है लेकिन हम फिर भी आशा किए जा रहे हैं कि बस बहुत सुंदर कुछ होने वाला है। कब से यह आशा चल रही है? बुद्धिमान आदमी का लक्षण है, आशा के ऊपर अनुभव की विजय और मूढ़ व्यक्ति का लक्षण है अनुभव के ऊपर आशा की विजय। तो ये तीन बातें मैंने कहीं। आसन्न मृत्यु, निरंतर नए लक्ष्य निर्मित न करना, पूरे जिंदगी के लक्ष्य को देखना। और तुम हैरान होओगे इस जिंदगी का कोइ लक्ष्य ही नहीं है। और तीसरी बात अतीत से सबक ग्रहण करना, कुछ सीखना फिर–फिर वही भूलें न हों। तब जाकर ये विज्ञान भैरव तंत्र की विधियां या कोई भी अध्यात्म की विधियां कारगर होंगी। अगर ये तीन बातें तुम पूरी नहीं करते, कोई भी टेकनीक काम न आ सकेंगी। अपना निरीक्षण करना, एक प्रसिद्ध शेर आपने सुना होगा–

तुम नहीं, गम नहीं, शराब नहीं, ऐसी तनहाई का जवाब नहीं।
गाहे–गाहे इसे पढ़ा कीजे, दिल से बेहतर कोई किताब नहीं।

अपने दिल की किताब को जरा पढ़ो, बाहर की किताबें तो खूब पढ़ीं, उससे कुछ हासिल नहीं हुआ। अपनी जिंदगी की किताब को पढ़ो और तब तुम पाओगे छोटी–सी विधि मात्र, आकाश को निर्मल आंखों से देखने की विधि और तुम रूपान्तरित हो जाओगे, शांत और आप्तकाम हो जाओगे। विचारना नहीं है केवल देखना है। कोई कल्पना नहीं करनी है।

किन्हीं अतीत की स्मृतियों में नहीं डोलना है। बस आकाश है और तुम हो, बाहर विराट शून्य और भीतर तुम। इस विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, आकाश का कहीं अंत नहीं है,

रहस्यमय उपदेश सुनो–34

जब परम रहस्यमय उपदेश दिया जा रहा हो, उसे श्रवण करो। अविचल, अपलक आंखों से, अविलंब परम मुक्ति को उपलब्ध होओ।

आज हम एक बहुत ही गुह्य विधि की चर्चा करने जा रहे हैं। उसकी भूमिका में पहले यह समझ लें कि जिस व्यक्ति को मृत्यु का बोध उत्पन्न हो गया, जो सचेतन रूप से अपने मृत्यु के प्रति होश से भर गया है, केवल वही सद्गुरु से जुड़ पाता है, शेष लोग पशुओं के समान जीवन जीते हैं। जिन्हें अपनी मृत्यु का ख्याल नहीं है। मनुष्य में और पशु–पक्षियों में एक सबसे बड़ा भेद यही है। किसी पशु–पक्षी को कभी यह ख्याल नहीं आता कि मेरी मृत्यु होगी। वे ऐसे जिए जाते हैं, जैसे सदा–सदा उसे यहीं जीना है। केवल कुछ विरले मनुष्यों को यह ख्याल आता है कि उनकी मृत्यु होगी, वे यहां सदा रहने को नहीं हैं, चार दिन के मेहमान हैं। जफर ने कहा न, दो आरजू में कट गए, दो इंतजार में, चार में से फिर बचे कितने हैं? ऐसे व्यक्ति के भीतर अध्यात्म की प्यास उत्पन्न होती है और तब वह सद्गुरु की खोज में निकलता है। जो लोग यूं ही सद्गुरु के पास मनोरंजन के लिए आते हैं, उनका आना कोई आना नहीं। कुछ लोग सूचनाएं ग्रहण करने के लिए, अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए आते हैं,

उनके आने की कोई भी कीमत नहीं।

जब तक मृत्युबोध न घट जाए और याद रखना मृत्युबोध से मेरा तात्पर्य, मृत्यु से भय नहीं। भय का तो सवाल ही नहीं, क्योंकि भय उससे होता है जो पता नहीं हो, हो कि न हो, जिसका होना संदिग्ध हो। मृत्यु तो बिल्कुल सुनिश्चित है, मृत्यु तो होगी ही होगी। और सारी चीजें, कुछ कहा नहीं जा सकता होंगी कि नहीं होंगी। आज वर्षा होगी कि नहीं होगी, आज तेज धूप निकलेगी कि नहीं, कुछ ठिकाना नहीं। मौसम विभाग कि भविष्यवाणियां भी गलत निकल जाती हैं। आज भूकंप आएगा कि नहीं, कोई नहीं बता सकता। छोटी–छोटी बातें नहीं बताई जा सकतीं। लेकिन एक बात सुनिश्चित है, हर जिंदगी का समापन मौत में होगा। शायद आपको मेडिकल साइंस की इस खोज का ज्ञान हो कि जैसे ही बच्चा उत्पन्न होता है, उसके मष्तिष्क के पांच हजार न्यूरॉनसेल्स प्रतिदिन मरना शुरू हो जाते हैं, पैदा होने के तुरंत बाद से ही। ऐसा मत सोचना कि मौत सत्तर–अस्सी साल बाद किसी दिन आती है।

मृत्यु की घटना तो उसी दिन शुरू हो गई, जिस दिन तुम्हारा जन्म हुआ था। तुम्हारे नर्वसेल्स पांच हजार प्रतिदिन मरने लगे और एक भी नया नर्वसेल तुम्हारे भीतर बनेगा नहीं। शरीर के अन्य सेल्स तो बन जाते हैं, चमड़ी में चोट लग गई घाव हो गया, नई चमड़ी बन जाएगी घाव भर जाएगा। हड्डी टूट गई, कोई बात नहीं महीने–डेढ़ महीने में फिर नई बोनसेल्स बन जाएंगी, हड्डी जुड़ जाएगी। लीवर में बीमारी हो गई कि किडनी में बीमारी हो गई फिर से किडनी या लीवर में नई सेल्स बन जाएगी, रिप्लेसमेंट हो जाएगा, लेकिन मस्तिष्क में जो न्यूरॉन्स हैं, उनका कोई रिप्लेसमेंट नहीं होता। एक बार जो कोशिकाएं (सेल्स) मर गईं, सदा–सदा के लिए मर गईं। कभी दुबारा वैसी कोशिका नहीं बनेगी और रोज पांच हजार कोशिकाएं मरती जाती हैं। सत्तर–अस्सी साल बाद जाकर मस्तिष्क इतना कम हो जाता है, साठ साल की उम्र में वजन का बीस प्रतिशत मस्तिष्क समाप्त हो चुका होता है। हम कहते हैं न साठ साल के व्यक्ति को, सठिया गया, अब इसका दिमाग ठीक से काम नहीं करता, नौकरी से रिटायर कर देते हैं। अब इनके भीतर बुद्धि जैसी कोई चीज नहीं रही, ज्यादा से ज्यादा वे राजनीति के काम में जहां बुद्धि का कोई काम ही नहीं है। अब प्रधानमंत्री बने, राष्ट्रपति बने सो ठीक, कोई बौद्धिक काम इनसे नहीं लिया जा सकता।

अस्सी साल होते–होते, पच्चीस प्रतिशत मस्तिष्क के सेल्स मर चुके होते हैं। अंततः एक दिन ऐसा आता है कि यह मस्तिष्क इस शरीर को चलाने में अक्षम हो जाता है, उस दिन शरीर मर जाता है। तो गौर से देखना, मृत्यु कोई ऐसी घटना नहीं है जो भविष्य में घटेगी, मृत्यु तो क्षण–क्षण घट ही रही है। लेकिन हमें अपनी मौत का ख्याल ही नहीं आता। हम सोचते हैं बड़ी दूर भविष्य में कभी होगी, जब होगी तब देखेंगे। जब होगी का सवाल नहीं है,

अभी हो ही रही है। जब ओशो का जन्म हुआ तो एक ज्योतिषी ने मना कर दिया कि इनकी कुंडली नहीं बनाऊंगा, क्योंकि सात साल की उम्र में मृत्यु का योग है, अगर यह बच्चा सात साल तक बच गया, उसके बाद कुंडली बनाऊंगा। सात साल के बाद जब पिताजी उस ज्योतिषी के पास उसे ढूंढ़ने बनारस गए, पता चला कि उस ज्योतषी की तो मृत्यु हो चुकी। देखते हैं, उस ज्योतिषी को अपनी स्वयं की मृत्यु का जरा भी भान न था। कह रहा था कि सात साल बाद मैं कुंडली बनाऊंगा। उसे यह भी नहीं पता कि सात साल बाद वह भी बचने वाला नहीं। दुनिया में अधिकांश लोग इसी प्रकार से जी रहे हैं, उन्हें अपनी मृत्यु का जरा भी बोध नहीं होता।

सबसे पहले तो इस बात को समझ लेना, अपनी मृत्यु का बोध जिसे आ गया, केवल वही सद्गुरु के पास जा सकेगा, उसका जाना ही सच्चा जाना होगा। हां, जीवन की अन्य क्रियाएं वह करेगा, लेकिन वे बात औपचारिकताएं मात्र रहेंगी। भोजन करेगा, सिर्फ मृत्यु को स्थगित करने के लिए, मकान बनाएगा, सुविधापूर्वक मरने के लिए, धन कमाएगा, ताकि मंहगी चंदन की लकड़ी में चिता जलाई जा सके या अच्छी संगमरमर की मंहगी कब्र बन सके। धन का और कोई उपयोग नहीं है। बड़े-बड़े ताजमहल शहंशाहों ने बनवाए, धनवान थे इसलिए। ऊंचे पद पर भी जाएगा, मरने पर शाही सम्मान मिल सके और तो कोई उपयोग नहीं है पदों का। बाहर के जगत से जो पूरी तरह निराश हो गया, केवल वही भीतर की यात्रा पर निकल सकता है, केवल ऐसे व्यक्ति का ही गुरु से संपर्क हो सकता है। गुरु से मिलने पर शिष्य के मन में जो भाव उपजता है, वैसा।

कहीं देखी है शायद तेरी सूरत इससे पहले भी।
गुजरी है मेरे दिल पे, ये हालत इससे पहले भी।
जाने कितने जलवे देखे, तेरे जलवों से पहले भी।
पर तुझी से बारहा हुई, मुहब्बत इससे पहले भी।

जब सद्गुरु से मिलन होता है तब पता चलता है कि यही है वह व्यक्ति, जिसे हम जन्मों-जन्मों से खोज रहे थे। इसी के प्रेम में हम भटक रहे थे, इसी की तलाश थी। न मालूम कितनी-कितनी यात्रा की इसके लिए। तुझी से बारहा हुई, मोहब्बत इससे पहले भी। गुरु गुरुद्वारा बन जाता है। परमात्मा में प्रवेश का द्वार बन जाता है। संत सहजोबाई ने अपने गुरु चरणदास के प्रति एक पद लिखा है। जिसमें वे कह रही हैं, कि गुरु के सामने तो मैं ईश्वर की भी इज्जत नहीं करती। कहती हैं –

राम तजूं मैं गुरु न बिसारूं, गुरु के सम हरि को न निहारूं।
चरणदास पर तन-मन बारूं, गुरु न तजूं हरि को तज डालूं।

रही कि वे आएंगे। बारह साल बाद अचानक एक दिन सद्‌गुरु रसोईघर के पास से निकले। लिंची को देखकर जोर से हंसे और कहते हैं कि लिंची परमज्ञान को उपलब्ध हो गया। लोगों ने उससे पूछा कि क्या हुआ? उसने कहा कि बस गुरूदेव का हंसना और अचानक मुझे समझ में आ गया कि सारा संसार एक मजाक है, 'लाइफ इज ए कॉस्मिक जोक'। मेरी सारी गंभीरता नष्ट हो गई, मुझे परममुक्ति मिल गई। सिर्फ हंसी, कोई मंत्र भी न दिया, कोई साधना भी न दी। लेकिन इसके पीछे बारह साल की प्रतीक्षा की कहानी है। ये घटनाएं बड़े गोपनीय ढंग से घटती हैं। इन परम घटनाओं का आयोजन नहीं होता। तो शिव आज की जो विधि दे रहे हैं, याद रखना ये अत्यंत गोपनीय, गुह्य, अनायास होने वाली विधि है। कहने को अनायास लेकिन इसके पीछे एक लंबी साधना, एक प्रतीक्षा का काल होता है। गुरु शिष्य के बीच में वह अद्भुत घटना घटती है।

भारत के ऋषियों ने इस विधि का खूब-खूब उपयोग किया है। गुरु जो सिखाता है शब्दों में, केवल वही नहीं, एक और गुह्य, गोपनीय ज्ञान है, जो गुरु देता है। कई बार लोग मुझसे पूछते हैं कि जब तक हम संन्यास दीक्षा न लें, ओशो की माला न पहने, नाम परिवर्तन के लिए राजी न हों, तब तक सुरति समाधि में प्रवेश क्यों नहीं देते? उसके पीछे कारण है। ये जो विधियां मैं सिखा रहा हूं आपको, ये आप पढ़ लेंगे, देख लेंगे, लेकिन इससे कुछ घटित न हो सकेगा, जब तक कि आप गुरु से दीक्षा न लें। इसलिए जिसके भीतर शिष्यत्व का भाव नहीं आया, उसे हम सुरति समाधि में प्रवेश नहीं देते। हां, ध्यान समाधि में तुम आओ छः दिनों के लिए, तुम जैसे हो वैसे ही स्वीकार हो, लेकिन छः दिनों के बाद सातवें दिन से जो साधना होगी, उसमें केवल उन्हीं को स्वीकार किया जाएगा जो शिष्य बन गए हैं। क्योंकि अब वह असली बात उन्हीं को दी जा सकती है। तो उसकी धीरे-धीरे तैयारी करो। केवल मेरे प्रवचन सुनने से, विधियों को समझ लेने से तुम्हारे भीतर प्यास पैदा होगी, पानी नहीं मिलेगा। पानी तो गोपनीय ढंग से दिया जाएगा।

बहुत-बहुत धन्यवाद!

विस्मय–विमुग्ध हो जाओ–35

किसी गहरे कुएं के किनारे खड़े होकर उसकी गहराइयों में निरंतर देखते रहो। जब तक विस्मय–विमुग्ध न हो जाओ।

संभल–संभल के चलो और भी चलना होगा,
कदम–कदम भी हमें फूंक के रखना होगा।
सरल नहीं है चमन से चुराना फूलों को,
कभी–कभी तो हमें खार से चुभना होगा।
कठिन है राह पर दूर नहीं मंजिल ज्यादा,
बस यही सोच बड़ी दूर तक चलना होगा।
खरी हो जाएगी जिंदगी कुंदन की तरह,
चैन के साथ हमें आग में तपना होगा।

आओ मिलजुल के दुनिया को संवारें यारों,
बिगड़े हालातों को हमको ही बदलना होगा।
संभल–संभल के चलो और भी चलना होगा।
कदम –कदम भी हमें फूंक के रखना होगा।

हालातें बिगड़ी हुई हैं और हमीं को संवारना है। हालतें दो प्रकार की हैं– एक बाहर के जगत की और एक हमारी भीतरी। धर्म और राजनीति का भेद याद रखना। राजनीति का अर्थ है, बाहर की परिस्थितियों को बदलने की कोशिश और धर्म का अर्थ है, आत्मरूपान्तरण का उपाय। परिस्थिति को नहीं, अपनी मनःस्थिति को बदलने की कोशिश करो। मन बहुत बिगड़ी हालत में है, इसे संवारना होगा। अमन की, चैनोअमन की संवरी हुई स्थिति को पाना होगा। तो याद रखना एक दुनिया बाहर है, एक दुनिया भीतर भी है। केवल बाहर–ही–बाहर में न उलझे रहना। यह जरूरी है किंतु पर्याप्त नहीं, 'इट इज नेसेसरी बट नॉट एनफ'। तुमने बाहर सारी सुख–सुविधा जुटा ली और भीतर शांति और आनंद न पाया। तो तुम्हारी सारी सुख–सुविधाएं किसी काम की न होंगी। शरीर स्वस्थ्य हो गया और मन तुम्हारा रुग्ण है। यह शारीरिक स्वास्थ्य भी सिर्फ दुख की एक लंबी कहानी होगी। तो केवल बाहर में मत उलझे रहना। दृश्य और अदृश्य को जोड़ने वाला सेतु है मन। शरीर और आत्मा के बीच एक पुल की तरह है। ऐसा समझो एक नदी का किनारा शरीर है, नदी का दूसरा किनारा आत्मा है। इन दोनों को जोड़ने वाला जो सेतु है मन, या चित्त। निश्चित रूप से पुल तो तनाव में होगा ही। पुल को तो तने रहना ही होगा। लेकिन अगर हम उस पार पहुंच जाएं तो हमने पुल का उपयोग कर लिया।

भगवान शिव जो ये विधियां दे रहे हैं, ये पदार्थ से परमात्मा की ओर, देह से आत्मा की ओर, परिधि से केन्द्र की ओर जाने के उपाय हैं। मृणमय और चिन्मय के बीच में हमें गति करनी है। माटी के दीये हैं हम, चेतना की ज्योति को जानना है। ये छोटी–छोटी विधियां उसमें बड़ी सहयोगी हो सकती हैं। भारत में हमेशा से ऋषियों ने तन–मन के बाहर अतिक्रमण करके तन–मन के पार चेतन को जानने के लिए कहा। पश्चिम के मनोवैज्ञानिक अभी इस बात को नहीं पकड़ पाए हैं। उनकी कोशिश है कि मन को किसी प्रकार ऐड्जस्ट कर दिया जाए, समाज के साथ समायोजित कर दिया जाए बस। लेकिन वे एक बात भूल जाते हैं कि समाज स्वयं ही रुग्ण है, उसके साथ ऐड्जस्ट होकर हम ज्यादा से ज्यादा नॉर्मली एब्नॉर्मल हो जाएंगे, सामान्य रूप से विक्षिप्त, बस। और उसका कोई अर्थ नहीं है, वह कोई परमदशा नहीं है। उससे कोई आनंद नहीं होने वाला। उससे हम बियॉण्ड माइंड न जा सकेंगे। विज्ञान भैरव तंत्र की ये विधियां मन के पार जाने की विधियां हैं। इसलिए पश्चिम का प्रतिभाशाली से

प्रतिभाशाली व्यक्ति भी असामान्य मन वाला है। पिछली सदी के इतिहास को देखें, पश्चिम के अति प्रतिभाशाली लोग भी विक्षिप्त हुए। जिंदगी में एक बार पागलखाने जरूर हो आए।

भारत का प्रतिभाशाली व्यक्ति कभी विक्षिप्त नहीं हुआ, बुद्धत्व को प्राप्त हुआ। बड़ा फर्क है। वे केवल मन को समायोजित करने की कोशिश कर रहे हैं। हमारे देश में मन के पार जाने की कोशिश चल रही है। मन स्वयं ही एक बीमारी है, मन एक तनाव है, बेचैनी है, चिंता है, संताप है, इसके पार उठना होगा। शरीर मरणधर्मा है, वह एक दिन मर जाएगा, मिट जाएगा। स्वास्थ्य केवल सापेक्ष हो सकता है। कोई व्यक्ति पूर्णरूप से स्वस्थ नहीं हो सकता, क्योंकि अंततः शरीर को मिट ही जाना है। भारत में 'स्वस्थ' शब्द का एक अलग अर्थ है, 'स्वयं में स्थित होना' स्वस्थ होना है। आत्मस्थ व्यक्ति को, समाधिस्थ व्यक्ति को हम स्वस्थ कहते हैं। उसका शारीरिक स्वास्थ्य से कोई लेना देना नहीं है। भारत में स्वास्थ्य अध्यात्म का पर्यायवाची है। हां, संसार में हमारा मन क्षणिक रूप से कभी-कभार ठहर जाता है। खतरे के किन्हीं क्षणों में जहां होश की बहुत जरूरत पड़ती है या विश्राम के क्षणों में कभी बहुत थक जाने के बाद मन रुक जाता है, शक्ति ही नहीं बची विचारों को चलाने की। कभी प्रेम के गहन अनुभव में क्षणिक रूप से मन ठहर जाता है। ऐसे में अपने केन्द्र का स्पर्श हो जाता है, आनंद की अनुभूति होती है। लेकिन विधिवत रूप से इस आनंद को कैसे पाएं? क्षणिक रूप से तो मन के पार हम कभी-कभी चले जाते हैं।

आप हिल स्टेशन पर गए, सुबह सुंदर सूर्योदय देख रहे हैं, रंग-बिरंगे बादल, पक्षियों की चहचहाहट, सामने हरियाली से भरी हुई वादी, क्षण भर के लिए मन ठिठक गया, लेकिन यह कोई विधि तो न हुई, यह तो सांयोगिक हुआ। भगवान शिव ने जीवन के इन छोटे-छोटे अनुभवों से ही तंत्र-सूत्र की इन विधियों की ईजाद की। बड़ी अद्भुत विधि है आज की। कहते हैं कि किसी गहरे कुएं के किनारे खड़े होकर उसकी गहराइयों में तब तक झांको जब तक कि विस्मय विमुग्ध न हो जाओ। बड़ी अद्भुत और सरल है यह विधि। याद रखना, भगवान शिव ने आकाश की तरफ देखने की भी विधि बताई। आज कुएं की गहराई में झांकने की विधि दे रहे हैं, ठीक विपरीत। हमारे मन की भी बहुत गहराइयां हैं, अब तो पश्चिम के मनोवैज्ञानिक भी राजी हैं कि हम जिसे मन कहते हैं, वह केवल चेतन मन है, कॉन्शस माइंड। उसके नीचे एक इंडीविजुअल अनकॉन्शस माइंड है, व्यक्तिगत अचेतन मन है। उसके और गहराई में सामूहिक अचेतन, कलेक्टिव अनकॉन्शस माइंड और उससे भी अधिक गहराई में ब्रम्ह अचेतन, कॉज़्मिक अनकॉन्शस माइंड है। चेतन के ऊपर ऊंचाइयां भी हैं, चेतन के ऊपर अतिचेतन मन है, सुपर कॉन्शसनेस। उसके ऊपर है सामूहिक चेतन, कलेक्टिव कॉन्शसनेस, और उससे भी ऊपर है कॉज़्मिक कॉन्शसनेस, ब्रम्ह चेतन जहां भगवत्ता का अनुभव होता है। ऊपर जाना सीधा कठिन है, गहराई के माध्यम से ऊपर जाना आसान है। जैसे किसी वृक्ष के फूलों को

छूना हो तो उसकी जड़ों को छुओ।

नीत्से ने कहा है– जिस वृक्ष को आकाश छूना हो, उसे अपनी जड़ें पाताल तक पहुंचा

विषय से विचार अलग करो–36

किसी विषय को देखो फिर धीरे–धीरे उससे अपनी दृष्टि हटा लो और फिर धीरे–धीरे उससे अपने विचार अलग कर लो। तब!

परमात्मा के बिना मनुष्य कैसे जीता है। एक आश्चर्य! किसी शायर ने कहा है–

ये कैसी जिंदगी गुजरी तेरे बगैर,
जैसे कोई गुनाह किए जा रहा था मैं।

लेकिन इससे भी बड़ा आश्चर्य तब होता है जब परमात्मा से मिलन होता है। आश्चर्य यह होता है कि जो इतने नजदीक था उससे हम कैसे चूकते गए? ये कैसी जिंदगी गुजरी तेरे बगैर, जैसे कोई गुनाह किए जा रहा था मैं।

कहां थे आप जमाने के बाद आए हैं,
मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं।
जहान भर में जिन्हें खोजा दर–ब–दर ढूंढ़ा,

जब हम थके रुके हारे तो आज आए हैं।
हमारे पास वो आए तो इस तरह आए,
कि जैसे हम से हमीं को मिलाने आए हैं।
तमाम रात कटी उनकी इंतजार में,
सुबह को होश में आने के बाद आए हैं।
मिले तो ऐसे कि अब है जुदाई नामुमकिन,
मेरे ही दिल में समाए थे याद आए हैं।

कहां थे आप जमाने के बाद आए हैं....जन्मों–जन्मों के बाद प्रभु से मिलन होता है। बड़ी तलाश और खोजबीन के बाद, लेकिन याद रखना जब खोजबीन बंद हो जाती है तब। मेरी तलाश भी जाने के बाद आए हैं। यह खोजबीन, बेचैनी पैदा करती है। और परमात्मा का अर्थ है, परम चैन की अवस्था। वह तलाश, नजरों को यहां–वहां भटकाती है, प्रभु से मिलन का अर्थ है स्वयं में स्थित हो जाना। परमात्मा शब्द 'परम' और 'आत्मा' दो शब्दों से मिलकर बना है। दि अल्टीमेट सेल्फ। स्वयं के होने की परम अवस्था ही, परम आत्मा है। बड़ा आश्चर्य होता है कि जो हमारे दिल में ही समाया था, जो हमारी रूह में मौजूद था, उसी से हम चूकते रहे। आश्चर्य कि हम स्वयं से चूकते रहे। मिले तो ऐसे कि अब है जुदाई नामुमकिन, मेरे ही दिल में समाए थे याद आए हैं। सभी संत यही कहते हैं कि परमात्मा से मिलन नहीं होता, सिर्फ याद आती है। जिस चीज को हम भूल गए थे उसका स्मरण आ जाता है। बस एक पुनर्स्मरण है और भूले कैसे थे हम, इसको भी समझ लेना, ताकि इसकी मेकैनिज्म समझ में आ जाए। भूले हम इसलिए थे कि हमारी सारी इंद्रियां बाहर की ओर खुलती हैं और बाहर जो विषय हमें दिखाई देते हैं, उनमें हमें रस उत्पन्न हो जाता है, अपने आवश्यकताओं के कारण।

झेन फकीर बोकोजु ने कहा है कि संसार और निर्वाण बराबर दूरी पर हैं, इक्वल डिस्टेंस पर हैं। ऐसा समझें कि हम ठीक मध्य में हैं, इंद्रियों के तल पर। इंद्रियों से बाहर है संसार, इंद्रियों के भीतर है निर्वाण। बराबर दूरी पर अगर हम बहिर्यात्रा करें तो हम जगत के विषयों पर खो जाएंगे। अगर हम भीतर की यात्रा करें तो हम स्वयं के परमरूप परमात्मा को पा लेंगे, मोक्ष में प्रवेश हो जाएगा। मोक्ष और संसार बिल्कुल बराबर दूरी पर हैं केवल हमारी दिशा क्या है, उस पर निर्भर है। इस दिशा को पलटना है। इसके कारण को समझने को हम बहिर्गामी क्यों हुए? एक छोटा बच्चा जन्मता है, आंख खुलती है उसकी, बाहर देखता है, बाहर के दृश्य दिखाई देते हैं, स्वयं का होना तो दिखाई नहीं देता, स्वयं का होना तो आंखों के पीछे

है, इंद्रियों के भीतर है। भूख लगती है उसे, तब माँ की आवश्यकता पड़ती है। जरूरतें हैं, श्वास लेना है, हवा बाहर है, वस्त्र गीले हो गए, रोता है कि माँ आकर उसकी मदद करे, कपड़े बदले।

जीवन की आवश्कताएं बाहर हैं। प्यास लगी है पानी चाहिए, पानी बाहर है। धीरे-धीरे हमारी चेतना बहिर्मुखी होने लगती हैं। नौ महीने, जब तक माँ के पेट में, गर्भ में था बच्चा, अंतर्मुखी था, भीतर अनाहत नाद में डूबा था, दिव्य आलोक में डूबा हुआ था। बाहर आते ही आवश्यकताएं शुरू हो गई। इस कारण उसे बहिर्मुखी होना पड़ता है। माँ यह न सोचे कि बच्चे का माँ से प्रेम है। माँ उसको भोजन सप्लाई करने वाली है, माँ उसे दूध पिला रही है और भूख बच्चे की आवश्यकता है। इस आवश्यकता की वजह से माँ के प्रति उसका लगाव और मोह उत्पन्न हो गया और इसलिए आधुनिक युग में जहां माताएं बोतल से दूध पिलाने लगीं हैं, अब उम्मीद न करें कि बच्चे को उनसे उतना ही प्रेम होगा, जैसा पहले हुआ करता था। प्रेम का वह कारण ही न रहा।

पश्चिम के देशों में बच्चों के खाने-पीने, रहने, शिक्षा का खर्च सरकार देने को तैयार है, लोग बच्चा पैदा करने को तैयार नहीं हैं। सरकार पूरा खर्च दे रही है, तब भी करने को तैयार नहीं हैं। निश्चित रूप से ये बच्चे माता-पिता के धन-पैसे पर आश्रित नहीं हैं। अब ये माता-पिता उम्मीद न करें कि इन बच्चों को वैसा ही लगाव होगा, जैसा पुराने जमाने में हुआ करता था। अब इन बच्चों की आवश्यकता माता-पिता नहीं हैं, इनकी सोशल सिक्योरिटी है। सरकार ने इनका पूरा इंतजाम किया हुआ है। ये माता-पिता पर किसी भी भांति निर्भर नहीं हैं। तो याद रखना, इंद्रियां प्रवेश द्वार भी हैं और निकास द्वार भी। अभी आप ओशो मंदिर में जिस द्वार से आए, वह प्रवेश द्वार था, एंट्रेंस। जब आप बाहर जाएंगे मंदिर से वही द्वार एक्ज़िट बन जाएगा, निकास का द्वार बन जाएगा। द्वार वही है, आपकी दिशा बदल जाएगी। ठीक इसी प्रकार जब संसार की बाहरी जरूरतों के कारण, शरीर की जरूरतों के कारण हमें बहिर्मुखी होना पड़ता है तो यही इंद्रियां द्वार बन जाती हैं, जगत में ले जाने का। फिर हम भीतर कैसे लौटें? ऐसी कौन सी जरूरत है जो हमें भीतर लौटाएगी।

सामान्यतः ऐसी कोई जरूरत दिखाई नहीं देती कि हम भीतर लौटें। हां, एक जरूरत है। जिस व्यक्ति को मृत्युबोध हो गया, उसके भीतर अंतर्यात्रा की जरूरत पैदा होती है। जिसे ख्याल में आ गया कि एक दिन मैं मर जाऊंगा और बाहर की इन सारी जरूरतों को पूरा करने का कुछ विशेष अर्थ नहीं है, हां टेम्परी उपयोग है, स्थाई रूप से इसका कोई उपयोग नहीं है। जब अपनी मौत का ख्याल आता है तब व्यक्ति भीतर मुड़ता है, क्योंकि एक नई जरूरत पैदा हो गई। क्या कोई अमृत तत्व है जो कभी नष्ट न होगा? वहां से अंतर्यात्रा की

शुरुआत होती है। इस मेकैनिज्म को खूब अच्छे से समझ लेना। बहुत लोग इम्मैच्योरिटी की अवस्था में, अपरिपक्व मनःस्थिति में ध्यान और समाधि में डूबने की कोशिश करते हैं और

भाव से भरें। और अंत में भगवान शिव को नमन, जिन्होंने ये अद्भुत विधियां दी और प्यारे सद्गुरु ओशो को नमन, जिनकी कृपा से ये विधियां हमें समझ आ सकीं।

ओम नमः शिवाय! ओशो शरणं गच्छामि!!

अक्षरों की कल्पना करो–37

हे देवी! बोध के मधु–भरे दृष्टिपथ में संस्कृत वर्णमाला के अक्षरों की कल्पना करो। पहले अक्षरों की भांति, फिर सूक्ष्मतर ध्वनि की भांति और फिर सूक्ष्मतम भाव की भांति और तब उन्हें अलग छोड़कर मुक्त हो जाओ।

जीवन की हर घड़ी निराली, फिर क्यों फिरता खाली खाली?
तेरे लिए ही रस की प्याली, ओशो ने कब से है संभाली!
आओ, आज ओशो की प्याली से एक घूंट और पिएं––
अंधकार में बिना सहारा, क्यों फिरता तू मारा मारा?
गुरु का हाथ पकड़ ले बंदे फिर देखना सुबह की लाली।
जिसने दिया ये जीवन प्यारा, तू है उसकी आंख का तारा,
क्यों घबराता, छोड़ दे उसके, चरणों में अब चिंता सारी।

प्रभु ने सब पर प्रेम लुटाया, गुरु–मेघ बन जल बरसाया,
शिष्य का रोम–रोम हर्षाया, जिसने भी झोली फैलाई।
पाना है यदि परम आनंद, त्यागना होगा मन का द्वन्द्व,
सुनो अंतस का छंद अखंड, जिंदगी तब होगी मतवाली।
जीवन की हर घड़ी निराली फिर क्यों फिरता खाली–खाली।
तेरे लिए ही रस की प्याली, ओशो ने है कब से संभाली।

जब तक हमारी जिंदगी एक छंद न बन जाए, एक संगीत न बन जाए, तब तक शोरगुल ही रहेगी, एक उपद्रव ही रहेगी। अराजक स्वर रहेंगे, अव्यवस्थित, बेचैनी, चिंता और परेशानी रहेगी।

पाना है यदि परम आनंद,
त्यागना होगा मन का द्वंद,
सुनो अंतस का छंद अखण्ड।

एक अभिछंद स्वर गूंज रहा है भीतर, घूम रहा है ओंकार का। जब वह सुनाई पड़ने लगे तो समाधिस्थ होता है व्यक्ति।

सुनो अंतस का छंद अखण्ड, जिंदगी तब होगी मतवाली। उसी रस को पीकर कबीर मतवाले हो जाते हैं, कहते हैं 'पीवत रामरस लगी खुमारी'। पश्चिम के एक बहुत बड़े दार्शनिक ने अपनी आत्मकथा का शीर्षक रखा है, 'वर्ड्स–ज्यांपाल सात्र की आत्मकथा', शब्दों का ढेर। सामान्यतः हमारी जिंदगी बस शब्दों का ढेर है, आवाजों का ढेर। उसमें कोई संगत नहीं है, कोई संगीत नहीं है। याद रखना संत हमारे इस मन के खिलाफ नहीं हैं। जो भी शब्दों का ढेर है, विचारों का संग्रह है, वह उपयोगी है किन्तु उससे तादात्म्य गलत है, वे तादात्म्य के खिलाफ हैं। याद रखना इस बात को, देह और मन के खिलाफ नहीं है अध्यात्म, किन्तु देह और मन से तादात्म्य अर्थात् आइडेंटिफिकेशन के खिलाफ है। मन का एक अस्त्र की तरह उपयोग हुआ है।

आदमी बड़ा कमजोर था अन्य जानवरों की तुलना में। उसने अपने मन के द्वारा अस्त्र–शस्त्र निर्मित किए। दुनिया की सारी सफलताएं निर्मित किया, धनोपार्जन किया,

बीमारियों से लड़ा, प्राकृतिक विपदाओं से लड़ा, अन्य मनुष्यों से, पशुओं से वह जीता, विज्ञान का विकास किया, गणित का, बुद्धि का विकास किया, सारी सभ्यता और संस्कृति मन के आधार पर ही खड़ी है। फिर इसी मन ने शरीर के ऊपर भी मालकियत जमाने की कोशिश की। फिर इसने धार्मिक क्रियाकाण्ड खोजे, शरीर से लड़ना शुरू किया। संघर्ष, तपस्या, व्रत, उपवास, अपने शरीर को कष्ट देना, ये सब भी मन ने शुरू कर दिया। धीरे–धीरे मन मालिक बन गया। न केवल शरीर, बल्कि चेतना भी उसकी गुलाम बन गई। मन शरीर का एक छोटा सा हिस्सा है। अगर वहो पूरे शरीर पर कब्जा जमाने की कोशिश करे तो यह वैसा ही अन्याय हुआ, जैसे किसी पेड़ की एक छोटी शाखा पूरे वृक्ष का मालिक बनने की कोशिश करने लगे। फिर तो बड़ी मुश्किल खड़ी हो जाएगी, वही मुश्किल खड़ी हो गई है। मन खूब अहंकारग्रस्त हो गया है। इतनी सफलताएं उसे मिलीं। अहंकार और मन पर्यायवाची हो गए हैं दोनो शब्द। अहंकार यानि मन, अहंकार यानि विचार। और ओंकार यानि निर्विचार में सुनी गई ध्वनि। ये दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं। जब तक ये विचारों का हल्ला–गुल्ला चल रहा है, ओंकार की धुन सुनाई न पड़ेगी, समाधि न लगेगी, प्रभु से मिलन न होगा।

आज 37वीं विधि में भगवान शिव कहते हैं, हे देवी! बोध के मधु भरे दृष्टिपथ में संस्कृत वर्णमाला के अक्षरों की कल्पना करो। पहले अक्षरों की भांति, फिर सूक्ष्मतर ध्वनि की भांति और फिर सूक्ष्मतम भाव की भांति और तब भाव को भी छोड़कर उससे मुक्त हो जाओ। ओंकार की तरफ जाने का इशारा कर रहे हैं। अंत में भाव भी छोड़ना होगा। महर्षि योगी सिखाते हैं भावातीत ध्यान लेकिन मुश्किल यह है कि वे उन लोगों को सिखा रहे हैं जो भाव में हैं ही नहीं। वे भाव को छोड़ेंगे कैसे? तुम्हारे जेब में अगर सौ रुपए हैं तो तुम सौ रुपए छोड़ सकते हो। अगर तुम्हारे पास सौ रुपए हैं ही नहीं तो तुम छोड़ोगे कैसे? भावातीत केवल वही व्यक्ति हो सकता है जो भावनाओं की गहराईयों में जीता है। विचारों के पार वही जा सकता है, जिसने विचारों के उत्कर्ष को छुआ है, जिसने चिंतन–मनन की गहराई को जाना है। हर आदमी विचारातीत नहीं हो सकता, भावातीत नहीं हो सकता। भगवान शिव जो विधि दे रहे हैं वह बड़ी अद्भुत है।

इसको समझाते हुए 'दि बुक ऑफ सिक्रेट्स' के 25वें प्रवचन में ओशो कहते हैं, अ, ब, स आदि अक्षरों की कल्पना को अपने भीतर करो, बंद आंखों से उन्हें देखो, तब उनके लिखित रूप से हटकर, उनके सुने हुए स्वर पर ध्यान दो। तब तुम और गहराई में पहुंच जाओगे, सतह पीछे छूट जाएगी। गहराई में डूबो, अब देखो की इस विशेष ध्वनि से क्या भाव पैदा होता है। ऐसी विधियों के कारण ही भारत अनेक चीजों का अविष्कार कर सका, जो भावविशेष से संबंधित है। इस विज्ञान के कारण ही मंत्र का विकास हुआ। एक खास ध्वनि, एक खास भाव के साथ जुड़ी है, इससे अन्यथा नहीं हो सकता। यदि तुम अपने भीतर वह

ध्वनि पैदा करो, तो उससे एक खास भाव तुम्हारे भीतर पैदा होता है। तुम एक मंत्र के द्वारा उससे संबंधित भाव पैदा कर सकते हो। मंत्र से वह वातावरण पैदा होता है, जिसमें एक खास

ध्वनि के केंद्र में नहाओ–38

ध्वनि के केंद्र में स्नान करो, मानो जलप्रपात की अखंड ध्वनि में स्नान कर रहे हो। या कानों में अंगुली डालकर नादों के नाद, अनाहत को सुनो।

कितने सुहाने ये दिन आ गए हैं,
पतझड़ के जाने के दिन आ गए हैं।
निकलने लगीं सूखी डालों पे कलियां,
ऋतुराज छाने के दिन आ गए हैं।
बगिया में फूलों ने अंगड़ाइयां लीं,
भौरों के गाने के दिन आ गए हैं।
लंबा चला था उदासी का आलम,
अब हंसने हंसाने के दिन आ गए हैं।

बहुत लड़ चुकी आंधी से अपनी नैया,
किनारे लगाने के दिन आ गए हैं।
कितने सुहाने ये दिन आ रहे हैं,
पतझड़ के जाने के दिन आ रहे हैं।

भगवान शिव के साथ हम एक अद्भुत यात्रा पर चल रहे हैं। वह स्वर्णिम दिन निकट आता जा रहा है, जब हम अपने प्राणों के केन्द्र, परमात्मा को जान सकेंगे। आज की विधि में वे कहते हैं पार्वती से, ध्वनि के केन्द्र में स्नान करो, मानो जलप्रपात की अखंड ध्वनि में स्नान कर रहे हो या कानों में अंगुली डालकर नादों के नाद, अनाहत नाद को सुनो। 38वीं विधि में सच पूछो तो दो विधियां सम्मिलित हैं। दोनों बिल्कुल भिन्न-भिन्न ढंग से काम करती हैं। इसमें पहली विधि को समझाते हुए ओशो कहते हैं, ध्वनि के केन्द्र में स्नान करो। अगर तुम इस विधि का प्रयोग कर रहे हो, तुम जहां भी हो, वहीं आंख बंद कर लो और भाव करो कि सारा ब्रम्हांड ध्वनियों से भरा है, भाव करो कि हर एक ध्वनि तुम्हारी ओर बही चली आ रही है। तुम सबके केन्द्र हो। यह भाव कि मैं जगत का केन्द्र हूं तुम्हें अद्भुत गहरी शांति से भर देगा, सारा ब्रम्हाण्ड परिधि बन जाएगा और तुम उसके केन्द्र बन जाओगे और हर ध्वनि तुम्हारी तरफ बही चली आ रही है।

अपने को केन्द्र समझने पर शिव का जोर क्यों? क्योंकि केन्द्र में कोई ध्वनि नहीं है, केन्द्र स्वयं ध्वनिशून्य है। यही कारण है कि तुम्हें ध्वनियां सुनाई पड़ती हैं अन्यथा वे सुनाई भी नहीं पड़ती हैं, ध्वनि स्वयं ध्वनि को नहीं सुन सकती। अपने केन्द्र पर, ध्वनिशून्य होने के कारण ही, ध्वनि तुम्हें सुनाई पड़ती हैं। केन्द्र तो बिल्कुल मौन है, शांत है इसलिए तुम ध्वनि को अपनी ओर आते, अपनी में प्रवेश करते, अपने को घेरते हुए महसूस कर सकते हो। अगर तुम वह जगह खोज लो कि वह केन्द्र कहां है, जहां सारी ध्वनियां बहकर आ रही हैं तो अचानक सारी आवाजें विलीन हो जाएंगी और तुम निर्ध्वनि में, साउंडलेसनेस में प्रवेश कर जाओगे। अगर तुम उस केन्द्र को महसूस कर सको जहां सारी ध्वनियां सुनी जाती हैं तो अचानक चेतना मुड़ जाती है। एक क्षण पहले तुम ध्वनियों के संसार में थे और अगले ही क्षण तुम्हारी चेतना निर्ध्वनि में, शून्यता में मुड़ जाती है। तुम उस मौन को सुन लोगे जो जीवन का केन्द्र है।

इस विधि को बीच बाजार में भी प्रयोग किया जा सकता है। कोई जरूरी नहीं है कि जलप्रपात की ही आवाज, कोई भी आवाज काम करेगी। तुम घर में बैठे हो, किचन से बर्तनों की आवाज आ रही है, बच्चे खेल रहे हैं, सड़क पर हॉर्न बज रहे हैं, रेडियो, टेलीविजन की आवाज आ रही है, तुम भाव करो कि सारी ध्वनियां तुम्हारी ओर आ रही हैं और तुम पाओगे

कि नइया किनारे लगने लगी। बहुत लड़ चुकी आंधी से अपनी नइया, किनारे लगाने के दिन आ रहे हैं। वह किनारा तुमसे कहीं बाहर नहीं, तुम्हारे भीतर है।

श्रवण की कला सीखो, वह कठिन से कठिन कामों में से एक है। हम तो बाहर की जगत की आवाजें भी ठीक से नहीं सुन पाते, भीतर परमात्मा की सूक्ष्म आवाज को कैसे सुन पाएंगे। बाहर की आवाजों के प्रति होशपूर्वक होना शुरू करो। शुरू–शुरू में यह घबड़ाने वाला लगेगा, इतनी आवाजें और फिर तुम्हारे मन में विचारों का शोरगुल, वह सब सुनाई पड़ेगा। लेकिन अगर तुम गौरपूर्वक सुनते रहे, सुनते रहे, एक दिन तुम भी कहोगे, निकलने लगी सूखी डालों पे कलियां, ऋतुराज छाने के दिन आ रहे हैं। आएंगे बसंत के दिन तुम्हारे भीतर, परमात्मा तुम्हारा इंतजार कर रहा है। सिर्फ तुम वहां मौजूद नहीं हो तुम बाहर के जगत में, बाहर के ध्वनियों में खो गए हो। थोड़ा अपने भीतर चलो। श्रवण की कला, बड़ी से बड़ी धार्मिक कला है। बोलो कम सुनो ज्यादा। मैंने सुना है, एक मरीज किसी बड़ी अस्पताल के डॉक्टर के पास अपना इलाज करवा रहा था। उसने पूछा कि डॉक्टर साहब सच–सच बताइए, मैं ठीक तो हो जाऊंगा न। क्योंकि मैंने सुना है आजकल बड़े–बड़े अस्पतालों के, बड़े–बड़े डाक्टर ठीक से मरीजों को देखते ही नहीं, निमोनिया का इलाज करते हैं और पोस्टमार्टम के बाद पता चलता है कि मरीज टी.बी. की बीमारी से मरा। डाक्टर गुस्से में बोला, क्या बकवास करते हैं आप? मैं जब भी किसी के निमोनिया का इलाज करता हूं, वह सुनिश्चितरूप से निमोनिया से ही मरता है। मरीज क्या कह रहा है, और डॉक्टर क्या सुन रहा है। सब अपनी–अपनी दुनिया में खोए हुए हैं।

मुल्ला नसरुद्दीन को अपने काम में कोई व्यवधान पसंद न था। दार्शनिक किस्म का आदमी, विचारों में खोया रहता, किताबें पढ़ता रहता, घर में जरा भी खटर–पटर, बच्चे आवाज न कर सकें, पत्नी आवाज न कर सके, सबको डरा–धमका कर रखा था कि मेरे विचार में बाधा नहीं पड़नी चाहिए। एक रात उसकी पत्नी सिनेमा का नाइट शो देखकर रात को डेढ़ बजे वापस लौटी, जब वह अपने कमरे में चुपचाप गई तो उसने देखा की अरे! सारी पेटियां, आलमारियां खुली हुई हैं, सारा सामान नदारद है। वह जोर से चिल्लाई कि हाय मैं लुट गई, चोर सब उठा कर ले गए, घर में कुछ भी नहीं बचा। उसकी जोर की चीख–पुकार सुन कर मुल्ला के विचार टूटे, उसने कहा कि हद हो गई, बदतमीज औरत, जब वह चोर तक मेरा इतना ख्याल रख सके कि चुपचाप सामान उठा कर ले गए, तू इतना हंगामा क्यों मचा रही है? मेरे सोचने–विचारने में व्यवधान पैदा कर रही है। शांति से मुझे विचारने न देगी। विचार भी एक प्रकार की अशांति ही है। बाहर का शोर, भीतर का शोर, इन दोनों के प्रति सजग होना। सजगता कुंजी है, इस शोर से पार जाने की।

बाहर की आवाजों को भी बड़े होशपूर्वक सुनना , तब उसके साक्षी हो जाओगे। फिर भीतर की आवाजों को सुनना, तुम्हारे मन में बहुत उपद्रव चल रहा है। उसको भी सुनते रहना,

धन्यवाद!

माँ ओशो प्रिया– सभी साधक साधिकाओं को नमस्कार! आज की विधि बिल्कुल सरल है। छोटा बच्चा भी कर सकता है। आराम से शिथिल होकर सुखासन में बैठ जाएं। भाव करें कि जलप्रपात की अखण्ड ध्वनि में आप स्नान कर रहे हैं। कानों में अंगुली डालकर, नादों के नाद अनाहत नाद को सुनें। अब शवासन में लेट जाएं। भाषा समाज से जोड़ती है, मौन में स्वयं से मुलाकात होती है। यही तुम हो, तत्वमसि श्वेतकेतु।

.....आहिस्ता–आहिस्ता ध्यान से लौटें।

हरि ओम् तत्सत्!